साहित्य अमृत
मासिक

वर्ष-२३ अंक-१२ ❖ पृष्ठ ८८ | आषाढ़-श्रावण, संवत्-२०७५ | जुलाई २०१८

संस्थापक संपादक
स्व. पं. विद्यानिवास मिश्र

पूर्व संपादक
स्व. डॉ. लक्ष्मीमल्ल सिंघवी

संपादक
त्रिलोकी नाथ चतुर्वेदी

प्रबंध संपादक
श्यामसुंदर

संयुक्त संपादक
डॉ. हेमंत कुकरेती

कार्यालय
४/१९, आसफ अली रोड,
नई दिल्ली-११०००२
फोन : २३२८९७७७ • फैक्स : २३२५३२३३
इ-मेल : sahityaamrit@gmail.com

शुल्क
एक अंक —₹ ३०
वार्षिक (व्यक्तियों के लिए)—₹ ३००
वार्षिक (संस्थाओं/पुस्तकालयों के लिए)—₹ ४००
विदेश में
एक अंक—चार यू.एस. डॉलर (US$4)
वार्षिक—पैंतालीस यू.एस. डॉलर (US$45)

प्रकाशक, मुद्रक तथा स्वत्वाधिकारी श्यामसुंदर द्वारा
४/१९, आसफ अली रोड, नई दिल्ली-२
से प्रकाशित एवं ग्राफिक वर्ल्ड, १६८६,
कूचा दखनीराय, दरियागंज, नई दिल्ली-२ द्वारा मुद्रित।

साहित्य अमृत में प्रकाशित लेखों में व्यक्त विचार एवं दृष्टिकोण संबंधित लेखक के हैं। संपादक अथवा प्रकाशक का उनसे सहमत होना आवश्यक नहीं है।

संपादकीय
कांग्रेस में असुरक्षा की भावना क्यों? ४

प्रतिस्मृति
प्रिया/ *अभिमन्यु अनत* ९

कहानी
नींद भर सोए/ *विजयशंकर पांडेय* १२
उड़ान/ *एम.डी. मिश्रा 'आनंद'* १८
चिंता/ *मनमोहन गुप्ता* २५
राजरानी की गाय/ *राकेश भ्रमर* ३१
प्यार/ *रागति रमा* ५४
अरेंज मैरिज/ *जतिंदर कौर* ६२
उधार/ *लवलेश दत्त* ६९

आलेख
एक महीना ऐसा भी/ *मालती शर्मा* १४
भारतीय नवजागरण की अद्भुत मिसाल : सर सी.वाई. चिंतामणि/ *हेरंब चतुर्वेदी* २२
एक संपूर्ण आलोचक का आलोचना-कर्म/ *अरुण होता* २८
भारतवंशी रोमा यायावर : कल और आज/ *श्याम सिंह 'शशि'* ३६

लघुकथा
स्वच्छता अभियान/ विनोद शंकर गुप्त १३
आकस्मिकता या ईश्वरीय कृपा/ विनोद शंकर गुप्त ४९
ध्वनि प्रदूषण/ विनोद शंकर गुप्त ७१
राजा का चुनाव/ मीरा जैन ७४

कविता
गौरैयों के नहीं घोंसले/ शिवानंद सिंह 'सहयोगी' १७
कौन है दोस्त, कौन है दुश्मन/ *ब्रह्मजीत गौतम* २१
दीये जलते रहे/ *यश मालवीय* ३८
जोश में होश कहाँ रहता है/ *बी.एस. जौहरी* ३९
खुद ही खुद को छल रहे/ *सुरेश 'तन्मय'* ५५
कबीर कहते/ *मोहन उपाध्याय* ५८
क्या कहेंगे आप?/ *प्रेमशंकर भट्ट* ६३
समय की कर लें प्रतीक्षा/ *इंदिरा मोहन* ६५
गाते थे गीत सुरीले/ *शांति सुमन* ८०

राम झरोखे बैठ के
दाढ़ी, बुद्धिजीवी और बादल/ *गोपाल चतुर्वेदी* ४०

स्मरण
दादा की भीनी-भीनी यादें/ *सुमन चौरे* ४७

ललित-निबंध
पावस और सर्जन/ *श्रीराम परिहार* ५०

रिपोर्ताज
न्याय की आस लिये एक लोकनृत्य 'नाग-सैला'/ *अखिलेश सिंह श्रीवास्तव* ५९

व्यंग्य
श्री घोड़ीवाला का चुनाव अभियान/ *पूरन सरमा* ६४

साहित्य का भारतीय परिपार्श्व
डाकमुंशी/ *फकीर मोहन सेनापति* ५६

साहित्य का विश्व परिपार्श्व
ककड़ी प्रदेश में शिशु-जन्म/ *बोरिस गरबातोव* ६६

यात्रा-वृत्तांत
आनंद का उद्गम अमरकंटक/ *विनय शर्मा* ७२

लोक-साहित्य
लोककंठ से निकली बरखा की फुहार/ *सुधा तैलंग* ७५

बाल-संसार
रहस्यमयी पुस्तक चोर/ *रेनू सैनी* ७८

पाठकों की प्रतिक्रियाएँ ८१
वर्ग-पहेली ८२
साहित्यिक गतिविधियाँ ८३

संपादकीय

कांग्रेस में असुरक्षा की भावना क्यों?

कांग्रेस खुद को कितना असुरक्षित महसूस करती है, इसका हास्यास्पद उदाहरण पिछले दिनों देखने को मिला। पूर्व राष्ट्रपति प्रणब मुखर्जी ने राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के सरसंघचालक का निमंत्रण स्वीकार कर लिया कि वे ७ जून को नागपुर में स्वयंसेवकों के शिक्षण वर्ग के समापन समारोह में स्वयंसेवकों को संबोधित करें। समाचार आते ही कांग्रेस में बवेला मच गया। दो दशकों से अधिक समय से कांग्रेस के संकटमोचक रहे प्रणब दा ने यह निमंत्रण कैसे स्वीकार किया? इस पर सवाल उठने लगे, समाचार-पत्रों में बयान आने लगे और टी.वी. पर बहस शुरू हो गई। कांग्रेसी भूल गए कि प्रणब मुखर्जी ने राष्ट्रपति बनने के पहले कांग्रेस तथा उसकी सदस्यता से इस्तीफा दे दिया था। राष्ट्रपति का कार्यकाल समाप्त होने के बाद अब वे देश में एक सम्माननीय वरिष्ठ नागरिक हैं। जैसा अमेरिकन कहते हैं, वे 'सिटीजन प्रणब मुखर्जी' हैं। उनके लिए कोई सीमा नहीं है, जैसा उनकी आत्मा कहेगी, वे अपनी बात या विचार चाहे कोई फोरम हो, प्रस्तुत करेंगे। अब किसी राजनीतिक दल के बँधुआ नहीं हैं। वैसे देखें तो राजीव गांधी के समय से पार्टी ने उनका उपयोग ही किया, उनके साथ न्याय नहीं किया। जैसी परंपरा रही है, श्रीमती इंदिरा गांधी की हत्या के बाद अंतरिम समय के लिए कैबिनेट के वरिष्ठ सदस्य को प्रधानमंत्री की शपथ दिलाई जाती है, जैसाकि दो बार गुलजारी नंदा को बनाया गया था। उसके उपरांत सत्तादल की संसदीय पार्टी अपना नेता चुनती है, वह प्रधानमंत्री बनता है। उस तिकड़म में जाने की जरूरत नहीं है, कैसे तत्कालीन राष्ट्रपति जैल सिंह ने सीधे राजीव गांधी को प्रधानमंत्री की शपथ दिला दी थी। यही नहीं, नए मंत्रिमंडल में भी वे नहीं लिये गए थे। वे कांग्रेस से अलग हो गए, अपनी पार्टी बनाई, पर कुछ दिनों के बाद उसे भंग कर कांग्रेस में शामिल हो गए। उनको इस्तेमाल किया गया, पर उनका देय उन्हें नहीं मिला। २००४ में जब कांग्रेस आम चुनाव में जीत गई और सोनिया गांधी ने पार्टी के दबाव के बावजूद कई कारणों से प्रधानमंत्री बनना अस्वीकार किया, तब भी उन्होंने प्रणब मुखर्जी के स्थान पर मनमोहन सिंह को अपनी ओर से प्रधानमंत्री पद के लिए प्रस्तावित किया, जो उनके मातहत नौकरशाह के रूप में कार्य कर चुके थे। उनके बौद्धिक चातुर्य और कार्यकुशलता के कारण सोनिया गांधी और कांग्रेस ने उन्हें विश्वसनीय नहीं माना। प्रणब मुखर्जी इशारों पर चलकर कठपुतली प्रधानमंत्री तो बन नहीं सकते थे।

प्रणब मुखर्जी फिर भी सदैव संकट की घड़ी में कांग्रेस के संकट-मोचक साबित हुए। प्रणब मुखर्जी के अपने आत्मकथन के दो भागों, विशेषतया दूसरे भाग को ध्यान से पढ़ने पर यह स्पष्ट हो जाता है। यही नहीं, उनको वह मंत्रालय भी नहीं मिला, जिसकी वे आशा करते थे या उनको आशा दिखाई गई थी। किंतु मुखर्जी ने पार्टी के प्रति सदैव निष्ठा बनाए रखी और हर प्रकार से सहयोग दिया। राष्ट्रपति के चुनाव के समय भी सोनिया गांधी ने सहयोगी दलों से कहा था कि दो अच्छे प्रत्याशी है—प्रणब मुखर्जी और उस समय के उपराष्ट्रपति हामिद अंसारी। वैसे राजनीतिक, संसदीय और प्रशासनिक तथा मंत्रिमंडलीय अनुभव की दृष्टि से दोनों में तुलना उचित नहीं है, यद्यपि सोनिया गांधी ने अंसारी को टर्म उपराष्ट्रपति इसीलिए रखा कि वे उनको उपराष्ट्रपति बनाना चाहती थीं। अधिकतर सहयोगी दलों ने प्रणब मुखर्जी के पक्ष में राय दी, अतएव सोनिया गांधी के लिए कोई विकल्प रहा ही नहीं और प्रणब बाबू राष्ट्रपति चुन लिये गए।

हमें प्रणब मुखर्जी, जो १९७३ में इंदिरा गांधी मंत्रिमंडल में डिप्टी मिनिस्टर, कॉमर्स और इंडस्ट्री से थे, सर्वप्रथम मिलने का अवसर मिला। हम उस समय 'इंडियन इनवेस्टमेंट सेंटर' दिल्ली में निदेशक थे। जापान से एक ट्रेड का बड़ा डेलीगेशन आया था और उनको प्रणबजी को संबोधित करना था—भारत की उस समय की नीतियों और निवेश की सुविधाओं व अवसर के विषय में। एक लंबे अरसे से उनसे परिचय रहा है। इंदिरा गांधी के प्रधानमंत्रित्व काल में वे अघोषित नंबर दो थे। आदेश था कि यदि प्रधानमंत्री बाहर गई हों तो प्रणब मुखर्जी कैबिनेट बैठक की अध्यक्षता करेंगे। डॉ. पी.सी. अलेक्जेंडर कैबिनेट सेक्रेटरी एवं गृहसचिव थे, इंदिराजी की हिदायत थी कि यदि किसी कारण वे (इंदिराजी) उपलब्ध न हों और कुछ महत्त्वपूर्ण निर्णय लेने हों तो प्रणब बाबू से बातचीत कर आगे कार्य करें। ऐसे अनुभवी, बहुपाठी तथा सफल राजनीतिज्ञ को कांग्रेस पार्टी के नौसिखिये परामर्श दे रहे थे कि वे आर.एस.एस. के आयोजन में न जाएँ। यह उनके लिए हानिकारक होगा। कहावत है—कहाँ राजा भोज और कहाँ···। जैराम रमेश और आनंद शर्मा ने उन्हें पत्र लिखे। हम समझते हैं कि उनकी भाषा में भी धृष्टता ही परिलक्षित होती है। विस्मय इस बात का है कि जैराम रमेश एक समझदार और संतुलित व्यक्ति हैं। हद हो गई जब उनकी बेटी शर्मिष्ठा मुखर्जी को पिता पर दबाव डालने के लिए सामने लाया गया तथा मीडिया के सामने जिस प्रकार की भावनात्मक भाषा का उन्होंने प्रयोग किया। वे अपनी राय पिताजी को घर पर भी दे सकती थीं, अपना दृढ़ विरोध प्रकट कर सकती थीं। वे यहाँ तक कह गईं कि जो टी.वी. पर दिखाई देगा, वह हमेशा याद रहेगा। उन्होंने भाषण में क्या कहा, वह तो लोग भूल जाएँगे। सब कांग्रेस के झंडाबरदार यह भूल ही गए कि प्रणब मुखर्जी राजनीति में अस्पृश्यता के समर्थक कभी नहीं रहे, और इस गुण के कारण ही वे कांग्रेस के हित में तरह-तरह के समझौते कराकर संकटमोचक कहे जाते थे। केवल गृह मंत्रालय को छोड़कर सब बड़े मंत्रालयों के वे मंत्री रहे। उन्हें संविधान और संसदीय

प्रणाली का विशद ज्ञान है। उनकी स्मरणशक्ति विस्मयकारी है। उन्हें पढ़ने का व्यसन है। वे जब राष्ट्रपति थे तो सरसंघचालक उनके प्रति सम्मान प्रकट करने गए थे। राष्ट्रपति चाहे पहले किसी दल से क्यों न जुड़ा रहा हो, शपथ लेने के बाद वह निष्पक्षता से पूरे राष्ट्र का प्रतिनिधित्व करता है। उन्होंने श्री मोहन भागवत को राष्ट्रपति भवन में भोजन के लिए आमंत्रित किया था। विरोध करनेवाले भूल गए कि श्री मोहन भागवत विश्व के सबसे बड़े स्वैच्छिक संगठन के अध्यक्ष हैं, जिसका प्रभाव देश के बाहर भी है। देश के अंदर तो हर क्षेत्र में इस संगठन का जाल बिछा हुआ है। उसको नकारा नहीं जा सकता। विरोध करनेवाले चाहते थे कि प्रणब मुखर्जी नागपुर के आयोजन के निमंत्रण को अस्वीकार कर दें। उन्हें इतना भी धैर्य नहीं था कि ऐसा शालीन और अनुभवी राजनेता क्या कहता है, उसका इंतजार कर लें।

जैसा हमारा खयाल था, उन्होंने अपने वही विचार, जैसे सहिष्णुता, देश की विविधता, विश्वबंधुत्व की परंपरा, संविधान और लोकतांत्रिक मूल्यों का सम्मान, संविधान सर्वोपरि, सर्व जनहित कार्य बिना किसी भेदभाव के, व्यक्ति की श्रेष्ठता, सामाजिक सौहार्द आदि की अपनी मान्यताओं को प्रभावी ढंग से प्रस्तुत किया। पूर्व राष्ट्रपति के नागपुर जाने से आकाश नहीं टूट पड़ा। उनका भाषण सुनकर विरोध करनेवालों के मुँह पर थप्पड़ लगा, अपनी लाज छिपाने के लिए कहने लगे कि प्रणब बाबू से इसी की आशा थी। यदि ऐसा ही था तो फिर उनके निमंत्रण स्वीकार करने पर इतनी बेचैनी क्यों रही, अधीरता क्यों थी? मगर कांग्रेस से एक छँटे घुड़सवार आनंद शर्मा को फिर चैन नहीं आया और अपनी बुद्धिमानी का एक और उदाहरण पेश किया। पूर्व राष्ट्रपति राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के संस्थापक की समाधि पर गए और सम्मानस्वरूप पुष्प अर्पित किए। आनंद शर्मा की यह शिकायत कि पूर्व राष्ट्रपति ने डॉ. हेडगेवार को देश का एक महान् सपूत क्यों कहा? उन्हें पता नहीं कि प्रसिद्ध क्रांतिकारी त्रैलोक्यनाथ चक्रवर्ती ने अपनी पुस्तक 'मेरे इकतीस वर्ष का जेल-जीवन' में लिखा है कि हेडगेवार कलकत्ता (अब कोलकाता) में डॉक्टरी पढ़ते समय क्रांतिकारी पार्टी के सक्रिय सदस्य थे। वे समय-समय पर मध्य प्रदेश में कांग्रेस के कई उच्च पदों पर रहे, जेल गए। नागपुर के झंडा सत्याग्रह में सक्रिय भागीदार थे। उनके विषय में सही तथ्य तो जानने की कोशिश करनी चाहिए। गांधीजी वर्धा में अपने आप आर.एस.एस. के शिक्षा वर्ग में गए और उसकी सराहना की। यह तथ्य गांधीजी के कई वॉल्यूमों में लिखे गए जीवन-चरित्रों, तेंदुलकर या प्यारेलाल द्वारा रचित, दोनों में देखा जा सकता है। जिस महापुरुष ने एक छोटा बीज-रोपण किया और वह आज विशाल वटवृक्ष के रूप में विश्व का सबसे बड़ा स्वयंसेवी संगठन है, ऐसे दूरदर्शी महापुरुष की महानता से कौन इनकार कर सकता है? विचारधारा से आप सहमत हों या असहमत, यह दूसरी बात है। आर.एस.एस. के भूत से कांग्रेस परेशान है, इसे राहुल गांधी तथा उनके अन्य चेले-चपाटे प्रतिदिन कोसते रहते हैं। किंतु हाथी तो अपनी मंथर गति में शालीनता और आत्मविश्वास से चलता रहता है, चलता ही रहेगा। इस प्रकार की वाचालता और व्यवहार केवल असुरक्षा की भावना के ही परिचायक हैं।

आप का प्रलाप

आम आदमी पार्टी के समय-समय पर नाटकीय कृत्यों पर हँसी आती है। उनके कथन बचकाने लगते हैं। अन्ना हजारे के भ्रष्टाचार विरोधी आंदोलन से यह पार्टी पैदा हुई। केजरीवाल उसके मुखिया के रूप में उभरे। एक नई राजनीति की परंपरा पड़ेगी, ऐसा विश्वास जनता को दिलाया था। बहुत अच्छे विचारवान् और चरित्रवान् लोग पार्टी में शामिल हुए। जो संवैधानिक मान्यताओं को मानते थे, धीरे-धीरे ऐसे व्यक्तियों को केजरीवाल ने अलग-थलग कर अपना वर्चस्व स्थापित कर लिया। यदि कोई अपना दृष्टिकोण प्रस्तुत करना चाहे तो उसको तुरंत पार्टी विरोधी करार दे दिया गया। शुरू से ही एक शब्द केजरीवाल के मुँह पर है कि हमें दिल्ली की जनता ने चुना है, अतएव हमारी बात मान्य होनी चाहिए। संविधान में क्या लिखा है, कानून और नियम क्या कहते हैं, इसकी उनको परवाह नहीं है। जनादेश का पालन संविधान की सीमाओं में होगा, यह वे मानने को तैयार नहीं हैं। प्रारंभ से उन्होंने केंद्र सरकार और उपराज्यपाल से टकराव का रुख अपनाया। सोचा कि सत्ता का विरोध कर और जनता जनार्दन के हित की बात करके वाहवाही लूटेंगे। आज क्या कहते हैं और कल क्या करते हैं, उसमें कोई तर्क व सामंजस्य है या नहीं, इसकी उन्हें परवाह नहीं। इस प्रकार की कलाबाजियों के वे आदी हो गए हैं। आते ही उन्होंने वित्तमंत्री अरुण जेटली पर भ्रष्टाचार के आरोपों की झड़ी लगा दी। दिल्ली क्रिकेट बोर्ड के प्रबंधन के विषय में कहा कि हमारे पास पक्के सबूत हैं। जब जेटली ने मानहानि का सिविल और क्रिमिनल मुकदमा दायर किया। उनके गुट के जो और सरगना हैं, उन्होंने भी वह आरोप दोहराया तो उनके खिलाफ भी मानहानि के मुकदमे दायर हो गए। प्रसिद्ध एडवोकेट जेठमलानी को केजरीवाल ने अपना वकील बनाया। कोशिश की कि उनका मेहनताना दिल्ली सरकार दे, पर यह संभव नहीं हुआ, जब तथ्य सामने आए कि ये आरोप व्यक्तिगत तौर पर लगाए थे। यही नहीं, उन्होंने जेठमलानी को जो ब्रीफिंग दी और जो सवाल पूछने को कहा, वे और भी आपत्तिजनक थे। बाद में झूठ का सहारा लिया कि हमने तो जेठमलानी को ये सवाल पूछने को नहीं कहा था, और अपनी बात से मुकर गए। जेठमलानी मुकदमे से अलग हो गए, लेकिन मेहरबानी कर अपनी फीस भी छोड़ दी। अंत में अरुण जेटली से बिना शर्त माफी माँगनी पड़ी। इन्हें न कोई शर्म-हया और न किसी प्रकार का सबक सीखा। केजरीवाल के एक साथी ने पहले माफी नहीं माँगी, पर वह बिना सबूत के मुकदमा किस प्रकार लड़ता। उसने खुलेआम कहा कि केजरीवाल ने हमें गुमराह किया, कहा था उनके पास सबूत हैं, इससे वह धोखे में आ गया। उसको भी माफी माँगनी पड़ी। यह रही आप प्रमुख की राजनीतिक नैतिकता। अभद्र भाषा का प्रयोग तो उनके लिए साधारण बात है। राजनीति में नए हैं, पर राजनीतिक पैंतरेबाजी में माहिर।

जब से दिल्ली को यूनियन टेरीटरी घोषित किया गया, तब से कांग्रेस, जनसंघ और बाद में भाजपा के मुख्यमंत्री रहे, कभी इस प्रकार की स्थिति पैदा नहीं हुई। शीला दीक्षित तीन बार दिल्ली की मुख्यमंत्री

रहीं, उनका कहना है कि जब केंद्र में बीजेपी की सरकार थी, उन्हें कोई दिक्कत नहीं हुई। हालाँकि हर पार्टी चुनाव के समय दिल्ली को पूर्ण राज्य का दर्जा देने की माँग करती है, पर यह संभव नहीं है, क्योंकि दिल्ली देश की राजधानी है। बीजेपी के अन्य मुख्यमंत्रियों का यही अनुमान रहा, जब केंद्र में दूसरे दलों की सरकार रही। केजरीवाल और आप को भी कोई दिक्कत नहीं होती, यदि वे उपराज्यपाल से मिलकर बातचीत कर नियमानुसार जो करना चाहते थे, उसकी रूपरेखा बनाते। उनकी मानसिकता रही है कि उन्होंने दिल्ली विजय कर ली है, वे चाहेंगे, वही होगा, चाहे कानून और नियम कुछ भी हो। उनका यह अहं तो टकराव ही पैदा करेगा। अपने अधिकार और दायित्व को सही रूप में न देखकर उन्होंने टकराव का रास्ता अपनाया। कोई उपराज्यपाल केजरीवाल को पसंद नहीं है। अपनी अकर्मण्मता का दोष केंद्र सरकार पर, गृह मंत्रालय पर, उपराज्यपाल पर और खासकर प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी पर थोपना आदत में शामिल हो गया है। यही नहीं, अधिकारियों से अनबन की खबरें भी शुरू से ही आनी प्रारंभ हो गईं। बहुत से अधिकारियों ने तो तबादले करा लिये। कई बार कर्मचारियों ने दुर्व्यवहार और अभद्र शब्दों के विरुद्ध प्रोटेस्ट भी की, किंतु केजरीवाल सरकार के रवैए में कोई परिवर्तन नहीं हुआ। तब तो हद हो गई, जब मुख्य सचिव अंशु प्रकाश को एक जरूरी बैठक के लिए रात को मुख्यमंत्री निवास पर बुलाया गया, जहाँ आप के दस-ग्यारह विधायक मौजूद थे और बातचीत के दौरान मुख्य सचिव के साथ हाथापाई हुई, पर न तो केजरीवाल और न सिसोदिया ने उन्हें रोकने की कोशिश की। मुख्य सचिव ने डॉक्टरी जाँच कराने के बाद पुलिस में रिपोर्ट की। केजरीवाल के अपने परामर्शदाता जैन ने पुलिस में कबूला कि यह वाकया हुआ था, पर केजरीवाल आरोप को गलत बताते रहे। पुलिस ने तफतीश के बाद मामला अदालत में पेश कर दिया है। पुलिस ने केजरीवाल से भी लंबी पूछताछ की। केजरीवाल ने कहना शुरू किया कि उन्हें फँसाने की साजिश हो रही है। आरोप अदालत के विचाराधीन है। लेकिन इस हादसे के बाद आई.ए.एस. तथा अन्य सरकारी सेवाओं के संगठनों ने तरह-तरह से प्रोटेस्ट किया। धीरे-धीरे विरोध थम गया और सरकारी दफ्तरों में कार्य होने लगा, किंतु एक अविश्वास और रंजिश की लकीर बन गई। सामान्य गति से कार्य होने लगे, परंतु शिकायतें दोनों ओर से आती रहीं। अधिकारियों और कर्मचारियों को अपनी सुरक्षा और बेइज्जती का डर है, ऐसा संगठनों का कहना रहा है। केजरीवाल और उनके मंत्री कहते रहे कि अधिकारी व कर्मचारी हड़ताल पर हैं, पर सरकारी संगठनों का कहना है कि यह गलत है। कभी-कभी अधिकारी और अन्य कर्मचारी उन बैठकों में नहीं जाते हैं, जहाँ उन्हें सुरक्षा का डर होता है। कम-से-कम पिछले सौ वर्षों में किसी प्रांत या राज्य में इस प्रकार की बदसलूकी किसी मुख्य सचिव के साथ देखने में नहीं आई। मुख्य सचिव तो मुख्यमंत्री का मुख्य सलाहकार होता है। उसी पर अन्य अधिकारी और मातहत अपने साथ न्याय के लिए निर्भर करते हैं। लोकतांत्रिक प्रशासन में चुने हुए प्रतिनिधियों और नियमित अधिकारियों के संबंध बहुत संवेदनशील होते हैं। आपसी संबंध अच्छे हैं तो शासन अच्छी तरह चलता है। एक-दूसरे के प्रति आदर की भावना होनी चाहिए, पारस्परिक विश्वास होना चाहिए। यदि तालमेल नहीं बैठता है तो जो प्रावधान के अनुसार मुख्य सचिव का स्थानांतरण हो सकता है। यदि उसने कोई गंभीर गलती की है तो उसके दंड का भी प्रावधान है। शालीन व्यवहार की सीमाओं का उल्लंघन तो नहीं होना चाहिए।

करीब एक सप्ताह से अधिक समय से केजरीवाल और उनके तीन सहयोगी मंत्री राजभवन के वेटिंग रूम में धरने पर बैठे रहे और बताया कि उनके अधिकारी अनसुनी कर रहे हैं तो अधिकारियों ने प्रेस कॉन्फ्रेंस में स्पष्ट किया कि यह आरोप गलत है। सारे तथ्य प्रस्तुत किए। यह दृश्य अजीब है कि राजभवन में ही मुख्यमंत्री और उनके तीनों साथी धरना देने लगे। वैसे केजरीवाल को धरने की लत सी है, दूसरों पर दोष थोपने का मौका मिलता है। अपनी कार्यक्षमता के अभावों से लोगों का ध्यान हट जाता है, क्योंकि एक नए नाटक की शुरुआत हो जाती है। इधर नीति आयोग की बैठक में आंध्र प्रदेश के मुख्यमंत्री चंद्रबाबू नायडू, केरल के विजयन, पश्चिम बंगाल का ममता बनर्जी तथा कर्नाटक के कुमारस्वामी को दिल्ली की स्थिति के बहाने प्रधानमंत्री मोदी पर निशाना लगाने का एक और मौका मिल गया। असल में उनकी निगाह २०१९ के आम चुनाव पर है। वे इसी कोशिश में हैं कि कोई भी अवसर मिले और मोदी की छवि को धूमिल किया जाए, क्योंकि उन्हें मोदी के करिश्मे का डर है। वे अभी भी सबसे अधिक जनप्रिय राजनेता हैं। चारों मुख्यमंत्री केजरीवाल के निवास पर गए, उनके परिवार से मिले, तदुपरांत वहीं प्रेस कॉन्फ्रेंस में कहा कि उपराज्यपाल को एक पत्र लिखा है कि केजरीवाल से मिलने की उन्हें सुविधा प्रदान की जाए। पूरे मामले का राजनीतीकरण विशेष उद्देश्य से किया गया। राजनिवास को घेरने की चेष्टा विफल रही। प्रधानमंत्री निवास को घेरनेवाले जुलूस में मार्क्सवादी पार्टी के महासचिव शामिल हुए, भाषण दिया। पर वह हुजूम भी प्रधानमंत्री निवास तक न पहुँच सका। केजरीवाल अपने और उपराज्यपाल के अधिकारों के विषय में दिल्ली न्यायालय गए, पर वहाँ के निर्णय से असंतुष्ट होकर वे शीर्ष न्यायालय गए, जहाँ मामले की सुनवाई पूरी हो चुकी है। कम-से-कम शीर्ष न्यायालय के निर्णय की तो उन्हें धैर्यपूर्वक प्रतीक्षा करनी चाहिए।

प्राय: एक माह के उपरांत कर्नाटक का मंत्रिमंडल पूरा हो सका। देरी का कारण था कि राहुल गांधी विदेश में थे। कांग्रेस ने मुख्यमंत्री का पद कुमारस्वामी को भेंट कर ही दिया था। उपमुख्यमंत्री का पद कांग्रेस के प्रदेशाध्यक्ष को प्राप्त हुआ। उसके और भी उम्मीदवार विशेषतया शिवकुमार गुजरात के चुनाव के समय कांग्रेस के सदस्यों को सुरक्षित और एकजुट रखने में सफल रहे, यही दायित्व उनका कर्नाटक में भी रहा था। दोनों दलों के जो विधायक मंत्री बने, वे ए.टी.एम. विभाग चाहते थे। वैसे भी २०१९ में आम चुनाव के लिए धन चाहिए। इस रस्साकसी के बाद अब अगली दौड़ है कार्पोरेशन और बोर्डों के अध्यक्ष बनाने के लिए। जो मंत्री नहीं बन सके और पहले मंत्री थे, उनमें भारी असंतोष है। कांग्रेस अध्यक्ष राहुल गांधी और देवगौड़ा ने फिलहाल असंतुष्ट प्रत्याशियों को समझा-बुझा दिया है। मुख्यमंत्री कुमार स्वामी ने कहा

कि वे अगले आम चुनाव-२०१९ तक तो कम-से-कम मुख्यमंत्री रहेंगे ही, क्योंकि सम्मिलित रूप से आम चुनाव लड़ना है। यह इशारा है अंदर चल रहे द्वंद्व का है, वैसे कांग्रेस ने वादा किया है कि वे पूरे पाँच साल मुख्यमंत्री के पद पर रहेंगे। देखना है कि २०१९ के आम चुनाव के बाद क्या गुल खिलते हैं।

उत्तर प्रदेश, राजस्थान के उपचुनावों में भाजपा की हार और कर्नाटक में भाजपा को सत्ता में आने से रोकने में मिली सफलता के बाद विरोधी दलों के हौसले बढ़ गए हैं। भाजपा के संगठित विरोध का प्रदर्शन कुमारस्वामी का शपथ ग्रहण समारोह था। विरोधी दल जानते हैं कि अलग-अलग चुनाव लड़कर वे नरेंद्र मोदी को २०१९ के आम चुनाव में परास्त नहीं कर सकेंगे। उनकी राजनीति का एक भाग है कि हर प्रकार से मोदी की छवि को ध्वस्त किया जाए। दूसरा है कि क्षेत्रीय राजनीतिक दल बनें और एक-को-एक पर लड़ाया जाए, ताकि विपक्ष के वोट विभाजित न हों, किंतु इसमें कई कठिनाइयाँ हैं। सबसे बड़ा प्रश्न तो यह है कि विपक्ष की ओर से प्रधानमंत्री बनने के लिए कौन सा चेहरा होगा। ममता और मायावती क्या राहुल गांधी का नेतृत्व स्वीकार कर लेंगी? खैर, ये सब भविष्य के प्रश्न हैं, लेकिन एन.डी.ए. को, विशेषतया भाजपा को यह मानकर चलना चाहिए कि उनके सामने २०१९ का चुनाव एक बड़ी चुनौती होगा। वे केवल मोदी की लोकप्रियता पर ही निर्भर नहीं रह सकते। तथाकथित बुद्धिजीवी, उदारवादी, चिंतकों, मानवाधिकार के लंबरदार, देश में और विदेश में भी अंग्रेजी मीडिया के साथ व्यक्तिगत रूप से मोदी के खिलाफ अत्यंत सक्रिय हो रहे हैं। भाजपा को एन.डी.ए. की सबसे बड़ी इकाई होने के कारण इस ओर अधिक ध्यान देना होगा कि अपने सहयोगियों को कैसे संतुष्ट रखा जाए। बहुत जरूरी होगा कि जो आनुषंगिक इकाइयाँ हैं, उनको साथ रखा जाए। वे बेसुरे आलाप न शुरू करें। यह देखने में आ रहा है कि पुराने कार्यकर्ता स्वयं को हाशिये पर महसूस करते हैं। नए कार्यकर्ताओं में उत्साह है, पर धैर्य और परिपक्वता नहीं। प्रशिक्षण का अभाव है। सबसे सामंजस्य बैठाना और जनता से संपर्क बनाए रखना एक कला है, जिसे भाजपा का प्लस पॉइंट कहा जाता था, उसमें कमी देखी जा रही है।

उत्तर प्रदेश के मंत्रिमंडल में आपसी विरोध स्पष्ट दिखाई देता है। सहयोगी पार्टी के मंत्री मुख्यमंत्री ही नहीं, पार्टी नेतृत्व की खुली आलोचना कर रहे हैं। केवल निचले स्तर पर ही भ्रष्टाचार फैला हो, ऐसा नहीं है। कानून और शांति व्यवस्था स्थापित नहीं हो पा रही है। अधिकारियों की लापरवाही जनता में विक्षोभ ही पैदा करती है। पुलिस और प्रशासनिक व्यवस्था को चुस्त, संवेदनशील और जवाबदेह बनाना है। प्रधानमंत्री 'सब चलता है' वाली मनोवृत्ति का विरोध करते हैं, पर व्यवस्था के कानों पर जूँ भी नहीं रेंगती। उदाहरण के लिए हम कन्नौज में समाजवादी सरकार द्वारा स्थापित मेडिकल कॉलेज और अस्पताल का जिक्र करना चाहेंगे। उम्मीद थी कि जिले की जनता को कुछ राहत मिलेगी। वहाँ कोई व्यवस्था नहीं, न डॉक्टर मिलते हैं और न दवाइयाँ। यहाँ कुछ एक डॉक्टर कमरे किराए पर लेकर निजी प्रैक्टिस करते हैं। आज भी गरीब जनता को कानपुर और लखनऊ भागना पड़ता है। अस्पताल के रूप में एक सफेद हाथी खड़ा कर दिया है। गोरखपुर के बाद फर्रुखाबाद में बच्चों के मरने की खबरें आई थीं। इस समय विवादास्पद बयानों की आवश्यकता नहीं है, जमीन पर कैसा काम हो रहा है, उसकी निगरानी जरूरी है। तिर्वा कन्नौज के मेडिकल कॉलेज और हॉस्पिटल की एक एडवाइजरी कमेटी कमिशनर या कलेक्टर की अध्यक्षता में बनाई जा सकती है, जो देखे कि जनता को कैसे चिकित्सा सुविधाएँ उपलब्ध हों। मंत्रियों को अपना वैज्ञानिक ज्ञान बघारने की जरूरत नहीं है बल्कि देखें कि जनता के अभाव-अभियोग कैसे दूर हो सकते हैं। स्कूल, कॉलेजों में पढ़ाई हो, चिकित्सा सुविधाएँ ठीक से उपलब्ध हों, प्रधानमंत्री की और राज्य की योजनाएँ कहाँ तक सफल हो रही हैं, जिनके लिए वे बनाई गई हैं, उनको कितना लाभ मिल रहा है। समाचार-पत्रों में या टी.वी. पर विज्ञापन कारगर नहीं होंगे, जितना जमीन पर दो-एक अच्छे उदाहरण पेश करने से जनता में विश्वास पैदा होगा। प्रधानमंत्री का नारा है 'सबका साथ, सबका विकास'। यह नारा सांसदों, विधायकों और मंत्रियों को आत्मसात् करना है। अपनी मनोवृत्ति में परिवर्तन लाना है। दलितों का उत्पीड़न हो रहा है, उसका तेजी से दुष्प्रचार भी हो रहा है और हमारे उत्तर प्रदेश के एक मंत्री समझते हैं कि होटल से खाना मँगाकर दलित परिवार के साथ उसके घर में खाकर हम उनसे मेल-मिलाप कर रहे हैं। आज के जमाने में यह ढोंग चलनेवाला नहीं है। मध्य प्रदेश, छत्तीसगढ़ और राजस्थान में २०१९ के आम चुनाव के पहले एसेंबली के चुनाव होने हैं। हमारे लिए किसी विवरण में जाना संभव नहीं है और न आवश्यक। राजस्थान में हालात ठीक नहीं हैं, यह समाचार पहले से आ रहे हैं। संगठन और सरकार में तालमेल नहीं है। भाजपा की राजस्थान इकाई के अध्यक्ष का चुनाव खटाई में पड़ गया है। कार्यकर्ताओं पर इसका क्या असर होगा? राजहठ और त्रियाहठ का मिश्रण हानिकर हो सकता है। भाजपा में हर स्तर पर नेताओं, सांसदों और विधायकों को सोचना होगा कि नरेंद्र मोदी के पास जीत की कोई जादुई छड़ी नहीं है, वह तो उनकी अपनी मेहनत, ईमानदारी और सच्ची जनसेवा तथा जनसंपर्क में ही निहित है। प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी के मार्गदर्शन का सही मायने में अनुसरण ही सफलता की कुंजी है। समय रहते भाजपा के सामने यह एक बड़ी चुनौती है, जब सबकी आँखें २०१९ के आम चुनाव पर लगी हैं।

जम्मू-कश्मीर की कहानी और डॉ. कर्ण सिंह

कुछ समय पहले जम्मू-कश्मीर समस्या के बारे में हरबंस सिंह की लिखी एक पुस्तक आई थी—'महाराजा हरिसिंह : द ट्रब्लेड ईयर्स'। लेखक जम्मू क्षेत्र के निवासी हैं। वे पहले एक कॉलेज में पढ़ाते थे, बाद में उन्होंने पत्रकारिता क्षेत्र को अपनाया। यह पुस्तक जम्मू-कश्मीर की संपूर्ण समस्याओं पर आधारित है, जो १९४६ के उपरांत पैदा हुईं, जैसे महाराजा हरिसिंह की भारत में तुरंत शामिल होने की उलझन, उसके बाद कबाइलियों को आगे कर पाकिस्तान का आक्रमण, तदुपरांत राजा हरिसिंह ने भारत में शामिल होने के दस्तावेज पर हस्ताक्षर किए, ताकि भारत संवैधानिक तौर पर पाकिस्तानी हमलावरों का मुकाबला करने के

लिए अपनी सेना भेज सके। प्रारंभ में तीन अधिकार भारत को सुपुर्द किए, जिनमें विदेश नीति व सुरक्षा शामिल थे। बाकी राजनीतिक अधिकार महाराजा ने सुरक्षित रखे थे। उन पर बाद में विचार होना था। दुर्भाग्य से बाद में भारत सरकार ने पाकिस्तानी आक्रमण का मामला सुरक्षा परिषद् में भेज दिया, जिससे बहुत सी पेचीदगियाँ पैदा हो गईं। नेहरू और पटेल ने शेख अब्दुल्ला, जो जेल में थे, उनको रिहा करवाकर महाराजा पर दवाब डालकर उन्हें प्रशासन का प्रमुख बना दिया। यह परिवर्तन महाराजा हरिसिंह के दस्तखत से ही संभव हुआ। शेख अब्दुल्ला १९३० से ही हरिसिंह के शासन के विरुद्ध षड्यंत्र कर रहे थे। एक रीडिंग रूम की स्थापना कर वहाँ सब षड्यंत्र हुआ करते थे। बाद में उन्होंने 'मुसलिम कॉन्फ्रेंस' की स्थापना की। नेहरू के परामर्श के उपरांत उसका नाम 'नेशनल कॉन्फ्रेंस' हो गया, किंतु शेख अब्दुल्ला और उनके साथियों की मानसिकता में कोई परिवर्तन नहीं हुआ। चूँकि डोगरा गुलाब सिंह ने कश्मीर राज्य की स्थापना की थी। वे डोगरों और महाराजा को नीचा दिखाना चाहते थे। यह लंबी कहानी है, जिस पर उपर्युक्त पुस्तक प्रकाश डालती है। इतिहास की कुछ और सामग्री शामिल कर इस पुस्तक का हिंदी में अनुवाद 'प्रभात प्रकाशन' द्वारा प्रकाशित हुआ है। उसके बाद लेखक की दूसरी पुस्तक अभी आई है, जिसका नाम है 'कर्ण सिंह : जम्मू और कश्मीर १९४९-१९६७', जिसके प्रकाशक हैं 'बृहस्पति पब्लिकेशंस', द्वारका, नई दिल्ली। शेख साहब को उस समय की अंतरराष्ट्रीय परिस्थितियों में खुश रखने के लिए भारत सरकार ने महाराजा हरिसिंह पर दवाब डाला कि वे राज्य छोड़कर बाहर रहें और अपने पुत्र कर्णसिंह को अपनी ओर से रीजेंट बना दें। यह सब महाराजा हरिसिंह के आदेश से संभव हुआ। उस समय कर्ण सिंह की उम्र १८ वर्ष थी। महाराजा हरिसिंह के आदेश में था कि शीघ्र ही कश्मीर की संविधान सभा की व्यवस्था कर राज्य के भावी शासन की रूपरेखा के लिए मसौदा प्रस्तुत करें। इसमें अलग-अलग नामों से कर्ण सिंह राज्याध्यक्ष रहे, पहले रीजेंट, फिर सरदारे रियासत और उसके बाद भारत के राष्ट्रपति द्वारा नियुक्त गवर्नर (राज्यपाल)। करीब १६ साल वे कश्मीर के संवैधानिक प्रमुख रहे; उसके बाद १९६७ में उन्होंने भारतीय संसद् के लिए चुनाव लड़ा और जीते तथा कांग्रेस में शामिल हुए। इंदिरा गांधी के मंत्रिमंडल के वे सबसे कम उम्र के मंत्री नियुक्त हुए। उनका राजनीतिक जीवन गौरवशील रहा। १९४९-१९६७ का समय जम्मू-कश्मीर के लिए बहुत मुश्किलों का रहा। शेख अब्दुल्ला की अहमंन्यता और शेखी बढ़ती रही। सरदार पटेल ने तो शेख की असलियत बहुत पहले पहचान ली थी, पं. नेहरू भी, जिनका शेख अबदुल्ला को समर्थन मिला और जिनके कंधों पर सवार होकर वह अपना स्टेटस बना सका, उनको भी एहसास होने लगा कि शेख अब्दुल्ला क्या कहेंगे और क्या करेंगे, उस पर विश्वास नहीं किया जा सकता। अंत में मौलाना आजाद और रफी अहमद किदवई के परामर्श के बाद शेख को गिरफ्तार करना पड़ा। कितनी खूबी और परिपक्वता के साथ कर्ण सिंह ने समय-समय पर बदलती कठिन परिस्थितियों में अपने कर्तव्यों का निर्वहन किया, पुस्तक के अवलोकन से पता चलता है। इस पुस्तक से जम्मू-कश्मीर के अन्य राजनेताओं के बारे में जानकारी मिलती है, शेख अब्दुल्ला की कलाबाजियों का पता लगता है। मोहम्मद साहब के पाक बाल का हजरत बल दरगाह से गायब होना और फिर मिल जाना, अपने आप में एक विचित्र गाथा है। उसने उस समय देश में ही नहीं, इसलामी दुनिया में तहलका मचा दिया था। समय-समय पर उस काल में कर्ण सिंह प्रधानमंत्री पं. नेहरू को जो पत्र लिखते रहे, वे अत्यंत महत्त्वपूर्ण हैं। खबरों में पीछे क्या हो रहा था, उसका पता चलता है। जम्मू-कश्मीर के राज्याध्यक्ष के रूप में डॉ. कर्ण सिंह की बढ़ती राजनीतिक और बौद्धिक परिपक्वता की भी जानकारी मिलती है। शेख की धमकियों का कैसे उन्होंने मुकाबला किया, क्योंकि वह उम्मीद करता था कि कम उम्र के होने के कारण शेख अब्दुल्ला उनपर अपना दबाव डालकर बिना किसी संवैधानिक नियंत्रण के मनमानी करते रहेंगे। जम्मू के प्रजा परिषद् और डॉ. श्यामा प्रसाद मुकर्जी की असामयिक एवं दुर्भाग्यपूर्ण मृत्यु की चर्चा भी पुस्तक में है। उनको डॉ. मुकर्जी की मृत्यु की सूचना भी राज्य सरकार द्वारा प्राप्त नहीं हुई। लेखक हरबंस सिंह ने डॉ. करन सिंह की अपनी आत्मकथा और पं. नेहरू तथा उनके बीच हुए पत्राचार का पूरा उपयोग किया है। विषय से संबंधित अन्य पुस्तकों और सामग्री का भी उन्होंने इस्तेमाल किया है। तथ्यों को प्रमाण के साथ प्रस्तुत किया है। शेख अब्दुल्ला की स्वेच्छाचारी मनोवृत्ति और निरंकुश शासन की तथ्यात्मक जानकारी पुस्तक में मिलती है, जिनसे साधारणतया जनता अवगत नहीं है। पुस्तक एक ऐतिहासिक अभाव की पूर्ति करती है। पुस्तक और बेहतर होती, यदि अच्छे संपादन की व्यवस्था हो पाती। अब यह आवश्यक है कि इसका हिंदी संस्करण जल्द ही आना चाहिए। लेखक अपने प्रयास के लिए बधाई के पात्र हैं। सही जानकारी के लिए हरबंस सिंह की दोनों किताबों को पढ़ना नागरिकों के लिए आवश्यक है। अतएव कॉलेजों और सार्वजनिक पुस्तकालयों में ये पुस्तकें उपलब्ध होनी चाहिए।

सी.वाई. चिंतामणि

इस माह हम 'साहित्य अमृत' में डॉ. होता का लेख हिंदी के आलोचक आचार्य रामस्वरूप चतुर्वेदी की इतिहास दृष्टि पर दे रहे हैं। जुलाई में उनकी पुण्य तिथि है। दूसरा आलेख इलाहाबाद विश्वविद्यालय के प्रो. हेरंब चतुर्वेदी का सर सी.वाई. चिंतामणि के संबंध में है, जिन्हें हम आज भूल गए हैं। महामना मालवीयजी द्वारा 'लीडर' पत्रिका के वे लब्ध प्रतिष्ठित संपादक रहे। पत्रकारिता के क्षेत्र में उन्होंने जो नैतिक मानक निर्मित किए, वे आज भी अनुकरणीय हैं। वे 'लिबरल पार्टी' के विशिष्ट नेताओं में थे। वे उत्तर प्रदेश (तब संयुक्त प्रांत) में शिक्षा मंत्री रहे, किंतु अपने सिद्धांतों पर दृढ़ता के चलते उन्होंने इस्तीफा दे दिया था। जनता में एक ऐसे स्वयं निर्मित (सेल्फ मेड) व्यक्ति का जीवन अत्यंत प्रेरणादायक है। इलाहाबाद की महिलाओं को मिलने-जुलने की सुविधा आवश्यक है, इसलिए उनकी पत्नी ने मनोरंजन क्लब की स्थापना के लिए पहल की, जो आज भी महिलाओं में सामाजिक जागृति के क्षेत्र में सक्रिय है।

त्रिलोकी नाथ चतुर्वेदी

(त्रिलोकीनाथ चतुर्वेदी)

प्रिया

● **अभिमन्यु अनत**

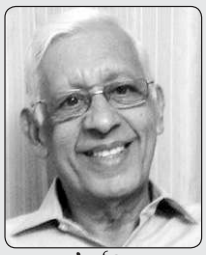

मॉरीशस में हिंदी के सुप्रसिद्ध लेखक। जन्म : ९ अगस्त, १९३७। अठारह वर्ष हिंदी का अध्यापन, तीन वर्ष तक युवा मंत्रालय में नाट्यकला विभाग में नाट्य प्रशिक्षक। दो वर्ष के लिए महात्मा गांधी संस्थान में हिंदी अध्यक्ष और अनेक वर्षों तक संस्थान की हिंदी पत्रिका 'वसंत' के संपादक रहे। 'लहरों की बेटी', 'मार्क ट्वेन का स्वर्ग', 'फैसला आपका', 'मुड़िया पहाड़ बोल उठा', 'और नदी बहती रही', 'आंदोलन', 'एक बीघा प्यार', 'जम गया सूरज', 'तीसरे किनारे पर', 'चौथा प्राणी', 'लाल पसीना', 'तपती दोपहरी', 'कुहासे का दायरा', 'शेफाली', 'हड़ताल कब होगी', 'चुन-चुन चुनाव', 'अपनी ही तलाश', 'पर पगडंडी मरती नहीं', 'अपनी-अपनी सीमा', 'गांधीजी बोले थे', 'शब्द भंग', 'पसीना बहता रहा', 'आसमान अपना आँगन', 'अस्ति-अस्तु' (उपन्यास); 'एक थाली समंदर', 'खामोशी के चीत्कार', 'इनसान और मशीन', 'वह बीच का आदमी', 'अब कल आएगा यमराज' (कहानी-संग्रह); 'विरोध', 'तीन दृश्य', 'गूँगा इतिहास', 'रोक दो कान्हा' (नाटक); 'गुलमोहर खौल उठा', 'नागफनी में उलझी साँसें', 'कैक्टस के दाँत', 'एक डायरी बयान' (काव्य) चर्चित। इसके अतिरिक्त एक प्रतिनिधि संकलन, एक अनुवादित पुस्तक तथा दो संपादित ग्रंथ प्रकाशित। मॉरीशस के कला एवं संस्कृति मंत्रालय द्वारा साहित्य के क्षेत्र में अपूर्व योगदान हेतु राष्ट्रीय सम्मान से विभूषित। ४ जून, २०१८ को उनका निधन हो गया। यहाँ हम उनके सद्यः प्रकाशित उपन्यास 'प्रिया' का एक अंश प्रस्तुत कर रहे हैं।

बेलमार के लंबे और विस्तृत समुद्र तट के पूर्वी और उत्तरी प्रांतों में, गोरे धनपतियों के आलीशान बँगले एक छोर से दूरे छोर तक फैले हुए थे। सरकारी जमीन पर अधिकार पाने का यह सिलसिला देश की स्वतंत्रता से बहुत पहले शुरू हो गया था। शायद ही कोई ऐसा तट रहा हो जो इन धनपतियों की बपौती न बना। और बहुत बाद में जहाँ-तहाँ भारतीय वंश के लोगों ने भी छोटे-बड़े बँगले समुद्री इलाके में बनाने शुरू किए। देश की आजादी को भारतीय मूल के लोगों का राज्य माने बैठे कई गोरे लोग अपनी फैक्टरी, जमीन-जायदाद और बँगले तक बेचकर ऑस्ट्रेलिया तथा अन्य देशों की ओर जाने लगे थे। इसी दौरान भारतीय वंश के कुछ खुशहाल लोगों ने इस मौके का फायदा उठाकर उनके बँगले खरीद पाने की हिम्मत की थी।

इतना बड़ा साहस और इतनी औकात न तो प्रिया का बाप कर पाया और न ही अविनाश का दादा। फिर भी कुछ कदम आगे बढ़ाने की कोशिश दोनों परिवारों ने जरूर की। दादा-दादी की बनाई झोंपड़ियों की जगह उन लोगों ने उससे बेहतर मकान बनाने के प्रयत्न किए। उन दिनों यह दोनों परिवार बेलमार से कोई किलोमीटर भर के फासले पर मारलाशो गाँव में रहते थे।

समय ने करवट ली और आजादी के बीस साल बाद प्रिया और अविनाश के परिवार बेलमार के समुद्रतट के सामने रास्ते पार जमीन खरीद पाए और वक्त के साथ बँगले न सही पर घर बना पाए। प्रिया का बाप अविनाश के बाप की तरह सीमेंट का घर तो नहीं बना पाया, फिर भी टीन की छाजन वाला मारलाशो वाले घर से बेहतर घर बना पाया था।

घर के पिछवाड़े में प्रिया के बाप ने खेती-बारी भी शुरू की थी, जो इन दिनों जंगली घास-फूस से भरी हुई रहती है। अविनाश के घर पिछवाती वाले भाग में उसके बाप ने फलों के जो पेड़ लगाए थे, वे आज भी फलों से लदे रहते हैं।

अविनाश की दोनों बहनों के साथ प्रिया ने भी आम के पेड़ से लटके झूले में झूलकर बचपन को पार किया और आज भी कभी-कभार सहेलियों के साथ झूले का आनंद लेना नहीं चुकती।

देविका आँगन बुहार रही थी जब उसने प्रिया को दोनों हाथों में एक-एक डोल लिए आते हुआ देखा। अपनी कमर को सीधा करके उसने प्रिया को करीब आ जाने दिया। वह जब एकदम उसकी बगल में आ खड़ी हुई तो देविका ने हैरत के साथ पूछा—

— सुबह-सुबह डोल लिए कहाँ जा रही हो?

— तुम्हारे नल से पानी भरना है।

चेहरे पर कुछ अधिक ही हैरत का भाव लाकर देविका ने कहा—

— तुम्हारे नल को क्या हुआ?

— बंद कर दिया गया है।

— बात समझ में नहीं आ रही।

— जल विभाग के कमर्चारी कल शाम हमारे नल के मीटर में ताला लगा गए।

— ओह! समझी। इसका मतलब है कि लोचन भैया ने फिर···।

— माँ ने रुपए दिए थे पर भैया बिल न चुकाकर उस पैसे से गाँजे···।

— ऐसा तो वह पहले भी···।

— हाँ देवी। उसने ऐसा तीसरी बार किया है। अब जब तक पानी विभाग के दफ्तर में जाकर बिल नहीं भरेंगे तब तक उसकी इस हरकत का परिणाम तो भोगना ही पड़ेगा। बुढ़ापे का भत्ता माँ को तीन दिन बाद ही मिलेगा तब तक यह सजा झेलनी पड़ेगी।

दोनों में बातें हो ही रही थीं कि अविनाश रात की नौकरी के बाद मोटर साइकिल पर सामने आ गया। अपनी मोटरसाइकिल से उतरते हुए उसने कहा—

— प्रिया! प्लीज यह मत कहना कि लोचन ने फिर से···।

प्रिया हामी भर पाती कि उससे पहले देविका बोल गई—

— तीन दिन तक प्रिया के घर पानी नहीं आएगा।

मोटरसाइकिल स्टैंड के सहारे खड़ी करके उसने प्रिया से कहा—

— पर तीन दिन काहे को? आज ही वाटर अथॉरिटी के दफ्तर जाकर अदायगी करके आज ही पानी खुलवा सकते हैं। अभी इस वक्त तो दफ्तर खुला भी नहीं होगा।

— लेकिन भैया, यह काम तुम ही को करना होगा।

— ठीक है। ऐसा करते हैं कि तुम बिल और रुपए ले आओ। मैं झटपट नहाकर बिल चुका आता हूँ।

— लेकिन!

— लेकिन क्या देवी?

— चाची को अपनी पेंशन गुरुवार को मिलेगी।

— क्यों प्रिया, बिल कितने का है?

— तीन महीने का है। चार सौ पच्चीस रुपए।

माथे पर हथेली मारकर अविनाश ने कहा—

— हद कर दी इस लोचन के बच्चे ने। खैर, तुम बिल ला दो प्रिया। मैं चुका देता हूँ। बाद में चाची से ले लेंगे। उधर से लौटकर मैं लोचन की खबर लेता हूँ। चाची एकदम सही कहती रहती हैं कि उग्रसेन के कुल में कंस पैदा हो गईल।

जिस तरह विविध प्रकार के व्यंजन मेज पर सज गए थे, उसी तरह बोतलें भी भिन्न-भिन्न तरह की थीं। किसी ने व्हीस्की चुनी तो किसी ने बीयर और कुछ दूसरे लोगों ने देशी रम की माँग की। दो-तीन दौर तो बड़े शांत वातावरण में चलते रहे। इसके बाद खाने-पीने से कहीं अधिक बातें होने लगीं और चूँकि उन पंद्रह लोगों में कोई भी पुलिस की वरदी में नहीं था, इसलिए बड़े खुले ढंग से बातें चलती रहीं। शुरु-शुरु में फुटबाल पर बहस होती रही, फिर बात राजनीति तक आकर ही रही।

मोटरसाइकिल को आँगन में ही छोड़कर अविनाश घर के भीतर चला गया। अपने हाथ के झाड़ू को अमरूद के पेड़ के सहारे रखकर देविका ने प्रिया के हाथ से एक डोल खुद ले लिया। दोनों नल के पास पहुँचीं। देविका ने पहले प्रिया को अपने हाथ के डोल को भरने दिया, फिर अपने हाथ के डोल को भर चुकने के बाद कहा—

—चलो।

दो चार कदम चलने के बाद देविका ने पूछा—

—लोचन भैया घर ही पर हैं?

—बस चाय पी और घर से बाहर हो गया।

: दो :

सुबह की ब्रिफिंग के दौरान चीफ इंस्पेक्टर ने कमरे में मौजूद स्टाफ के सदस्यों से पूछा—

—हमारे बीच के लोगों में आज एक व्यक्ति का जन्मदिन है। कौन बता सकता है किसका?

एक से अधिक स्वर एक साथ गूँज उठे—

—अविनाश का।

फिर तो लोग एक-एक करके अविनाश को बधाई देते रहे। यह तय हुआ कि रात में पार्टी तो होनी ही है। उस अफसर का घर चुना गया जो पुलिस स्टेशन के सब से करीब था। यह प्रस्ताव भी मान लिया गया कि घरवाले पर सारा बोझ न छोड़कर सभी मित्र अपनी-अपनी ओर से कुछ लेकर ही पहुँचें।

मीटिंग के खत्म होने से पहले चीफ ने अविनाश से कहा—

— यार तुमने यह तो बताया ही नहीं कि आज तुम कितने साल के हो गए।

अविनाश बताने ही वाला था कि उससे पहले एक कांस्टेबल बोल उठा—

— लड़कियों की तरह तीस का बीस मत कर जाना।

सभी हँस पड़े। अविनाश भी हँस पड़ा और बोला—

— सत्ताईस।

सभी से सात बजे कांस्टेबल हेमराज के यहाँ पहुँच जाने को कहा गया। पर लोग पहुँचते रहे आठ बजे तक।

जिस तरह विविध प्रकार के व्यंजन मेज पर सज गए थे, उसी तरह बोतलें भी भिन्न-भिन्न तरह की थीं। किसी ने व्हीस्की चुनी तो किसी ने बीयर और कुछ दूसरे लोगों ने देशी रम की माँग की। दो-तीन दौर तो बड़े शांत वातावरण में चलते रहे। इसके बाद खाने-पीने से कहीं अधिक बातें होने लगीं और चूँकि उन पंद्रह लोगों में कोई भी पुलिस की वरदी

में नहीं था, इसलिए बड़े खुले ढंग से बातें चलती रहीं। शुरू-शुरू में फुटबाल पर बहस होती रही, फिर बात राजनीति तक आकर ही रही।

कोई एक राजनीति के नेताओं के बारे में अपनी नापसंदी जताता रहा तो कई उनके पक्ष में गुनगान कर उठा। जिस व्यक्ति को कुछ ज्यादा चढ़ गया उसने बड़े साहस के साथ बोलना शुरू किया—

···ये सभी हरामी हैं। वोट माँगते समय तो हाथ जोड़े हुए आते हैं और जब मिनिस्टर बन जाते हैं तो भेड़ से शेर बन जाते हैं। डटकर खाने-पीने वाला एक मंत्री हमसे कहता है कि देश की हालत खराब हो रही है। ओसटिरिटी की जरूरत है। उसके बगल वाले ने पूछा—

— यह ओसटिरिटी क्या होता है?

दूसरे कहा—

— संयम और सादगी।

लंबी मेज के दूसरे छोर से कोई कह गया।

— साले खुद खबोर की तरह खाते-भकोसते रहते हैं। हवाई जहाज से दुनिया के चक्कर काटते रहते हैं और हमें सादगी के साथ जीने को कहते हैं। एक अपने हाथ में गिलास थामे खड़ा हो गया।

— मेरे इलाके का मिनिस्टर कहता है कि अभाव की जिंदगी से बचने के लिए हमें अब मकई और कंद बोने और खाने चाहिए।

— और वे खुद बासमती खाते रहेंगे।

— हमारी आजादी के बीस साल से अधिक हो गए और···और···क्या बोल रहा था मैं?

अविनाश के ठीक सामने बैठे अफसर ने कहा—

— मैं तो राजनेताओं से कहीं अधिक गए-गुजरे कुछ पत्रकारों को मानता हूँ। ये लोग आज हमारी आजादी का फायदा उठा रहे हैं, जबकि आज से बीस साल पहले ये आजादी के खिलाफ थे। इनके संपादक तक आजादी को स्वीकारने को तैयार नहीं थे।

— आज ये ही लोग चौरंगे फहराते अपने को देशभक्त बताने लगे हैं। महफिल बारह बजे रात तक चलती रही। बीच में पुलिस स्टेशन से फोन आ गया कि सड़क पर एक भारी दुर्घटना हो गई है। चीफ का इशारा पाकर एक सार्जेंट ने छोटा सा उत्तर दिया—

— सँभाल लो यार।

: तीन :

प्रिया जब जनमी थी तो उसकी कलाई में दो इंच लंबे एक दाग को देखकर उसकी माँ चकित हुई थी। उसने तत्काल आँखों में हैरानी का भाव लिए धाई से पूछा था—

— धाई माँ! यह दाग क्यों?

धाई ने मुसकराकर कहा था—

— यह एक निशान है।

— कैसा निशान?

— इसे तुम शुभ निशान मानो।

— क्या यह हमेशा बना रहेगा?

— कुछ निशान वक्त के साथ मिट जाते हैं, कुछ बने रहते हैं।

कई घंटे बाद जब सरोजा के पति ने भी उस निशान के बारे में अपनी माँ से सवाल किया था तो उसने कहा था—

— मेरी बहू की किसी इच्छा के न पूरा होने का चिह्न है।

— यह क्या बात हुई माँ?

— ऐसा होवे ला बेटा। जब लड़कियन माँ बनने के होवेली त ऊ लोगन के मन में कोई खास चीज के इच्छा जागेला। अरे हाँ अब बात एकाएक समझ में आ गईल।

— यह बात तो मुझसे भी कई बार कही थीं पर उस वक्त आम का मौसम होता तब तो।

— बस हये खातिर ओकर मन में इच्छा बनल रहल और लयका के हाथ में हमार पतोह के इच्छा न पूरा होय के निशान ह।

बचपन में तो प्रिया ने अपनी हथेली के इस निशान को कोई खास अहमियत दी ही नहीं थी। लेकिन बड़ी हो जाने पर वह इस निशान को देखकर एक गहरी सोच मे डूब जाती थी।

और एक दिन —

समुद्र किनारे बालू पर देविका के साथ बैठी वह अपनी कलाई के उस दाग को देखती रही और अचानक अपनी जगह से खड़ी होकर बोल उठी थी—

— संकटमोचन मंदिर···।

उसकी इस अधूरी बात और उसकी खोई हुई सी हालत को देख देविका भी अपनी जगह से उठ खड़ी हुई थी। उसने प्रिया से पूछा—

— क्या सोचने लगी?

प्रिया अपनी हथेली के निशान चुपचाप देखती रही, फिर धीरे से बोली—

— संकटमोचन मंदिर के आँगन में···याद आ गई।

— संकटमोचन का मंदिर? क्या मतलब?

— मैं अपने डपता के साथ संकटमोचन का मंदिर देखने गई थी।

— कहाँ है यह संकटमोचन का मंदिर?

— बनारस, काशी में और कहाँ? मेरे बाप केले खरीदकर मंदिर के आँगन के बंदरों के झुंड को दे रहे थे। मैंने जब उनसे कहा कि मैं भी बंदरों को केले खिलाऊँगी तो मेरे बाप ने मेरे हाथ में दो केले थमा दिए थे। मैं केले बंदरों तक फेंकने ही वाली थी कि एक बंदर ने छलाँग लगाकर मेरे हाथ से दोनों केलों को हड़प लिया था। उसकी उस हरकत से मेरी कलाई उसके नाखून से खुरच गई थी।

देविका पूछ बैठी—

— सपना देखा था?

— नहीं तो।

देविका आँखों में हैरत लिये प्रिया को देखती रह गई थी।

नींद भर सोए

● **विजयशंकर पांडेय**

''मैनेजर साहब! नमस्ते!''

''नमस्ते भाई, नमस्ते, बोलो क्या कहना है?''

''हुजूर! हमारे भाई का बिरधा पेंशन साल भर से खाता में नहीं आवत है, का बात हौ?''

''तुमने आधार कार्ड का कॉपी बैंक में जमा किया था क्या?''

''नाहीं, आधार कार्ड कहाँ बा।''

''क्यों, प्रधानजी बताए नहीं थे क्या?''

''बताया था साहब, भला अधार कार्ड बनावेवाला आदमी पीछे सौ रुपया जमा करावत रहा, हम सात सौ रुपया कहाँ पाता?''

''तौने से हमके अधार कार्ड नहीं मिला।''

''तो मैं तुम्हारी मदद नहीं कर सकता। बिना आधार कार्ड के पैसा खाता में जमा नहीं होगा।''

खन्नू घर आते समय मन में सोचा कि पंडित बाबा के घर चलकर कुछ पैसा माँग ले।

''चच्चा, ए चच्चा!''

''क्या है खन्नू? चाचा नहीं हैं।''

''चाची कुछ काम करे के हो त बता दिहल जाए!''

''क्यों, आज बाजार में काम नहीं मिला क्या? तभी इधर दर्शन दिए हो।'' चाची ने कहा।

''हाँ चाची, बालू, मिट्टी के महँगाई से जियादातर मालिक काम बंद कर दिया है। दस दिन हो गयल, काम नाहीं मिला, ठेकेदार पैसा नाहीं देता है। कहता है कि मालिक काम बंद किया है तो पैसा कहाँ से देगा!''

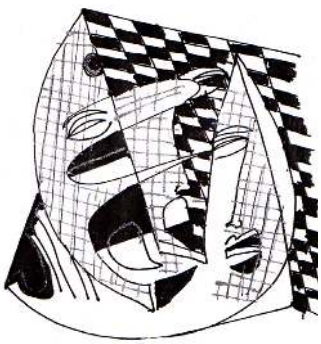

''अच्छा, जाओ गोशाला साफ कर दो, भैंस को पोखरी में नहलाकर छाँए में बाँध दो।''

चाची मन में बड़बड़ाई, 'जब आवश्यकता होती है, तब नहीं आता है। पैसे की जरूरत होगी, तभी आया है।'

आजी बीच में टोकी, ''अरे, उसे कुछ पानी पीने को दे दो!''

''अरे, काम करके आएगा तो देंगे। आपको तो बस देने की पड़ी रहती है।''

आजी चुप हो गईं।

सेवा-निवृत्त अभियंता एवं लेखक। अब तक 'रोजगार' (हिंदी कहानी-संग्रह), 'गाँव क बात', 'गुलेल' (भोजपुरी कहानी-संग्रह), 'विप्लव', 'देश खातेर' (भोजपुरी उपन्यास)। कुछ पुस्तकें प्रकाशन के क्रम में।

कुछ देर बाद खन्नू लौटा।

''चाची भईस नहला दिहली, सफाई कर दिहली।''

''अच्छा ठीक है, लो पानी पी लो।''

चार रोटी खन्नू चार कौर में चट कर गया।

''खन्नू, अब जाओ, चाचा आएँगे, तब आना।''

''चाची! कुछ पइसा चाहत रहा।''

''हाँ, मैं जानती थी, तुम बिना अपने मतलब के दर्शन नहीं देते, काम पर बुलाओ तो बहाना मार देते हो।''

''नाहीं चाची, बहुत अड़से पड़ा हई, तब आवा है। दू दिन से लइका कुछ खाय नहीं है। ओहर गेहूँ कटाई में कुछ अनाज मिला रहा, तब खर्ची चलत रहा। लइका अउर सुमनी मिल के कुछ कटल आलू बिनले रहलन, कुल करीब डेढ़ मन आलू इकट्ठा कइले रहलन। अब त आलू कोई आदमी से खोदावत नाहीं बा, ट्रैक्टर हो गयल हौ, ओसे आलू बहुत कटेला। अधिया पर किसान बिनावेलन। अइसहीं बाल बिन के तीन पसेरी दाना इकट्ठा कइले रहलन। एही सब से तीन महीना खर्ची चलल है। पैखाना बनावे बदे परधानजी छह हजार रुपया दिहले रहलन। ओही से लइकन के, सुमनी के, भाई के, हमके जाड़ा क कपड़ा खरीदा।''

''तो पैखाना तुम्हारा नहीं बना?''

''नाहीं चाची, हमारा नाहीं, कई लोगन का नाहीं बना। खाली पोखरी के किनारे गड़हा खोदा गया, ओही का फोटो खींच के ब्लॉक में सिकरेटरी साहब भेज दिया है।''

''पोखरी के किनारे क्यों?'' चाची ने उत्कंठा बस पूछा।

''त घरे जगाहाँ कहाँ बा चाची!''

''तो पोखरी तो सूख गई है, उसमें पानी कहाँ है? पैखाना में पानी

कहाँ से डालोगे?''

''चाची, पैखाना बना कहाँ बा, गाँव में भिनसहरा, अउर साँझी के मर-मैदान करे में सिटी बजाएवाले आफत किया है।''

चाची हँसकर रह गईं। ''देखो मोदीजी, योगीजी, क्या कर पाते हैं। यहाँ के लोगों को सुधारना इतना आसान नहीं है। भ्रष्टाचार समाप्त करना बहुत कठिन है। नस-नस में भ्रष्टाचार समाया है। बड़े-बड़े अफसर भ्रष्ट, विधायक, मंत्री भ्रष्ट, गुंडा-बदमाश हैं तो देश कैसे सुधरेगा?''

चाची के चुप होते ही खन्नू चालू हो गया।

''एक महीना कचालू खायल गयल हौ, छेमी तोड़ाई में मटर मिल जात रहा चालीस रुपया लइकन के, साठ रुपया सूमनी के।''

''तुम्हारी माताजी को?''

''माई को लौकत नाहीं है, छेमी तोड़ नाहीं पाती है। रामजीत भइया के खेत में निरौनी कर देत है, जवने से टमाटर, भंटा, धनिया, मिरचा मुफत में मिल जात है। माई को दोपहर को दोपहर निमोना भात, चाहे रोटी तरकारी मिल जाता है। रात में माई नाहीं खाता है।''

''खन्नू, तुम भी तो कमाते हो?''

''हाँ चाची, तो हमारा भी तो खर्चा है, हित-नात, आना-जाना, शादी-बिआह, मरनी-करनी सबकुछ देखना पड़त है।''

''खन्नू, कोटा से भी तुमको गल्ला मिल जाता होगा?''

''अरे चाची, कोटा के गल्ला का हाल, कुछ मत पूछीं!''

''काहे, क्या बात है?'' अनजान बन के चाची ने पूछा।

''अरे, ऊ कभी पाँच किलो गेहूँ, पाँच किलो चावल देत है, कभी नाहीं देत है। कहत है कि गल्ला नाहीं मिला। गाँववाले मिल के तहसील पर शिकायत कइलन, दू महीना कोटा दूसरे को मिला, फिर साहब के रुपया-पइसा दे के अपने इहाँ करा लिया। अब केहू क हिम्मत नाहीं हौ। ऊ अपने मन से कभी देत है, कभी नाहीं देत। परधानो कुछ नाहीं कर पाया। कलेक्टर, मंत्री सबको दरखास दिया है। अब लोग हार मान गया है।

''मखंचुआ पंजाब चले के कहत रहा, भला हमारे पास पैसा नाहीं था। जवने से हम नाहीं गया। ऊ छह हजार रुपया वहाँ से कमा कर लाया, ओका परधानजी को दे दिया। अब ओका घर खातिर पैसा मिलेगा। ओकरे पास अधार कार्ड है।''

''घर बनाने के लिए कितना पैसा मिलता है?'' चाची ने जानना चाहा।

''कुल एक लाख बीस हजार रुपया मिलता है। जवने में से बीस हजार सब अफसर लोग को देत है।''

''खाते में पूरा पैसा आता है, वह न दे तो?''

''कैसे नहीं देगा चाची! पहले कबुलवा लेत हैं।''

''पहिलका साठ हजार का किस्त आता है, उसमें सेमा, ईंटा, सीमेंट राँगा बालू परधान का होता है। लेबर घरवाले का।

''बाद में दूसर किस्त आता है, उसमें स्लैब पड़ता है। न खिरकी न दरवाजा, न प्लास्टर, आधा-अधूरा बनत-बनत परधान कहता है कि सब पैसा खर्च हो गया।''

चाची ने खन्नू के ऊपर दया कर सौ रुपए का एक नोट पकड़ा दिया।

रुपया पाते ही खन्नू सीधे बाजार की ओर लपका। कुछ आटा, नमक, तेल, माचिस, सुरती और गाँजा खरीदा। शेष बीस रुपया का भट्ठा पर दारू पिया। पान खाया। सामान की गठरी लेकर लड़खड़ाते हुए घर आया। रास्ते भर ग्राम प्रधान को, कोटावाले को, आधार कार्ड वाले को, सरकार को गाली देता रहा। गिर जाता, फिर उठता और चल देता। सबको देख लेने की धमकी देता। इस तरह गिरते-परते घर आया। घर आते ही जोर से चिल्लाया, ''ले रे सुमनी, गठरी पकड़ो, मुझको सोना चाहता है।''

ऐसा कहकर नीम के पेड़ के नीचे झिलहगटी बसखट पर धड़ाम से घस गया।

राम मोहन भैया अपने खेत से टमाटर उखाड़कर मेंड़ पर रख दिए थे, उसी में से करीब एक पसेरी टमाटर तोड़कर सुमनी लाई थी। करीब-करीब आधा टमाटर बच्चा लोग कच्चा ही चट कर गए थे।

आधा बचा था। उसी का आलू के साथ तरकारी सुमनी ने बनाया।

कचालू खाते-खाते सब ऊब गए थे। कई दिन बाद तरकारी रोटी खाने को मिली। उस रात सब लोग नींद भर सोए।

गुंजन कुटिया, नारायणी विहार कॉलोनी
चित्तईपुर, सुंदरपुर, वाराणसी-२२१००५
दूरभाष : ०९४५१८८११०९

स्वच्छता अभियान

लघुकथा

• विनोद शंकर गुप्त

मार्च का महीना था। बसंत ऋतु में पतझड़ होता है। मैं सुबह घूमने जा रहा था। अधिशासी अभियंता के बँगले के लॉन और उसके आस-पास एक महिला झाड़ू लगा रही थी। मैंने उन्हें देखकर कहा, ''अरे बहनजी! आप इतने बड़े अधिकारी की पत्नी होकर झाड़ू लगा रही हैं? यह काम तो माली और सफाई कर्मचारी का है!'' उन्होंने कहा, ''मैं जान-बूझकर झाड़ू लगा रही हूँ, मेरे कंधों में दर्द रहता है और झाड़ू लगाने से कंधों की कसरत हो जाएगी।'' मैंने कहा, ''लगता है, प्रधानमंत्रीजी के स्वच्छता अभियान में आप सहयोग कर रही हैं!''

ए-३, ओल्ड स्टाफ कॉलोनी,
जिंदल स्टेनलैस लि.
ओ.पी. जिंदल मार्ग, हिसार
दूरभाष : ९४१६९९५४२२

एक महीना ऐसा भी...

• मालती शर्मा

समय की, संवत्सर वर्ष की, सौर और चाँद गणनाद पद्धति में समानता लाने के लिए किसी महीने में दो तिथियों के एक, जैसे कभी चौथ-पंचमी, कभी एकादशी-द्वादशी एक हो जाती हैं, इस तरह होने से बचे तीन वर्ष की तिथियों के समय को मिलाकर खगोल और ज्योतिष शास्त्रियों ने बारह महीनों की रचना से बचे समय को एकत्र कर वर्ष में तीन वर्ष के अंतराल से एक १३वें अतिरिक्त मास—'अधिक मास', 'मलमास', 'पुरुषोत्तम मास', 'लोंद का महीना' की रचना की है।

तीन वर्ष के अंतराल से पड़ते वर्ष के इस अधिकमास की खगोलीय ज्योतिषीय अवधारणा पर श्री पी.बी. काणे के 'धर्मशास्त्र का इतिहास' ग्रंथ में अत्यंत विस्तार से विचार किया गया है और अधिकमास की इस अवधारणा के सूत्र वैदिक युग में भी विवेचित हैं।

गौरतलब यह भी है कि अंग्रेजी काल गणना में जो 'लीप ईयर' का समय लीप ईयर में फरवरी माह में एक दिन बढ़ता है, जो २८ की जगह फरवरी २९ दिन की होती है, भारतीय काल गणना में वह ३ वर्ष में बढ़कर एक माह, 'अधिक मास' हो जाता है।

तीन वर्ष बाद का यह १३वाँ महीना देश के विभिन्न प्रांतों में इसके 'मलमास', 'अधिक मास', 'पुरुषोत्तम मास' 'खलमास', 'डोंडामास' (महाराष्ट्र) 'लोंद का महीना' कई नामों से जाना जाता है। पर देश भर में तीन वर्ष बाद पड़नेवाले इस अतिरिक्त माह की पहचान 'अधिकमास' और 'पुरुषोत्तम मास' से है। 'लोंद का महीना' यह तो सिर्फ पश्चिमी उत्तर भारत, विशेषत: ब्रजक्षेत्र में कहा जाता है। ठेठ ग्रामीण लोक में तो यह 'मलमास', 'लोंद का महीना' ही कहा और जाना जाता है। पर लोंद का महीना अधिक मास का ही नाम है, कोशों में 'लोंद' का अर्थ अधिक मास दिया है।

लोकजीवन में लोक परंपरित अवधारणाओं की संरचना का सुस्थापित तथ्य यह है कि उनके निर्माण में शास्त्र, पुराण और लोक प्रचलित कथा-कहानियों-किंवदंतियों का न्यूनाधिक योग रहता है और वे मूल अवधारणा की संरचना में लोकजीवन में भिन्न-भिन्न प्रतिक्रिया-मिथकीय अर्थ लिये बहुआयामी विस्तार पाती हैं। अधिक मास, मलमास की अवधारणा-संरचना भी कोई अपवाद नहीं है। तीन वर्ष बाद आते ज्योतिष, खगोलीय शास्त्र सम्मत अवधारणा लिये इस माह के पौराणिक संदर्भों के अनुसार वर्ष के इस १३वें माह की रचना स्वयं भगवान् ने हिरण्यकशिपु के वध के लिए की थी, क्योंकि उसे १२ महीनों में न मरने का वरदान मिला हुआ था।

सुप्रसिद्ध वरिष्ठ लेखिका। कविता, लोकवार्त्ता, लोक-संस्कृति, समीक्षा, बाल साहित्य तथा अद्यतन सामाजिक-राजनीतिक विषयों पर विगत अड़तालीस वर्षों से अनवरत लेखन। प्रमुख पत्र-पत्रिकाओं में लगभग नौ सौ से अधिक रचनाएँ प्रकाशित, विविध संग्रहों तथा शोधग्रंथों में शामिल। छोटे-बड़े कई दर्जन पुरस्कार-सम्मानों से अलंकृत। संप्रति लेखन में रत।

जैसा कि पौराणिक संदर्भ है कि भगवान् ने वर्ष के १२ महीनों के अलावा हिरण्यकशिपु को मारने के लिए इसकी रचना की तो 'अधिक मास' नाम तो ठीक है, पर इसे 'मलमास' क्यों कहा जाता है? मलमास नाम कैसे पड़ा? जब नाम की शोध में खोजबीन हुई, विद्वानों से चर्चा हुई तो दो मत सामने आए।

कुछ विद्वानों का मत है कि यह १३वाँ महीना ३ वर्ष के १२ महीनों के बचे समय का, काल का मल है, मलिन है, इसलिए इसका नाम मलमास है।

पर मलमास नाम पर मेरी जिज्ञासा के उत्तर में लोककला साहित्य-विज्ञ डी. महेंद्र भानावत ने अपने १६ जनवरी, २०१५ के पत्र में लिखा है—''दरअसल यह 'मल्ल मास' है, मासों का मास, बारह मासों से सवाया, अधिक बलशाली, बलधारी। उच्चारण की सहजता से 'मल्ल' का 'मल' रहकर 'मलमास' बन गया। भाषा वैज्ञानिक भी इससे सहमत हैं।''

भानावतजी का यह मत समीचीन जान पड़ता है। युद्धशास्त्र भी 'मल्लमास' नाम के पक्ष में जाता है।

इस नए बने बिना नाम के माह में पूरे माह भगवान् का राक्षस से युद्ध होता रहा। युद्ध के एक प्रकार 'मल्ल युद्ध' में युद्ध करनेवाले वीर योद्धा को 'मल्ल' कहा जाता है। यह मास शुरू में वीर योद्धा मल्लमास कहलाया, बाद में जैसी कि भाषा वैज्ञानिक प्रवृत्ति है—उच्चारण सुख में शब्दलोप होने की, मल्लमास में से एक 'ल' का लोप होने से वह 'मलमास' कहा जाने लगा और आज सर्वत्र यही नाम प्रचलित है। महाराष्ट्र में कसरत का एक रूप मल्लखंभ, मलखंभ है। डॉ. भानावत ने इस प्रक्रिया का बहुत विस्तार से विवेचन करते हुए अपने परिवार

का उदाहरण दिया कि कैसे उनके दादाजी, पिताजी जीत मल्ल, प्रताप मल्ल से जीतमल, प्रतापमल हो गए। और पत्र पढ़ते हुए मेरे ध्यान में तुरंत संविधान वेत्ता लक्ष्मीमल सिंघवी आए जो कि पहले लक्ष्मीमल्ल सिंघवी ही थे।

किंतु वास्तविक नाम 'मल्लमास' ही रहा हो, लोकजीवन में १३ संख्या अधिक मास से जुड़ी हिरण्यकशिपु के वध, १२ महीनों के मल से बनी मलिनता की अपवित्रता की अवधारणा के कारण यह मलमास मलिनमास खलमास बना, ब्याज मास बना। इस पूरे मास में कोई भी शुभ कार्य नहीं होता था, सब इस महीने को दुरदुराते, यह संवत्सर से बाहर भटकता फिरता, लोकजीवन की उपेक्षा सहता रहा, तब लोक परंपरा कहती है कि यह भगवान् के पास गया और उनसे अपनी व्यथा कही। रोया कि आपने मुझे कैसा बना दिया! सब महीनों के अपने-अपने स्वामी-देवता हैं, पर मेरा कोई स्वामी-देवता नहीं, सब मुझसे नफरत करते हैं। अधिक मास का दुःख सुनकर भगवान् ने उसे हृदय से लगाकर कहा, ''चल, मैं तुझे अपना नाम देता हूँ, अब तू मेरे नाम से 'पुरुषोत्तम मास' कहलाएगा। तू वर्ष का सबसे पवित्र माह होगा। तुझमें जो दान-पुण्य जप-तप, पूजा-पाठ किया जाएगा, उसका पूज्य देवता मैं होऊँगा और उसका सौ गुना फल मिलेगा।''

भगवान् ने अधिक मास, मलमास के पुरुषोत्तम मास होने और स्वयं का नाम उसको देने, उस माह का देवता बनने की घोषणा गीता में 'मासानामं पुरुषोत्तम मास' कहकर की, पर भगवान् का नाम और स्वामित्व, अपरिमित महत्त्व पाकर भी मलमास के मलिन, अशुभ और अशौच होने के पक्ष लोकजीवन से तिरोहित नहीं हुए। आज भी देश भर में अधिक मास में कोई भी मंगलकार्य नहीं होता है। अधिक मास का यह पक्ष भारतव्यापी है और पुरुषोत्तम मास का सौ गुना पुण्यप्रदायी पक्ष भी।

भगवान् ने अधिक मास, मलमास के पुरुषोत्तम मास होने और स्वयं का नाम उसको देने, उस माह का देवता बनने की घोषणा गीता में 'मासानामं पुरुषोत्तम मास' कहकर की, पर भगवान् का नाम और स्वामित्व, अपरिमित महत्त्व पाकर भी मलमास के मलिन, अशुभ और अशौच होने के पक्ष लोकजीवन से तिरोहित नहीं हुए। आज भी देश भर में अधिक मास में कोई भी मंगलकार्य नहीं होता है। अधिक मास का यह पक्ष भारतव्यापी है और पुरुषोत्तम मास का सौ गुना पुण्यप्रदायी पक्ष भी।

हर प्रांत की पुरुषोत्तम मास की दान-पुण्य, पूजा-पाठ की संरचना के अपने-अपने पक्ष हैं; सौ गुना पुण्य लाभ के अपने-अपने रूप हैं। पर दो पक्ष सभी प्रांतों के पुरुषोत्तम मास की अवधारणा के सभी प्रांतों में किंचित् अंतर लिये समान ही हैं, पवित्र स्थलों, तीर्थों में स्नान और परिक्रमा करना तथा ३२ अपूप (संस्कृत) मालपुए, पुए, छेदवाले विशेष लोक व्यंजन 'अनरसे', 'हिस्से', छेद की मिठाइयाँ म्है सूर पाग, घेवर दान करना। इतना न संभव हो तो बताशे ही, जिनमें खूब छेद होते हैं, दान करना।

मेरी छोटी बहिन माधुरी तिक्खा ने बताया कि उनकी सास, श्यामल प्यारी तिक्खा माईथान 'आगरा' पुरुषोत्तम मास में ३२ मालपुए, ३० महीने के ३० दिन के लिए और २ अपने और भगवान् के लिए लाल कपड़े में बाँध काँसे या ताँबे के थाली-कटोरा, जो भी बरतन मिल जाए, उसमें रखकर दामाद को दान करती थीं। महाराष्ट्र में ३२ अनरसे लाल कपड़े में बाँध कभी चाँदी के पात्र में या फिर ताँबे-काँसे के पात्र में रखकर दामाद को दान किया जाता है। अब तो ये थाली-कटोरा स्टील के होने लगे हैं।

दामाद को दान करने के पीछे वासंती सालवेकर ने बताया कि उनके घर में अपनी लड़की होती है, पर लोक का विश्वास है कि दामाद को दान करने का पुण्य २१ ब्राह्मणों को भोजन कराने के बराबर मिलता है। दामाद को दान करने की रीति गुजरात में भी है।

भारतीय लोक परंपरा, लोकजीवन में पुरुषोत्तम मास की दान, पुण्य, धर्म की संरचना के तीन आयाम और उनके प्रांतभेद से विस्तार हैं। दान-पुण्य, पूजा-पाठ, पहले क्रम पर, व्रत और परिक्रमा क्रमशः इनमें से यथासाध्य जो जितना कर सकता है।

मलमास, अधिक मास के पुरुषोत्तम मास और लोंद का महीना, इन दोनों रूपों की प्रामाणिक संरचना की जानकारी इंद्रवती साराचत, गाँव तारापुर, जिला मथुरा और मंजनी शर्मा, गाँव गोपी की नगरिया, जिला मथुरा ने दी है। इंद्रवती ने पुरुषोत्तम मास के दान-पुण्य, पूजा-पाठ, व्रत-परिक्रमा के तीनों आयामों की संरचना की विस्तार से व्याख्या के साथ 'लोंद का महीना' की लोकाभिमुख लोकजीवन की छवि प्रस्तुत की है।

इंद्रवती बुआ का कहना है कि पुरुषोत्तम मास में जलेबी के दान और उनसे तुलसी की परिक्रमा लगाना बहुत ज्यादा, यानी सबसे ज्यादा पुण्यप्रद है। इसका कारण छेद है। पर छेदों की इतनी महत्ता का कोई भी कारण वे नहीं बता सकीं। जैसा कि पहले उल्लेख किया कि दान में छेदों के कारण ही मालपुए, पुए, अनरसे और छेदवाली अन्य मिठाइयों, वस्तुओं का भी महत्त्व है।

दान, पुरुषोत्तम मास के व्रत, पूजा-पाठ, कथा-भागवत परिक्रमा की संरचना में भी जुड़ा है। पुरुषोत्तम मास के पाँच व्रत मुख्य हैं। पूर्णिमा, दोनों पक्षों की एकादशी और चार या पाँच, जितने पड़ें—रविवार। ये व्रत पूर्णिमा को पूरे होते हैं। रूमाल, टोपी समेत लोकपरंपरा में पाँचों कपड़े होना जरूरी है। लोकसाहित्य में भी ये मिलते हैं। कुछ लोग पूरे अधिक मास एकासना, एक समय भोजन का व्रत लेते हैं।

डॉ. विद्याबिंदु के अनुसार पूर्वी उत्तर भारत में पुरुषोत्तम मास में शिवलिंग पर चंदन-रोली, हल्दी किसी से भी बिल्वपत्र पर रामनाम लिखकर चढ़ाते हैं। बिल्वपत्रों की संख्या ११, २१, ५१, १०८ श्रद्धानुसार रहती है। लिखे हुए ये बिल्वपत्र शिवलिंग पर नित्य पूजा के साथ ही

चढ़ाए जाते हैं। कितने दिन तक, यह भी व्रत लेनेवाले की इच्छा पर निर्भर होता है, पर ११ से कम नहीं।

अधिक मास पुरुषोत्तम मास में दान-पुण्य की वस्तुओं पूजा-पाठ, परिक्रमा आदि की संरचना में देश भर में सभी प्रांतों में काफी समानता है। अधिक मास में दान की प्रमुख वस्तु है—'अपूप' संस्कृत, जिसने देश भर में लोकजीवन में अनरसे, हिस्से, पुए, मालपुए अनेक नाम ग्रहण किए हैं। महाराष्ट्र अनरसे, पश्चिमी-पूर्वी उत्तर भारत के गाँवों में पुए, हिस्से और शहरों में मालपुए दान किए जाते हैं, गुजरात में भी। मिठाइयों में घेवर, खुरमी, म्है सूर पाग, जलेबी, जिनमें जितने ज्यादा छेद हों, उनका दान करना उतना ही ज्यादा पुण्यप्रद है। पर अधिक छेदों की वस्तुओं के दान करने के समर्थन में कोई लोककथा या किंवदंती नहीं मिलती है। संभावना तो मिलने की है। लोक परंपरा की प्रवृत्ति है ही ऐसी।

अधिक मास, पुरुषोत्तम मास में परिक्रमा लगाना भी बहुत पुण्यदायी है। परिक्रमा, जिस क्षेत्र में, जिस प्रांत में जिस तीर्थ की श्रेष्ठता की मान्यता है, लोक में उसी की परिक्रमा करते हैं। काशी में पंचकोशी की, इलाहाबाद में चित्रकूट की, ब्रजक्षेत्र मथुरा-वृंदावन में गोवर्धन पर्वत की परिक्रमा करते हैं। पुरुषोत्तम मास में किसी भी फल-मेवे, यथा किशमिश, बादाम, मखाने, बताशे, मूँगफली लड्डू, मठरी, शकरपारे, पुए से प्रतिदिन तुलसी की १०८ परिक्रमा की जाती है। तुलसी की परिक्रमा तीर्थों की परिक्रमा से ज्यादा पुण्यदायी मानी जाती है। ठीक भी है, तुलसी पुरुषोत्तम प्रिया, विष्णुप्रिया जो ठहरीं! आजकल भक्त लोग परिक्रमा चॉकलेटों से भी लगाते हैं।

पंचकोशी, चित्रकूट, गोवर्धन आदि की परिक्रमा कुछ लोग पाँच पुरुषोत्तम मास लगाने का व्रत भी कर लेते हैं। कुछ एक बार ही लगाते हैं। कुछ, जब तक सामर्थ्य रहती है, लगाते रहते हैं, जब भी अधिक मास पड़े। अधिक मास पुरुषोत्तम मास केवल वैयक्तिक रूप से ही नहीं, सार्वजनिक रूप से भी अत्यंत पवित्र माह मानकर पूजा-पाठ कराने का महीना है। इस महीने में धनी-मानी लोग श्रीमद्भागवत की कथा, अखंड रामायण-पाठ और भजन, कीर्तन कराते हैं। प्रवचन होते हैं। गायों को चारा दिया जाता है। धर्मग्रंथों, पुराणों का पठन-पाठन होता है।

आगरा के पं. डॉ. दामोदर प्रसाद शास्त्रीजी ने 'काल माधव', 'स्मृति कौस्तुभ', 'निर्णय सागर' और कई ग्रंथों तथा 'निर्णय सागर' के १५० वर्षों के पंचांगों का अध्ययन करके अधिक मास की ज्योतिषीय और खगोलीय अवधारणा की कुछ विशेष जानकारी दी है, जो निम्न प्रकार है—

१. अधिक मास ३२ महीने १६ दिन ४ घड़ी बाद पड़ता है।

२. अधिक मास में कोई संक्रांति नहीं होती।

३. अगहन, पूस, माघ और फागुन के महीनों में अधिक मास नहीं पड़ता। उन्होंने यह भी बताया कि पिछले १५० वर्षों के इतिहास में सन् १९८३ में फागुन में मलमास पड़ा था।

४. जब अधिक मास पूरा एक महीना, जैसे पूरा जेठ, पूरा आषाढ़ न पड़कर दो महीनों में आधा-आधा, जैसे आधा कुआर में और आधा कार्तिक में, एक महीने के पहले पक्ष में और दूसरे महीने के दूसरे पक्ष में पड़ता है तो उसे 'संतर्षिमास' कहते हैं, क्योंकि उसकी गति सर्प जैसी टेढ़ी-मेढ़ी होती है। दो माह में पड़नेवाले ऐसे अधिक मास को 'क्षयमास' भी कहा जाता है, क्योंकि इसमें दो महीनों के दो पक्षों में भारतीय लोकजीवन में कोई भी शुभ कार्य नहीं होता।

जिस प्रकार इस १३वें महीने के मलमास, अधिकमास, पुरुषोत्तम मास नामों से जुड़ी पौराणिक और लोक पारंपरिक कथा, कहानियाँ, किंवदंतियाँ मिलीं, वैसी इसे लोंद का महीना कहने, 'लोंद' का अर्थ व्यंजित करती कोई कहानी, जिन क्षेत्रों में यह नाम प्रचलित है, वहाँ से भी बहुत खोज करने पर भी नहीं मिल सकी। पर यह तत्सम, तद्भव नहीं, देशज शब्द है। अर्थ लोक से ही मिलेगा, जब भी मिले। पर 'लोंद का महीना' कहे जाते इस माह में लोंद की पूजा-अर्चना की पूरी संरचना ग्रामीण लोकजीवन में अभी भी मिलती है, शहरों में भी कहीं-कहीं। अवधारणा से जुड़े लोंद के इस पक्ष ने इस माह को मिथकीय अर्थ और रंगीनी दोनों दिए हैं। पर ब्रजक्षेत्र के बनियों और चौबों, चतुर्वेदी ब्राह्मणों में लोंद महीने में किए जाते सामाजिक रीति-रिवाज अभी भी चलन में हैं। महीने की अवधारणा का अंग संरचना है।

'लोंद का महीना' की अवधारणा के साथ जुड़ी इस माह के अँधेरे पाख में किसी कल्पित देवी-देवता का प्रतिरूप स्त्री-पुरुष की आकृति, लोंदरी-लोंदरा बनाना, मुख्य आधारबीज हैं। ग्रामीण लोकजीवन में लोंदरी-लोंदरा की पूजा की विशेष संरचना और शहरी लोकजीवन, विशेषत: ब्रज के बनियों और चौबों में सामाजिक रीति के रूप में उसका विस्तार है।

इंद्रवती सारस्वत और मंजनी शर्मा ने बताया कि ग्रामीण लोकजीवन में अधिक मास के अँधेरे पाख, कृष्ण पक्ष में घरों में किसी भी दिन मीठे आटे के स्त्री-पुरुष की आकृति के 'लोंदरी-लोंदरा' और पुए सेंके जाते हैं। शाम को चार-पाँच बजे के करीब अँधेरा होने से पहले गृहिणी दरवाजे के दाएँ कोरे से पुरुष की आकृति 'लोंदरा' और बाएँ कोरे से स्त्री की आकृति 'लोंदरी' बनाकर चार-चार पुए रख देती हैं। गृहिणी जरा सी हल्दी और पुओं में से जरा-जरा सा तोड़कर लोंदरी-लोंदरा की पूजा करती, चारों ओर पानी घुमाती हैं। घर के लड़के-लड़कियों को पहले से बता दिया जाता है कि लड़के को सीधे कोरे पर रखे और लड़की को बाएँ कोरे पर रखे लोंदरी-लोंदरा और पुए लेकर भागना होता है। जब ये भागते हैं तो गृहिणी हाथ में लकड़ी-डंडा, कहीं-कहीं मूसल लेकर यह कहती हुई 'लोंदरी-लोंदरा भाजि गए, भाजि गए' थोड़ी दूर तक उनके पीछे भागती है। लड़का-लड़की उन पुओं और आकृतियों को खा लेते हैं। गाँवों के संयुक्त परिवारों में यह लोंदरी-लोंदरा लेकर भागने की प्रक्रिया मनोरंजक हुआ करती है।

अपने घर में बच्चे न हों तो आस-पड़ोस के बुला लिये जाते हैं। बच्चों की उम्र १० वर्ष के भीतर होनी चाहिए।

पर इस पूजा की सरंचना का मिथकीय अर्थ खुलने का कोई सूत्र

हाथ नहीं लग सका। मीठे आटे के बने-सिंके, स्त्री-पुरुष आकृति के ये लोंदरी-लोंदरा कौन हैं? इनका कोई स्पष्ट मत नहीं मिला। ज्यादातर उत्तर 'क्या मालूम' में मिले! एक दो ने कहा, ''गणेश-पार्वती हैं'', ''राधा-कृष्ण हैं।'' पर अधिक संभव यही लगता है कि ये लोंदरा-लोंदरी लोंद के महीने का ही प्रतिरूप हैं।

ब्रजक्षेत्र के बनियों और चतुर्वेदी ब्राह्मणों में जिस लड़की की शादी हुई हो या शादी तय हो गई हो और अधिक मास, लोंद का महीना पड़े तो उसकी ससुराल 'लोंद' भेजा जाता है। लोंद में लोंदरी-लोंदरा के साथ सास-ससुर दामाद को कपड़े, फल, मेवे, मिठाई, धान्य भी देते हैं। इसमें मुख्य अ ाकर्षण की वस्तु होती है—समधी-समधिन के रूप में कल्पित लोंदरी-लोंदरा की आकृति, जिनकी हास्य-व्यंग्यात्मक रूप में कौतूहलपूर्ण चुहुल भरी सजावट की जाती है। व्यंग्यात्मक कथन व कूटोक्तियाँ लिखी जाती हैं। यह सब करनेवाले कुछ विशिष्ट दक्ष लोग और शहर में रहते रिश्ते की महिलाएँ 'लड़के की ससुराल से आया लोंद' देखने आती हैं। लोंदी-लोंदरा जिसमें होते हैं, उसकी विचित्र सजावट, कटाक्षपूर्ण व्यंग्योक्तियाँ बड़ा हास-परिहास, चुहुलपूर्ण वातावरण बनाती हैं। उन्हें लेकर उपस्थित महिला समूह समधिन से छेड़छाड़-मजाक करता है।

पर आज भागदौड़ वाली सिमटती जिंदगी और एकल परिवार व्यवस्था में लोंद का यह रिवाज बहुत कम हो चला है। अभी भी कुछ परिवारों में यह रीति चलन में है। अंत में कहूँगी कि अधिकमास की लोक परंपरित अवधारणा संरचना पर अन्य भारतीय भाषाओं में खोज इस अपनी तरह के महीने के व्यक्तित्व को और उजागर करेगी। पर यह कार्य लोकजीवन में से जानकार पीढ़ी के चले जाने से पहले जल्दी-से-जल्दी होना चाहिए।

१०३४/१ मॉडल कॉलोनी
कैनाल रोड, पुणे-४११०१६
दूरभाष : ०२०-२५६६३३१६

गौरैयों के नहीं घोंसले

नवगीत

• शिवानंद सिंह 'सहयोगी'

आने लगी है चिड़िया

छत पर रखे जो दाने
खाने लगी है चिड़िया,
इस घर को घर बनाने
आने लगी है चिड़िया।

पहले थी जिस शहर में
वह छोड़ अब चुकी है,
पेड़ों से रिश्ते-नाते
वह तोड़ अब चुकी है,
चुन-चुन के रोज तिनके
आने लगी है चिड़िया।

वह चाहती है कोई
अपना ठोर-ठिकाना,
सावन को भूल पिछले
फागुन नया बिछाना,
छिप घोंसले की कुटिया
छाने लगी है चिड़िया।

वह आ रही है बाहर
अपने बुरे दिनों से,
वह जानती है लड़ना
विष के बुझे पिनों से,
अब बाज से भी आदर
पाने लगी है चिड़िया।

अंडे परों से अब तो
वह पालने लगी है,
जीने की भिनभिनाहट
लय जानने लगी है,

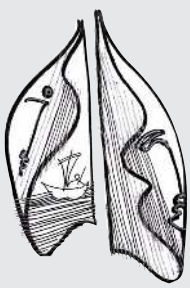

आँगन में चहचहाने-
गाने लगी है चिड़िया।

उड़ते नहीं जटायु

तेरे महादेश में उपग्रह
नहीं कहीं है वायु,
प्राणवायु बिन जीना दुर्लभ
होंगे कहाँ शतायु।
ऊँचे-नीचे पर्वत-टीले
नहीं नीर का नाम,
नहीं नाव नदियों की धारा
नहीं अयोध्या धाम,
नहीं डोलता पेड़ कहीं पर
उड़ते नहीं जटायु।

नहीं महासागर फैले हैं
कहीं न तट-घट शंख,
दूर-दूर तक नहीं दिखे हैं
कहीं मोर के पंख,
गौरैयों के नहीं घोंसले
चिरकुट नहीं चिरायु।

राहु-केतु की उठक-बैठक
दीया कहीं न आग,
आहट नहीं दीवाली की है
राखी-ईद न फाग,
नहीं बड़ा दिन न नया साल है
संकट में अणु आयु।

'शिवाभा', ए-२३३, गंगानगर
मेरठ-२५०००१ (उ.प्र.)
दूरभाष : ०९४१२२१२२५५

उड़ान

• एम.डी. मिश्रा 'आनंद'

जन-समुदाय को वह जब कभी देखता था तो सदैव बचने का प्रयास किया करता। पर अब उसे भीड़ अच्छी लगती है। भीड़भाड़ से घबराहट नहीं होती है, क्योंकि भीड़ का रहस्य वह समझ गया है।

पढ़ाई पूर्ण होने के पश्चात् वर्षों से भटकता अंतरिक्ष अब बेरोजगारों के जमावड़े से ऊब गया। किंतु इसके अतिरिक्त भी तो हर स्थान पर वही वातावरण विद्यमान था। बस के अंदर जितनी सवारियाँ होतीं, उससे अधिक लोग छत पर बैठे होते थे। बड़े त्योहारों पर मेला-ठेला, कुंभ स्नान तथा सोमवती अमावस्या पर चित्रकूट धाम, रेल के डिब्बे के अंदर से अधिक डिब्बों की छत पर स्त्री-पुरुष, बच्चे सवार हो जाते। और ऐसे में जब भी किसी से बात करो तो प्रत्येक व्यक्ति अपनी पीड़ा बखान करता कि क्या करे भाई, अकेले हैं!

राजेश ने कहा कि अब सम्मिलित परिवार रहे नहीं, एकल परिवार हैं, जो निरंतर बढ़ते जाते हैं। शहरों में, बड़ी बस्तियों में रहने को जगह कम पड़ रही है। घर आसमान की ओर बढ़ते चले जा रहे हैं। पच्चीस-तीस मंजिल के भव्य भवन दूर से देखने में बैंक की अलमारी में लाकर्स के खानों जैसे दृष्टिगत होते हैं। प्रातः जन समुदाय उमड़ता है और रात्रि में जैसे पुराने पीपल के पेड़ पर पत्तियों में पक्षी छुप जाते हैं, कुछ वैसा ही हाल गगनचुंबी भवनों का है। पास-पास निवास करने पर भी दूसरा व्यक्ति अपरिचित है।

अंतरिक्ष ने कहा कि राजेश, बहुत सोच-विचार के पश्चात् मैं इस निष्कर्ष पर पहुँचा हूँ कि संघर्ष ही जीवन है। जो कठिन परिस्थितियाँ आपके समक्ष हैं, उन पर विजय कैसे प्राप्त की जाए? सो यह मार्ग ही अपनाना होगा।

हमारे वेद-पुराण, जिनमें अथाह ज्ञान का भंडार है। उस पर दृष्टि डालें, संसार में पृथ्वी का भाग लगभग एक-तिहाई है और इससे दोगुना जल भरा हुआ है। समुद्र का लाभ देव-दानव ने मिलजुलकर उठाया। समुद्र का मंथन किया, जिसके गर्भ से समाज के उपयोग हेतु चौदह रत्न प्राप्त हुए।

राजेश ने कहा कि देवताओं की बात ही क्यों, मानव ने अपने को कितना लाभकारी बना लिया है, भू-गर्भ में छिपे खनिज पदार्थ, जलमार्ग तथा यातायात के साधन निर्मित कर लिये हैं। विचार यह करना है कि इस विशाल जन समूह (भीड़) को लाभकारी कैसे बनाया जाए?

अंतरिक्ष अपने विचारों में खोया बैठा था। एक शोर-शराबा नजदीक बढ़ता आ रहा था। दोनों ने देखा कि सामने सड़क-मार्ग से जन समूह बाजे-गाजे, ढोल-नगाड़े के साथ नाच-गान करता हुआ चला आ रहा है। धीमे-धीमे जब पास आए तो देखा कि एक गौर वर्ण सुंदर व्यक्ति लाल-पीले रेशमी परिधान में माथे पर तिलक-छापा लगाए सफेद घोड़ों की बग्गी पर सवार हैं, जिनके अगल-बगल में उनके अनुयायी शोभा बढ़ा रहे हैं। कुछ भक्त जय-जयकार करते हुए साथ चल रहे हैं। बग्गी के पीछे यजमान नंगे पाँव सिर पर पीले रेशमी वस्त्र में लिपटा पुराण रखे हैं, जिनके पीछे ज्ञान के भूखे धनाढ्य प्राणी चल रहे हैं और महिलाएँ पीले वस्त्र धारण किए सिर पर कलश उठाए हुए हैं।

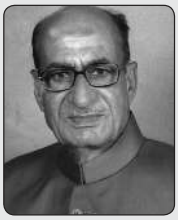

जाने-माने लेखक एवं कवि। प्रमुख कृतियाँ हैं– 'मोक्ष की राह', 'मैं कौन हूँ', 'पंख' (काव्य-संग्रह), 'इंद्रधनुष से रंग जीवन के संग' (कहानी-संग्रह)। आकाशवाणी छतरपुर से काव्यधारा तथा सब टीवी पर कार्यक्रमों का प्रसारण। म.प्र. राष्ट्रभाषा प्रचार समिति भोपाल एवं साहित्य मंडल, नाथद्वारा सहित छोटे-बड़े दर्जनभर सम्मान प्राप्त।

अंतरिक्ष ने एक भद्र पुरुष से पूछ लिया कि सब लोग कहाँ जा रहे हैं? तो उसने बताया कि यहीं पास के ग्राम धरमपुर में श्रीमद्भागवत पुराण विराजमान हो रहा है। उस ग्राम के सेठ अशर्फीलाल ने लाखों रुपए खर्च किए। गाँववालों ने भी सहयोग किया है। इतना बड़ा पंडाल सजाया कि हजारों लोग एक साथ बैठकर कथा श्रवण कर सकेंगे। और जो पंडितजी आए हैं, वे प्रकांड विद्वान् हैं। कथा वाचन कर अभी विदेश से लौटकर आए और यहाँ कथा करने के पश्चात् फिर चले जाएँगे। दस दिवस को पाँच लाख रुपए दक्षिणा पर बड़ी मुश्किल से राजी हुए हैं। आप लोग भी कथा सुनने के लिए आना। बड़े-बड़े कैमरे लगाए जा रहे हैं और टेलीविजन का कोई चैनल भी आ रहा है, जो देश के कोने-कोने में घर-घर में सब दिखाएगा, इससे धर्मपुरा का नाम होगा।

□

अंतरिक्ष कथा सुनने के लिए समय पर उपस्थित हो गया। पंडाल भक्तों एवं कथा प्रेमियों से खचाखच भरा हुआ था। पुरुष और महिलाओं समेत अन्य लोगों के बैठने की अच्छी व्यवस्था थी। जिन्होंने अधिक राशि दान में दी, उन लोगों के लिए मंच के समीप प्रथम गैलरी बनी थी और कैमरा भी बार-बार इन पर फोकस कर रहा था। चारों ओर सन्नाटा! कुछ भक्त भाव-विभोर होकर नृत्य करने लगते। उठ-उठकर

नयन बंद कर तालियाँ बजाते हुए आस-पास बैठे लोगों की चिंता छोड़ नाच रहे थे। जिन्हें कभी नाचते नहीं देखा था, वे भी आज नाच रहे थे। पंडितजी अपनी सुरीली आवाज में भजन गाते हुए तालियाँ बजा रहे थे और सभी श्रोताओं को भी संकेत कर रहे थे। कुछ अंतराल के बाद श्रीमद्भागवत कथा का प्रसंग श्रीराधा-कृष्ण की लीलाओं का वर्णन करने के पश्चात् एक-दो चुटकुले सुनाकर लोगों को खूब हँसाया। कथा समापन पर बड़े दान-दाता मंच पर उपस्थित हुए, इस तरह पंडितजी से आशीर्वाद लेने की प्रतियोगिता चलती रही।

हजारों रुपयों के दान की घोषणाएँ हो रही थीं। जो लोग थोड़ा भी रुपया खर्च करने में कोताही करनेवाले रहे थे, आज प्रसन्नता के साथ धन लुटा रहे थे। अंतरिक्ष के अंतर्मन में यही मंथन चल रहा था कि यह रहस्य ही तो समझने के लिए भटक रहा हूँ मैं कि इस विशाल जन समूह को अपने वश में करने के लिए ऐसा कौन सा मार्ग अपनाया जाए? अंतरिक्ष ने राजेश को अपने मन की पीड़ा बताई।

राजेश ने कहा, ''नौकरी करते जीवन बीत जाता है। बस रोटी, कपड़ा और मकान, इसके अतिरिक्त कुछ नहीं कर पाता आदमी, लेकिन जनता की नब्ज पकड़ ली तो करोड़ों में खेलते देर नहीं लगती है।'' अंतरिक्ष ने कहा, ''यही बात तो मैं भी सोच रहा हूँ, किंतु इसके लिए कोई युक्ति तो मिले!'' ''यह बात तो सही है। देख भाई, कोई ऐसा विषय ढूँढ़ ले, जो अधिक संवेदनशील हो, जनता की सामाजिक माँग और इच्छा हो, सभी को बात अच्छी लगे। अब वर्तमान समय में कुछ मुद्दे हैं, जैसे धर्म, गाय और किसान। बस तीन में से कोई एक पकड़ ले तो जनता पीछे दौड़ने लगेगी। रुपया-पैसों की बौछार होने लगेगी।''

कुछ सोच-विचार के पश्चात् अंतरिक्ष ने कहा, ''गौरक्षा ठीक है।''

''हाँ, बिल्कुल ठीक है। श्रीकृष्णजी ने जीवन का प्रारंभ गाय-पालन, गाय चराने, सेवा करने से किया था तो ग्वाल-बाल उनके साथी बन गए और उनकी लोकप्रियता बढ़ने लगी थी।''

''अरे, वे तो साक्षात् ईश्वर के अवतार थे। उनकी बराबरी, उनकी लीलाएँ यह सब कैसे संभव है?''

क्यों नहीं है? तू भी भगवान् बन जाएगा। अरे, कितने लोग हैं, जो अपने आप को भगवान् भी कहने लगे हैं।''

''नहीं भाई, मुझे भगवान् नहीं बनना है।''

''मैंने कब कहा, मैं तो कहता हूँ कि गौ-सेवा का कार्य प्रारंभ कर दे। हीरो बन जाएगा। गौ-भक्त बन तुझे आगे बढ़ने का रास्ता बता रहा हूँ।''

अंतरिक्ष ने मित्र की सलाह मान ली। उसने एक कमरा किराए पर ले लिया और दो-चार बेरोजगारों को तलाशकर एक कमेटी बना ली। अध्यक्ष स्वयं बन गया। इसके प्रचार हेतु परचे बँटवाकर गौ-सेवा समिति प्रत्येक जनपद में गठित करने की प्रक्रिया प्रारंभ कर दी और गौ-सेवा के नाम पर दान-दक्षिणा एकत्रत करना तथा सड़क मार्ग से गौ-वंश लाने, ले जाने की निगरानी, रोक-छेक, दंगा-फसाद प्रारंभ हो गए। अब तो शांति व्यवस्था की बैठकों में अंतरिक्ष को आमंत्रित किया जाने लगा।

अंतरिक्ष ने कहा कि जितने लोग गौ-सेवक हैं, वे सभी एक-एक गाय स्वयं पालें और सभी घरों में गाय रखना अनिवार्य करना चाहिए। राजेश ने समझाया, ''भाई अनतू, जितने लोग हमारे साथ जुड़ते जा रहे हैं, इन्हें हम लोग कोई वेतन तो देते नहीं हैं। बस बातों के जाल में ही फँसाए हुए हैं। इसलिए इन पर कोई दबाव मत डाल, नहीं तो सब बिखर जाएँगे। मात्र भावनाओं को ही भड़काने का खेल है। यह ऐसा ही चलने दे। पहले यह समझने का प्रयास कर कि जब लोग अपने माता-पिता की सेवा नहीं कर पाते हैं, उन्हें वृद्धाश्रम भेज देते हैं तो वे गाय की सेवा क्या खाक करेंगे। हम लोगों को गौभक्ति करनी है, गौ-सेवा नहीं। आजकल के बच्चे आधुनिकता में पले हैं। गोबर-गोमूत्र को हाथ से नहीं छूते। शुद्ध दूध के नाम पर लोग जहर पी रहे हैं। बता, कहाँ हैं इतने पशु, जो इतना दूध आ रहा है। शहर में तो लोग बहुमंजिला फ्लैटों में रह रहे हैं। नीचे वाहन रखने के लिए भी जगह कम पड़ रही है। यही हाल गाँव का है। संपूर्ण गोचर भूमि पर लोगों ने कब्जा कर लिया है। मकान बना लिये हैं, अब तो बूढ़े माँ-बाप की तरह ही गौ माता की दुर्दशा हो रही है। भूखी-प्यासी कूड़ा-कचरा खाकर दिन भर भटकती रहती हैं। लगता है, भविष्य में इस सीधी-सादे प्राणी की प्रजाति ही विलुप्त हो जाएगी। हमें तो बस इसी आधार पर जनता की संवेदनाओं को भड़काना है। दूध से मक्खन निकालना है।''

योजना के अनुसार अनेक स्थानों पर सभाएँ आयोजित की गईं। लोगों की भीड़ एकत्र होने लगी। गौ-शालाएँ भी प्रारंभ हो गईं। एक दिन समीप के ग्राम से निकलनेवाले राजमार्ग पर प्रात: एक गाय किसी अज्ञात वाहन से टकराकर दुर्घटनाग्रस्त हो गई। इस बात की खबर जैसे ही गौ-सेवकों को मिली तो शीघ्र ही सब एकत्र होने लगे। आसपास के गाँवों में यह बात फैल गई कि किसी ने गाय को मारकर सड़क किनारे डाल दिया है। यह समाचार आग की तरह चहुँओर फैल गया। आक्रोशित लोग सड़क पर आ गए और वाहनों का आवागमन रोक दिया। हजारों की संख्या में लोग इस भीड़ में शामिल हो चुके थे और सैकड़ों वाहनों की दोनों ओर कतारें लग गई थीं। सब तरफ से आवाजें आ रही थीं—'कातिल को गिरफ्तार करो! पुलिस प्रशासन हाय-हाय!' अब प्रशासन के सामने कानून व्यवस्था की स्थिति उत्पन्न हो गई थी। कार्यपालन मजिस्ट्रेट और पर्याप्त पुलिस बल स्थल पर उपस्थित हुए। माइक से रास्ता छोड़ने, सड़क राजमार्ग से हटने के लिए समझाइश दी गई, किंतु इसका किसी ने पालन नहीं किया। भीड़ बढ़ती जा रही थी। सबसे आगे अंतरिक्ष चल रहा था। पुलिस ने बल प्रयोग करना प्रारंभ किया और लाठी-डंडा चलने लगे। कुटे-पिटे लोग तितर-बितर हो गए। इसी समय अंतरिक्ष के कंधे पर एक जोरदार डंडा पड़ गया और हड्डी टूट गई। उसे अस्पताल भिजवा दिया गया। राजेश ने फिर समझाया, ''देख भाई, तुझसे फिर भूल हो गई। अरे, ऐसे अवसर पर नेता आगे नहीं रहते हैं। इसके लिए तो अति उत्साही लोग होते हैं। वही आगे मोरचा सँभाल लेते हैं। उन्हें तो थोड़ा उकसाया-भड़काया जाता है।''

अंतरिक्ष का नाम अगले दिन नगर के सभी अखबारों में छप गया। राजनीतिक पार्टियों के तथा दूसरे शुभचिंतक देखने के लिए आने लगे और यह क्रम चलता रहा, जिससे उसका हौसला बढ़ा। वह स्वास्थ्य लाभ लेकर नई ऊर्जा के साथ पुन: मंच पर आया। जन समुदाय उसके सामने था। उसके जयकारे भी लगाए गए। सभी ने गौमाता की सेवा हेतु प्रण दोहराए।

सभी कार्यकर्ता प्रसन्न थे कि उनके द्वारा किए जा रहे कार्यों का असर जनता पर पड़ रहा है। उनके प्रयास सफल हो रहे हैं। अगले दिवस कमेटी के पदाधिकारियों की मीटिंग बुलाई और विचार-मंथन कर सबके सुझाव सुने गए कि अब आगे क्या करना है? ज्ञानसिंह पटेल ने अपना सुझाव दिया कि हम लोग जो कर रहे हैं, यह तो कई मठाधीश और कथावाचक भी कर रहे हैं। बड़ी गौशालाएँ बन रही हैं, और गौ-सेवक कहे जानेवाले लोग गौ तस्करों से मारपीट कर रहे हैं। दंगे कर रहे हैं। हम लोगों के पास कोई नया विचार, नया काम होना चाहिए। सभी ने सहमति प्रकट की तो पटेलजी ने कहा कि देखो भाई, ग्रामों में छोटी गौशालाएँ बनवाई जाएँ। जहाँ ग्राम पंचायत तथा जनता के सहयोग से चारा, घास, पानी की व्यवस्था संचालित हो और गायों को दुधारू नस्ल की प्रजाति का बनाया जाए। इस बात का अधिक प्रचार-प्रसार किया जाए। तभी गाय माता बच पाएगी और प्रत्येक ग्रामवासी परिवार एक गाय का पालन करे। यही संदेश जन-जन तक पहुँचाया जाए। इसका सभी उपस्थित सदस्यों ने समर्थन किया।

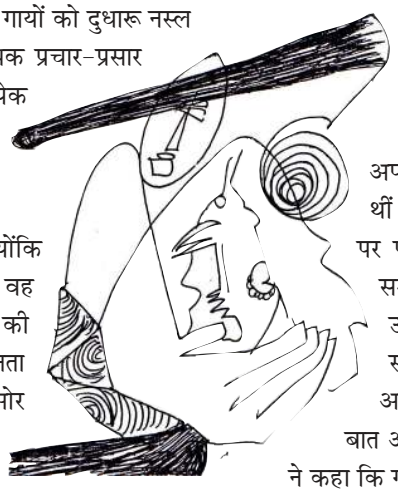

यह बात तोड़नसिंह को खटक गई, क्योंकि अब तक इस क्षेत्र का वही दाबेदार नेता रहा है। वह जानता था कि राजसुख की सीढ़ी इसी जनता की भीड़ से होकर जाती है। जिसके साथ जितनी जनता है, उसका उतना पलड़ा भारी है। अब दूसरी ओर पलड़े का झुकाव देखकर उसने अपने सक्रिय कार्यकर्ता बुलाए और एक सभा का आयोजन किया, जिसमें यह निश्चय किया गया कि हमारे कार्यकर्ता विरोधी पार्टी में शामिल होकर उपद्रव करें। अंतरिक्ष जब भी सभा में भाषण करना प्रारंभ करे सभी सदस्य उसके जिंदाबाद के नारे लगाएँ और इतने अधिक लगाएँ कि जनता उसका एक शब्द न सुन सके। इसी तरह का कार्य अन्य वक्ताओं के साथ किया जाए। इस तरह शोरगुल मचाकर उनकी जनसभाओं को विफल किया जाए और कोई भी गौवंश को ले जाता है तो मारपीट करो, दंगा मचाओ, खून बहा दो। विशेष रूप से दूसरे धर्मवालों के साथ झगड़ा करो। सांप्रदायिक दंगे फैलाओ, क्योंकि धर्म भी बहुत संवेदनशील है जनता को भड़कने में विलंब नहीं लगता है।

तोड़नसिंह ने जैसा चाहा, वही हो रहा था। मारपीट, झगड़े, सभी अंतरिक्ष के नाम दर्ज हुए और कुछ सक्रिय कार्यकर्ताओं के साथ उसे गिरफ्तार कर लिया गया। मजिस्ट्रेट ने सभी को जेल भेज दिया। अंतरिक्ष तीन माह जेल में रहने के बाद जब वापस आया तो उसका स्वागत करने के लिए जेल के दरवाजे पर लोगों की भीड़ थी। जनता के समक्ष तोड़नसिंह के कृत्यों की पोल खुल चुकी थी। तोड़नसिंह ने जब यह देखा तो मन-मसोसकर रह गया कि चौपर का पासा उलटा पड़ गया है।

यही जन समूह जो पहले कष्टदायक लगता था, अब लाभदायक तथा मन को प्रसन्नता देनेवाली प्रतीत हो रहा था। राजेश ने कहा, ''देखो अंतु, अपने लगाए हुए वृक्ष में फल लगने लगे हैं। हम लक्ष्यपूर्ति की ओर अग्रसर होते जा रहे हैं।''

अंतरिक्ष ने कहा, ''गौमाता की सेवा में दिन-रात समर्पित रहेंगे।''

''अंतरिक्ष, तू फिर अपना मार्ग भटक रहा है।''

''अंतरिक्ष हमारा लक्ष्य पूरा होगा, हम लोग उस तरफ बढ़ते जा रहे हैं। गौसेवा तो हमें उस ओर अग्रसर करने का मार्ग उपलब्ध कराने का साधन था। आजकल सबसे संवेदनशील बिंदु को हमने पकड़ लिया है। मैंने पहले भी कहा था कि वर्तमान में तीन ज्वलंत प्रश्न इस देश के समक्ष हैं, जिसमें जनता आँख मूँदकर साथ देने को सदैव तत्पर है। जनता जिसके साथ, उसका राज है, जिसका राज है, वही राजसुख भोग रहा है। सिर्फ कहने के लिए जनसेवक है। हमारा अंतिम लक्ष्य भी राजसुख प्राप्त करना है। यह तो सत्ता की उड़ान है, जो सफल होते दिख रही है।''

देश में आम चुनाव समीप थे। राजनैतिक पार्टियाँ अपने क्षेत्र में जिताऊ प्रत्याशियों की सूचियाँ बना रही थीं। एक समर्थ राजनीतिक पार्टी की नजर अंतरिक्ष पर पड़ गई कि वर्तमान समय में गौभक्त अंतरिक्ष के समर्थन में जनशक्ति उमड़ रही है। तोड़नसिंह से जनता ऊब चुकी थी। इसलिए अंतरिक्ष को अपनी पार्टी से सांसद के लिए टिकट देने के लिए कहा गया और इस आशय का आमंत्रण भेजा गया। जब राजेश को यह बात अंतरिक्ष ने बताई तो वह फूला नहीं समाया। अंतरिक्ष ने कहा कि गौसेवा से लोगों का स्नेह, प्रेम और समर्थन मिल रहा है, यह अमूल्य है। अब हम गौसेवा ही करना चाहते हैं। राजनीति के चक्कर में नहीं पड़ना चाहते हैं।

राजेश ने फिर समझाया, ''तू, लकीर का फकीर हो रहा है। अरे, जनता किसी की नहीं होती। वह हवा के साथ बहती है। इसी अवसर की तलाश में तो थे हम। गौमाता की पूँछ पकड़कर वैतरणी पार होती है, सो तू भी चला जा राजसुख अर्थात् स्वर्ग जैसा आनंद भोगने के लिए। लड़ ले चुनाव।'' सभी गौसेवकों की बैठक बुलाई गई। सभी ने चुनाव लड़ने के लिए समर्थन किया और साथ देने का आश्वासन भी।

लोकसभा चुनाव की धूम मच गई। अंतरिक्ष के समर्थन में जगह-जगह सभाएँ होने लगी थीं। चुनाव तिथि समीप आ गई। जनता ने मतदान किया। परिणामस्वरूप अंतरिक्ष भारी मतों से विजयी घोषित किए गए। प्रथम बार में ही अधिक मत प्राप्त होने पर जनता में लोकप्रियता तथा संवेदनशील बिंदु गौसेवा को दृष्टिगत रखते हुए अंतरिक्ष केंद्र सरकार में

राज्यमंत्री बनाया गया। राजेश को उसने निजी सचिव नियुक्त कर लिया।

अब मंत्रीजी का देश के अनेक भागों में भ्रमण और जनसभाएँ होने लगी थीं। जिस सभा में जितनी अधिक भीड़ होती थी, मंत्रीजी को उतनी अधिक प्रसन्नता होती। अपार जन समूह देखकर मन गद्‌गद हो जाता। वे अतीत में चले जाते कि बेरोजगारों की भीड़ के साथ जब हम नौकरी को भटकते थे तो यही भीड़ कितनी दुखदायी लगती थी। सार्वजनिक स्थानों पर भीड़ देखकर घबराहट होती थी। धन्य है भीड़-तंत्र की महिमा।

कुछ समय उपरांत क्षेत्र के गौसेवक और समर्थक अपने मंत्री से मिलने के लिए दिल्ली उपस्थित हुए। बँगले में अच्छा पंडाल सजाया गया और सभी आगंतुक जनों का स्वागत, भोजन आदि की अच्छी व्यवस्था की गई।

राज्यमंत्री स्वतंत्र प्रभार श्री अंतरिक्ष उपस्थित हुए और पंडाल में पधारे सभी लोगों को हाथ जोड़कर अभिवादन किया और कहा कि आप सभी ने जो सहयोग और समर्थन दिया है, उसके हम आभारी हैं। आप सभी अपने-अपने क्षेत्र में गौसेवा करते रहें, इस कार्य में कोई कमी नहीं आना चाहिए। आप सभी भगवान् कृष्ण की पूजा करते हैं और मैं उनका भक्त उन्हीं के पदचिह्नों पर चलता हुआ यहाँ तक पहुँचा हूँ। मतलब ब्रजधाम से द्वारका आ गया हूँ। अब मथुरा, वृंदावन संपूर्ण ब्रजधाम आप सभी को सौंपता हूँ; क्योंकि अब मेरे पास संपूर्ण देश की सेवा का उत्तरदायित्व जो आ गया है। (सा.अ.)

आनंद भवन, मेनरोड पृथ्वीपुर-४७२३३८
जिला-टीकमगढ़ (म.प्र.)
दूरभाष : ०९४२४३४५३५५

गजल

कौन है दोस्त, कौन है दुश्मन

• **ब्रह्मजीत गौतम**

: एक :

इन हवाओं को क्या हो गया,
इन फिजाओं को क्या हो गया?

हर तरफ चल रही हैं लुएँ,
इन सबाओं को क्या हो गया?

लड़खड़ाने लगे हैं कदम,
इन युवाओं को क्या हो गया?

खेत बेचैन हैं प्यास से,
घन-घटाओं को क्या हो गया?

हर समय जो रहीं वे-असर,
उन सदाओं को क्या हो गया?

हम खड़े हैं जहाँ के तहाँ,
योजनाओं को क्या हो गया?

मंजिलें दूर-ही-दूर हैं,
'जीत' पाओं को क्या हो गया?

: दो :

न जाने कैसी हवा चली है,
सभी दिशाओं में बेकली है।

चले परिंदे घरों को अपने,
भले ही संध्या नहीं ढली है।

घुली है दहशत फिजा में इतनी,
डरी-डरी सी गली-गली है।

भरोसा करके ठगों पे हमने,
स्वयं की किस्मत स्वयं छली है।

कभी थी सेवा की राह लेकिन,
न अब सियासत रही भली है।

हजारों ताने, हजारों शिकवे,
इसी फिजा में वफा पली है।

टहलने पहुँचे वे छत पे ज्यों ही,
मची सितारों में खलबली है।

: तीन :

फर्ज से भागना नहीं चलता,
हाँ कभी हौसला नहीं चलता।

मंजिलें तय बशर ही करते हैं,
खुद कभी रास्ता नहीं चलते हैं।

कौन है दोस्त, कौन है दुश्मन,
आजकल कुछ पता नहीं चलता?

प्यार तो है पवित्र-सा एहसास,
इसमें घाटा-नफा नहीं चलता।

जो चला राह बेईमानी की राह,
साथ उसके खुदा नहीं चलता।

वक्त बाँका पड़े तो दुनिया में,
दोस्त! सिक्का खरा नहीं चलता।

घर में विश्वास है जरूरी 'जीत',
सिर्फ शिकवा-गिला नहीं चलता।

: चार :

एक दरिया में बहता पानी है,
जिंदगी की यही कहानी है।

चंद साँसें हैं, दु:ख है, सुख है,
कैसी उम्दा यह बागबानी है।

अब्र छूने का जोश जिसमें नहीं,
कैसे कह दें कि वह जवानी है।

झूठ के साथ है खड़ी दुनिया,
कितनी मुश्किल में हकबयानी है।

उम्र भर का विलाप और तड़पन,
प्यार की बस यही निशानी है।

कर लिया है प्रबंध जन्मों का,
यह सियासत की मेहरबानी है।

'जीत' इस भीड़ में न खो जाना,
यह नहीं गाँव, राजधानी है। (सा.अ.)

युक्का-२०६, पैरामाउंट सिंफनी
क्रॉसिंग रिपब्लिक, गाजियाबाद-२०१०१६
दूरभाष : ०९७६०००७८३८

भारतीय नवजागरण की अद्‌भुत मिसाल : सर सी.वाई. चिंतामणि

● हेरंब चतुर्वेदी

सर सी.वाई. चिंतामणि का पूरा नाम था—चिर्रावूरी यज्ञेश्वर चिंतामणि। चिर्रावूरी कृष्णा जिले में उनके पैतृक ग्राम का नाम है। उनका जन्म तेलुगु नववर्ष के अवसर पर १० अप्रैल, १८८० को विजयनगरम् (आंध्र प्रदेश) में हुआ था। उस समय यह मद्रास प्रेसीडेंसी के अंतर्गत आता था। अपने पिता चिर्रावूरी रामसोमायाजुलु गारू की वे तीसरी संतान थे। उनके पिता सनातनधर्मी विद्वान् एवं विजयनगरम् के शासक महाराजा सर विजयराम गजपति राजू के धार्मिक अनुष्ठानों के परामर्शदाता थे। उनके पूर्वज १९वीं सदी के प्रारंभ में इसी कारण से अपने ग्राम एवं जनपद से निकलकर विजयनगरम् आ गए थे। किंतु चिंतामणि ने पारिवारिक, परंपरागत धार्मिक शिक्षा प्राप्त करने से इनकार कर दिया। उन्हें महाराजा विजयनगरम् के परामर्श पर पाश्चात्य शिक्षा दिलाई गई। उन्होंने १८९० में महराजा कॉलेज में प्रवेश लेकर वहीं से १८९५ में मद्रास विश्वविद्यालय की मैट्रिकुलेशन की परीक्षा प्रथम श्रेणी में उतीर्ण की। इसी बीच १८९२ में उनके पिता का स्वर्गवास भी हो गया था।

सर सी.वाई. चिंतामणि

मैट्रिकुलेशन के अध्ययन के दौरान ही वे समकालीन राजनीति में रस लेने लगे थे और समाचार-पत्रों एवं पत्रिकाओं को गहराई से पढ़ने-समझने ही नहीं लगे थे, अपितु शीघ्र ही इन समाचार-पत्रों, पत्रिकाओं में नियमित लिखने भी लगे थे। तदुपरांत उन्होंने एफ.ए. में प्रवेश लिया तथा इसके उपरांत वे नियमित रूप से 'हिंदू' एवं 'मद्रास स्टैंडर्ड' में लिखने लगे थे। इसी के साथ वे स्थानीय पत्र 'तेलुगु हार्प' में भी प्रकाशित होने लगे थे। उनकी स्मरणशक्ति, वाक्पटुता, शैली, शब्दावली और अंग्रेजी भाषा पर पकड़ अद्‌भुत थी, अत: वे सभी का ध्यानाकर्षित करते थे; किंतु अधिक काम और स्वाध्याय के इस दौर में उनके स्वास्थ्य पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ा। अंतत: उन्हें १८९६ में इलाज के लिए विशाखापत्तनम जाना पड़ा और वे वहाँ के प्रसिद्ध 'विजाग स्पेक्टेटर' में पत्रकारिता करने लगे। इसके प्रकाशक जगन्नाथ शास्त्री थे। उन्होंने युवा चिंतामणि की एक लेखमाला प्रकाशित की, जिसका शीर्षक था—'लार्ड एल्गिन की असफलता' (लार्ड एल्गिन द्वितीय वाइसराय, १८९४-९८)। इस लेखमाला के चलते ही २४ अगस्त, १८९८ को चिंतामणि १८ वर्ष की अल्पायु में 'विजाग स्पेक्टेटर' के संपादक एवं प्रबंधक नियुक्त हुए। अब वे राष्ट्रीय स्तर पर अपनी पृथक् व महत्त्वपूर्ण पहचान बनाने में सफल हुए।

अंतत: अनेकानेक कारणों से वे पुन: विजयनगरम् लौटे, किंतु, लगन और धुन के पक्के चिंतामणि तब तक 'विजाग स्पेक्टेटर' तथा 'गुडविल' ३०० रुपए में खरीद चुके थे। विजयनगरम् पहुँचकर उन्होंने इसका नया नामकरण 'इंडियन हेराल्ड' (साप्ताहिक) कर दिया। यह पत्र दो वर्ष ही चल पाया और आर्थिक कठिनाइयों के चलते बंद हुआ। किंतु तब तक चिंतामणि एवं उनका यह साप्ताहिक पत्रकारिता के इतिहास में अपना नाम उल्लेख करवा चुके थे। इसी बीच १८९९ में उनकी पत्नी एक पुत्र को जन्म देने के ३०वें दिन ही चल बसीं। अब वे विजयनगरम् छोड़ने को विवश थे। वे 'हिंदू' के संपादक जी. सुब्रमण्यम अय्यर और उनकी लेखनी से बहुत प्रभावित थे, अत: प्रतिकूल परिस्थितियों के चलते मद्रास चले आए और 'हिंदू' में पत्रकारिता करने लगे। इसी बीच उन्होंने 'इंडियन सोशल रिफॉर्म' नामक पुस्तक लिखकर शास्त्रों के साक्ष्यों के आधार पर समाज सुधार के एक पूर्ण कार्यक्रम की रूपरेखा प्रस्तुत करके विद्वत् समाज में सबका ध्यानाकर्षण किया। इस कृति के माध्यम से आधुनिक भारतीय चिंतकों के विचारों से भी लोगों को अवगत कराया। इन विचारकों में एम.जी. रानाडे, आर.जी. भंडारकर, पी. आनंदचार्लू, जी. सुब्रमण्यम अय्यर, राय बहादुर लाला बैजनाथ, आर.एन. मधोलकर, पं. बिशन नारायण दर, आर. वेंकटरमण नायडू आदि सम्मिलित हैं। इस ग्रंथ की सबसे बड़ी विशेषता वही है, जो भारतीय संस्कृति की प्रमुख विशेषता है—सातत्य के साथ परिवर्तन। किंतु वे सिर्फ समाज-सुधार के प्रचारक ही नहीं थे, अपितु स्वयं इसका उदाहरण पेश करते हुए अपनी पहली पत्नी के मृत्योपरांत भागवतुल कृष्णा राव की विधवा बेटी कृष्णा वेणी से विवाह किया।

१९०२ में चिंतामणि और सच्चिदानंद सिन्हा के मध्य पत्र-व्यवहार शुरू हो गया था। यहाँ प्रसंगवश स्मरण दिलाते चलें कि इलाहाबाद में उच्च न्यायालय की स्थापना के चलते वे यहीं वकालत करते थे। तब तक पटना में उच्च न्यायालय स्थापित नहीं हुआ था। वहाँ इसकी

स्थापना के उपरांत ही वे पटना गए थे। सच्चिदानंद सिन्हा उन दिनों रामानंद चटर्जी के कलकत्ता चले जाने के बाद से इलाहाबाद से 'कायस्थ समाचार' निकालने के दायित्व का भी निर्वहन कर रहे थे। चिंतामणि भी इस साप्ताहिक के नियमित पाठक थे। चिंतामणि बनारस से लौटते हुए इलाहाबाद में सिन्हाजी से मिलने आए और दोनों के बीच प्रगाढ़ मित्रता स्थापित हो गई। इसी मित्रता के परिणामस्वरूप सच्चिदानंद सिन्हा ने जनवरी १९०३ में 'इंडियन पीपुल' नामक साप्ताहिक पत्र का प्रकाशन शुरू किया और चिंतामणि ४० रुपए के शानदार (सोना उन दिनों, १२-१४ रुपए प्रति तोला था।) वेतन पर उसके सहायक संपादक होकर इलाहाबाद आ गए। चिंतामणि के कठोर परिश्रम का ही प्रतिफल था कि 'इंडियन पीपुल' कुछ ही दिनों में पहले सप्ताह में दो बार, फिर तीन बार प्रकाशित होने लगा। अंतत: १९०९ में अंग्रेजी दैनिक 'लीडर' की शुरुआत होते ही उसमें विलय कर दिया गया।

दैनिक 'लीडर' का पहला अंक सी.वाई. चिंतामणि तथा नगेंद्रनाथ गुप्ता के संयुक्त संपादकत्व में २४ अक्तूबर, १९०९ को विजय दशमी के अवसर पर प्रकाशित हुआ था। चूँकि चिंतामणि का प्रशिक्षण दादाभाई नौरोजी, महादेव गोविंद रानाडे, फिरोजशाह मेहता, सुरेंद्रनाथ बनर्जी जैसे प्रारंभिक राष्ट्रवादी नेताओं के मध्य हुआ था, अत: उसका पूरा प्रभाव उनके उदारवादी चिंतन में परिलक्षित होता है। फिरोजशाह मेहता ने 'बॉम्बे क्रॉनिकल' में उन्हें प्रशिक्षित किया था और इलाहाबाद आने से पूर्व वे कुछ दिनों लाहौर में 'ट्रिब्यून' समाचार-पत्र के संपादन का भी दायित्व निभा चुके थे। १९१८ के पश्चात् 'लीडर' स्पष्टत: नरमपंथियों के दृष्टिकोण एवं नीति का प्रबल समर्थक हो गया, जिसका प्रतिनिधित्व लिबरल करते थे। महात्मा गांधी के 'सत्याग्रह' और 'असहयोग आंदोलनों' से लिबरल सहमत नहीं थे, किंतु सरकार की दमनकारी नीति के वे भी प्रबल विरोधी थे, अत: जब गांधीजी को 'रॉलेट ऐक्ट' के तहत बंदी बनाया गया, तब चिंतामणि ने 'लीडर' में इसे सरकार की 'बहुत बड़ी गलती' शीर्षक से संपादकीय का विषय बनाया था। उन्होंने लिखा था—'इस घटनाक्रम पर हमें गहरा दु:ख है। गांधीजी की गिरफ्तारी को हम बहुत बड़ी और गंभीर गलती मानते हैं। जिससे देश भर में तीव्र प्रतिक्रिया होगी।' (लीडर, १२ अप्रैल, १९१९)

चिंतामणि ने 'लीडर' के माध्यम से न केवल ब्रिटिश औपनिवेशिक नीति और औपनिवेशिक साम्राज्यवाद की ही भर्त्सना की, अपितु सांप्रदायिकता का भी पुरजोर विरोध किया। वे अपने जीवन के अंतिम क्षणों तक देश की एकता और अखंडता के लिए संघर्षरत रहे। अपने विचारों, सिद्धांतों के प्रति उनकी प्रतिबद्धता जगजाहिर थी। उन्होंने 'लीडर' के बोर्ड ऑफ डायरेक्टर्स के चेयरमैन पं मोतीलाल नेहरू ने १९१० के भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के वार्षिक अधिवेशन में गौहरबाई के गायन के आयोजन के विचार की निंदा करने से भी परहेज नहीं किया था। मोतीलालजी अपने ही समाचार-पत्र की इस भर्त्सना से उस कार्यक्रम को निरस्त करने को बाध्य हुए थे। इसी प्रकार उन्होंने 'संयुक्त प्रांत म्युनिसिपैलिटी बिल' के १९१५-१६ के उस जहाँगीराबाद संशोधन का भी अपने समाचार-पत्र में विरोध किया, जिसको मोतीलालजी एवं सर तेज बहादुर सप्रू का समर्थन प्राप्त था। दोनों मौकों पर 'लीडर' के संपादक चिंतामणि तथा 'लीडर' के प्रबंध निदेशक, दोनों आमने-सामने आए और दोनों ही अवसरों पर निदेशक मंडल ने संपादक की निर्भीकता और विचारों की स्वतंत्रता का समर्थन किया, न कि अपने निदेशक मंडल के अध्यक्ष का। अंतत: मोतीलालजी को निरंतर विरोध और संपादक की यह खुली एवं निर्भीक चुनौती नागवार सी गुजरी तथा १९१८ में 'लीडर' के स्वामित्ववाली संस्था, इंडियन न्यूजपेपर्स लिमिटेड के शेयर-होल्डरों की मीटिंग में चिंतामणि को हटाने का प्रस्ताव रखा और बहुसंख्यक सदस्यों द्वारा अपने इस प्रस्ताव के अभूतपूर्व विरोध के चलते पं. मोतीलाल नेहरू ने ही 'लीडर' छोड़ना श्रेयस्कर समझा।

चिंतामणि ने 'लीडर' के माध्यम से न केवल ब्रिटिश औपनिवेशिक नीति और औपनिवेशिक साम्राज्यवाद की ही भर्त्सना की, अपितु सांप्रदायिकता का भी पुरजोर विरोध किया। वे अपने जीवन के अंतिम क्षणों तक देश की एकता और अखंडता के लिए संघर्षरत रहे। अपने विचारों, सिद्धांतों के प्रति उनकी प्रतिबद्धता जगजाहिर थी। उन्होंने 'लीडर' के बोर्ड ऑफ डायरेक्टर्स के चेयरमैन पं मोतीलाल नेहरू ने १९१० के भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के वार्षिक अधिवेशन में गौहरबाई के गायन के आयोजन के विचार की निंदा करने से भी परहेज नहीं किया था। मोतीलालजी अपने ही समाचार-पत्र की इस भर्त्सना से उस कार्यक्रम को निरस्त करने को बाध्य हुए थे। इसी प्रकार उन्होंने 'संयुक्त प्रांत म्युनिसिपैलिटी बिल' के १९१५-१६ के उस जहाँगीराबाद संशोधन का भी अपने समाचार-पत्र में विरोध किया, जिसको मोतीलालजी एवं सर तेज बहादुर सप्रू का समर्थन प्राप्त था।

इसी प्रकार जब महामना मदन मोहन मालवीयजी अल्प-काल के लिए 'लीडर' के अध्यक्ष हुए, तब वे मोंटेग्यू-चेम्सफोर्ड के विरोधी थे और चिंतामणि उसके प्रबल समर्थक। अत: चिंतामणि ने अपने सिद्धांतों से समझौता न करते हुए 'लीडर' के संपादक पद से त्याग-पत्र देना ही श्रेयस्कर समझा, किंतु मालवीयजी ने यह कहते हुए उनके इस्तीफे को अस्वीकार कर दिया कि हम दोनों को ही 'लीडर' से प्यार है, किंतु मेरे चेयरमैन बने रहने की अपेक्षा आपका संपादक बने रहना

'मध्यकालीन इतिहास के स्रोत' व 'मध्यकालीन भारत में राज्य और राजनीति' पुस्तकों पर उ.प्र. हिंदी संस्थान का 'आचार्य नरेंद्रदेव पुरस्कार', 'दास्ताँ मुगल महिलाओं की', 'हिंदी के बहाने' एवं 'फ्रांस का इतिहास' व 'मध्यकलीन भारत के विदेशी यात्री' पुस्तकें चर्चित।

'लीडर' के भाग्य और भविष्य के लिए अपरिहार्य है। और 'लीडर' के इस संस्थापक सदस्य ने स्वयं इस्तीफा देकर चिंतामणि और 'लीडर' की वैचारिक स्वतंत्रता एवं उसकी निर्भीक पक्षधरता के प्रति सम्मान प्रकट किया।

मौंटेग्यू-चेम्सफोर्ड सुधारों के तहत सी.वाई. चिंतामणि झाँसी से नेशनल लिबरल फेडरेशन के प्रत्याशी के रूप में चुनाव जीतकर प्रदेश की नवगठित सरकार के शिक्षा मंत्री बने। तब 'लीडर' के संपादक का दायित्व निभा रहे कृष्ण राम मेहता आपके ही परामर्श और दिशा-निर्देश पर चलते रहे। १९२३ में शिक्षा मंत्री के पद से त्याग-पत्र सौंपकर वे कुछ समय के लिए सर फिरोजशाह मेहता तथा सर चिमनलाल सीतलवड के विशेष आग्रह पर सांध्यकालीन पत्र 'इंडियन डेली मेल' के संपादक के रूप में बंबई चले गए, किंतु एक माह में ही वे वापस इलाहाबाद आकर पुनः 'लीडर' के संपादन के दायित्व का निर्वहन करने लगे। उनकी प्रतिबद्धता की ही यह मिसाल है कि जिस १ जुलाई, १९४१ को उनकी मृत्यु हुई थी, उस सुबह भी 'लीडर' में उनका अग्रलेख/संपादकीय प्रकाशित हुआ था।

एक परिश्रमी पत्रकार होने की सारी विशेषताएँ उनमें विद्यमान थीं। उन्होंने कभी भी उच्च मानकों और गुणवत्ता के साथ न स्वयं समझौता किया और न ही अपने अधीनस्थों को ही ऐसा करने दिया। रिपोर्टिंग में गलत सूचना या मात्र सनसनी पैदा करनेवाली रिपोर्टिंग, संपादन या प्रूफ रीडिंग में त्रुटि या लापरवाही, लेख/रिपोर्टिंग में उद्देश्य या निष्ठा का अभाव को वे इस व्यवसाय का सबसे घातक शत्रु मानते थे। विरामादि चिह्नों की गलतियाँ भी उनकी नजर से नहीं बच सकती थीं। जिसे अंग्रेजी में 'परफेक्शनिस्ट' कहते हैं, चिंतामणि वस्तुतः वही थे और कठिन प्रशिक्षण एवं परिश्रम से अपने अधीनस्थों को भी वैसे ही तपाकर स्वर्ण बना देना चाहते थे।

युवावस्था से ही चिंतामणि पत्रकारिता के अलावा राजनीति में भी रुचि लेते थे और सक्रिय भाग भी। १८९४ में ही अपने मित्रों के साथ उन्होंने विजयनगरम् में 'यंग मैंस एसोसिएशन' की स्थापना की थी। वे इसके बाद में सचिव भी थे तथा इस रूप में उनके भाषण भी होते रहते थे। चिंतामणि ने सर्वप्रथम १८९८ में भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के मद्रास वार्षिक अधिवेशन में भाग लिया था। १८९९ के कांग्रेस के लखनऊ अधिवेशन में प्रथम बार कांग्रेस मंच से उन्होंने भाषण भी किया था। यहीं से वे गोपाल कृष्ण गोखले के संपर्क में आए और उनके प्रगाढ़ संबंध हुए तथा वे गोखलेजी के प्रभाव में ही रहे।

प्रांतीय सरकार के अपने २८ मास के कार्यकाल में ही चिंतामणिजी के अथक परिश्रम और प्रयासों के फलस्वरूप कलकत्ता विश्वविद्यालय की रिपोर्ट के आधार पर माध्यमिक शिक्षा को विश्वविद्यालय की शिक्षा से पृथक् किया गया। २६ जुलाई, १९२१ को संयुक्त प्रांत माध्यमिक शिक्षा परिषद् का गठन हुआ। उन्हीं के प्रयासों से शिक्षकों की दशा में भी अनेक सुधार प्रस्तावित हुए। इन परिवर्तनों के तहत ही २८ जुलाई, १९२१ को 'इलाहाबाद यूनिवर्सिटी बिल' के माध्यम से विश्वविद्यालय को अपने शिक्षक (प्रोफेसर) चयनित करने के साथ ही वाइस चांसलर तथा कोषाध्यक्ष के चुनाव का भी प्रावधान करके विश्वविद्यालय को स्वायत्तशासी बनाने में बड़ा योगदान दिया गया। शिक्षा मंत्री के रूप में उन्होंने प्रदेश में तकनीकी एवं कृषि-शिक्षा के विकास की नींव रखी। इतना ही नहीं, चिंतामणि ने दूरदृष्टि से काम लेते हुए उद्योग एवं म्युनिसिपल बोर्ड को भी अधिक आत्मनिर्भर बनाने का प्रयास किया, ताकि वह आंग्ल-सरकारी नियंत्रण से अधिक स्वावलंबन का स्वरूप अख्तियार करे। वे १९२६ से १९३७ तक संयुक्त प्रांत के विरोधी दल के नेता के रूप में विधायी परंपराओं के विकास में महत्त्वपूर्ण योगदान देते रहे। इसी प्रकार 'आगरा काश्तकारी' और 'भू-राजस्व बिल' (१९२६) के विभिन्न जनकल्याण के प्रावधानों को सम्मिलित करवाने में उनका योगदान भी अविस्मरणीय है। इसी प्रकार इलाहाबाद को प्रांतीय राजधानी बनाए रखने और हिंदीभाषा के विकास के लिए भी वे सदैव संघर्षरत रहे।

जब प्रथम गोलमेज सम्मेलन लंदन में नवंबर १९३० को प्रारंभ हुआ, तब उदारवादियों के १३ सम्मिलित सदस्यों में सी.वाई. चिंतामणि भी थे। अन्य प्रमुख थे—सर तेज बहादुर सप्रू, श्रीनिवास शास्त्री, सर चिमनलाल सीतलवाड। अपनी अस्वस्थता के चलते वे द्वितीय गोलमेज सम्मलेन में भाग नहीं ले पाए तथा तृतीय में संभवतः उन्हें इसीलिए आमंत्रित नहीं किया गया। सर सी.वाई. चिंतामणि ने देशी रियासतों की जनता के कल्याण के लिए भी बहुत काम किया। इनके संगठन 'देशी राज्य प्रजा परिषद्' के द्वितीय सम्मलेन (बंबई, २५-२६ मई, १९२९) की अध्यक्षता भी की थी। अपने अध्यक्षीय भाषण में उन्होंने ब्रिटिश भारत तथा देशी रियासतों के मध्य पारस्परिक संबंध तथा ब्रिटिश क्राउन की सर्वोच्चता पर तीक्ष्ण प्रहार करते हुए बटलर समिति की कटु आलोचना की थी। उनके अनुसार इसमें न तो देशी रियासतों के राजाओं की और न ही वहाँ की प्रजा की व्यथा सुनी या सम्मिलित की गई। वे जिन माँगों के पक्षधर थे, वे प्रजातांत्रिक थीं, जैसे देशी रियासतों में मौलिक अधिकारों की घोषणा; अभिव्यक्ति (अभिभाषण, लेखन के साथ संस्था स्थापित करने) की स्वतंत्रता; न्यायालय द्वारा वादों के जाँच के अधिकार; बेगार प्रथा की समाप्ति के साथ वहाँ स्थानीय स्वराज्य संस्थाओं, ग्राम-पंचायतों तथा, म्युनिसिपल समितियों की स्थापना।

जहाँ तक उनके दीर्घकालीन विधायी जीवन की उपलब्धियों का प्रश्न है, हम संक्षेप में कह सकते हैं कि उनमें तथ्यों एवं आँकड़ों को प्रस्तुत करने की अद्भुत क्षमता थी, जिससे सत्तापक्ष से लेकर सरकारी अधिकारी तक के मुँह पर ताले जड़ जाते थे। वे सभी तथ्यों का मूल्यांकन करने के पश्चात् सदैव निष्पक्षता और स्वविवेक से ही अपने निर्णय लेते थे। वे अपने व्यक्तित्व तथा कृतित्व—कलम एवं वाणी, दोनों के माध्यम से सभी को प्रभावित करते थे।

सा.अ.

८/५ ए, बैंक रोड, इलाहाबाद-२११००२
दूरभाष : ९४५२७९९००८

चिंता

● **मनमोहन गुप्ता**

''शुशील बेटा! देखो मैंने तुम्हें कितनी मेहनत से पढ़ाया है।'' ''अरे, तो इसमें कौन सी नई बात की है आपने, जो इतना राग आलाप रहे हो।'' ''तुम बिल्कुल सही कह रहे हो बेटा। मैंने कोई नई बात नहीं की है और न ही कोई काम, यह तो मैं और तुम्हारी मम्मी ही जानते हैं कि किस प्रकार हमने तुम्हारी पढ़ाई-लिखाई के लिए अपने जीवन के स्वर्णिम दिनों की आहुति देकर तुम्हें आज इस स्तर तक पहुँचाया है।'' ''पापा, जब देखो तब तुम्हारा यही भाषण शुरू हो जाता है, उसमें न कोई अल्प विराम होता है, न पूर्ण विराम, फिर पैराग्राफ चेंज की तो बात ही कोसों दूर है। आपने जो कुछ भी किया, वह आपका फर्ज था पापा, फर्ज!''

''फर्ज-फर्ज-फर्ज''की ये बातें सुनते-सुनते मैं नाक तक भर गया हूँ! अरे, कभी तुमने इस फर्ज शब्द के अतिरिक्त कर्तव्य शब्द की भी बात की है?'' सुशील और उसके पापा विनोद के ये संवाद आज हर घर की कहानी हो गए हैं।

मेरे बाल आज बिल्कुल श्वेत हो गए हैं। पूरा सिर शिमला और जम्मू की पहाड़ियों पर जमती बर्फ सा हो गया है। घुटने जबाव दे गए हैं। थोड़ा दूर चलता हूँ, तभी साँस फूलने लगती है। घर की पहली मंजिल की सीढ़ियों पर भी चढ़े मुझे वर्षों बीत गए हैं। दूसरी तरफ सुशील की मम्मी का कद छोटा है। अपने संध्याकाल की प्रथम सीढ़ी पर उसने भी अपना कदम रख दिया है। दो पुत्रियाँ थीं। दोनों की शादी अपने स्तर से तो अच्छे घर में कर दी गई, पर यह बात दूसरी है कि दु:ख-सु:ख का भविष्यफल किसी भी माँ-बाप ने आज तक नहीं पढ़ा है, जो विधाता ने बेटी के मस्तक पर लिख दिया है।

'आज मैं जीवन-संध्या पर हूँ। इसका सूर्य कब अस्त हो जाए, यह मुझे पता भी नहीं है! हृदयाघात से एक बार तो मैं ऊपर की टिकट खरीद भी चुका हूँ, लेकिन उस दिन मौसम ठीक नहीं होने से मेरी फ्लाइट कैंसिल हो गई थी।

अब जब बीता समय याद करता हूँ तो लगता है, मैं कोई पिछले जन्म में बना चलचित्र सा देख रहा हूँ। दो लड़कियों के पश्चात् पढ़े-लिखे होने पर भी मैं पुत्र रत्न की प्राप्ति का लोभ सँवरण न कर सका। हर बुधवार को गणेश मंदिर जाता। गुरुवार को गुरुद्वारे और मसजिद जाकर दुआ माँगता, शुक्रवार को गिरजाघर जाना तो मेरी नियमित दिनचर्या बन गई थी। अल्लाह, मुझे एक बेटा तो दे दे! बस, इसी मनोरथ में सभी धार्मिक स्थलों पर जाकर माथा टेकता था। बुधवार को तो मैंने पूरे दो वर्ष तक व्रत किया था।

सुपरिचित कवि-लेखक। अब तक दो कहानी-संग्रह, दो कविता-संग्रह, एक उपन्यास प्रेस में तथा राष्ट्रीय पत्र-पत्रिकाओं में अनेक रचनाएँ निरंतर प्रकाशित एवं दूरदर्शन तथा आकाशवाणी जयपुर से रचनाओं का सजीव प्रसारण। नाथद्वारा में हिंदी की अग्रणी संस्था साहित्य मंडल तथा राजस्थानी ब्रज भाषा अकादमी, जयपुर द्वारा सम्मानित।

आखिरकार परमात्मा ने मेरी प्रार्थना सुनी और मुझे मनमाँगी मुराद मिल गई। जो भी मनौतियाँ थीं, वे सब पूर्ण कीं। नन्हे से चाँद को गोद में लेकर मैं हर्षित होकर सारी अभिलाषाएँ उसी में पूर्ण होने की चकाचौंध में डूब गया था। आर.ए.एस. की परीक्षा की तैयारी अधूरी छोड़कर थर्ड ग्रेड मास्टर की नौकरी में मैं संतुष्ट था। स्वर्णिम समय की अनुभूति शिशु सुशील की अठखेलियों में व्यतीत हो रही थी। अपने हाथ से शीशी में दूध भरकर उसे पिलाता। भरी सर्दी की कँपकँपाती ठंड में रजाई में लेकर बैठ जाता, सुबह नौ बजे तक यह मेरा अनवरत नियम बन गया था।

उसके बाद मेरी पत्नी शीला दौड़ती-भागती उसे गोद में लेकर जाती। स्थानीय ससुराल होने के कारण वह उसे वहीं छोड़कर स्वयं भी सरकारी नौकरी पर चली जाती थी। ससुराल हमारे घर से नजदीक थी। फिर उधर से किसी भी तरह का रूखापन नहीं था। आत्मीयता और स्नेह की गोद में नानी-नाना के घर सुशील ने अपनी शिशु अवस्था बिताई थी। उस समय वह मात्र सत्ताईस दिन का था, जब उसकी मम्मी का पदस्थापन अध्यापिका पद पर शहर के नजदीक के गाँव में हो गया था।

इस तरह समय व्यतीत होता चला गया। शिशु सुशील स्वयं चलने-फिरने के साथ-साथ बोलने भी लगा था। इससे पूर्व जब उसकी मम्मी साँझ को स्कूल से लौटकर आती थी तो लगता था, जैसे गोधूलि में गाय जंगल से आ रही है। वह बछड़ा देखने के लिए लालायित होकर तेजी से अपने घर की ओर आ रही है। गाय के थन दूध से भर जाते थे। ठीक उसी तरह सुशील की शिशु अवस्था में उसकी मम्मी का आँचल भी ममता की धार से भीग जाता था। आवश्यकता जब अधिक होती थी तो शीला की भाभी स्वयं शिशु को स्तनपान करा देती थी। एक वर्ष पूर्व उसको भी पुत्र हुआ था। इस प्रकार शिशु सुशील ने अपनी मामी का दूध पीकर भी वात्सल्य का रसपान किया था।

उम्र के प्रथम पायदान से सोलह पायदानों पर चलकर सुशील अब किशोर हो गया था। हम सब उसे देखकर बड़े प्रफुल्लित होते थे। 'पापा, मेरे साथियों के पास अच्छी-अच्छी पोशाकें हैं, उनके पास स्कूल जाने के

लिए मोटर साइकिल भी है।' सुशील ने मुझसे कहा था।

'तुम मुझसे क्या चाहते हो, बेटा! तुम मेरे इकलौते लाड़ले हो। तुम्हें जो चाहिए, खुलकर बताओ। तुम्हारी हर अभिलाषा पूर्ण करने में मुझे बड़ा संतोष मिलता है। तुम्हारी खुशी में ही हमारी खुशी है। तुम्हें हर्षित देखकर हम भी आह्लादित हो जाते हैं।' भावुकता के भाव में बहकर मैं बाल-मनोविज्ञान को अच्छी तरह समझ पाया था।

बालक की हर इच्छा पूरी करके हम उसका भविष्य स्वर्णिम न बनाकर उसकी जिद पूरी करके उसे राह से भटका रहे हैं। इसका मुझे बिल्कुल भी भान नहीं था। अनभिज्ञता ने मुझे मेरे उचित दायित्व से विमुख कर दिया था। परिणति में सुशील किशोरावस्था में राह से भटक गया। स्कूल जाते समय रास्ते में न जाने कहाँ-कहाँ अटक जाता था, इसलिए तो अनवरत अनुपस्थिति में उसका नाम विद्यालय से पृथक् कर दिया था। जब यह समाचार उसके मित्रों द्वारा हमें दिया गया तो मैं विकट परिस्थिति में फँस गया था। घर पर सुशील की मम्मी कह रही थी, 'मैंने तुमसे पहले ही कहा था कि देखो जी, इस कोरे लाड़-प्यार में कुछ नहीं रखा है। कभी-कभार समय निकालकर सुशील के स्कूल जरूर जाओ। उसकी पढ़ाई कैसी चल रही है, इसकी जानकारी रखो; लेकिन तुम्हें अपने काम से ही फुरसत नहीं है।' पत्नी की बात पर मैंने उस समय कोई ध्यान देकर अनदेखी की।

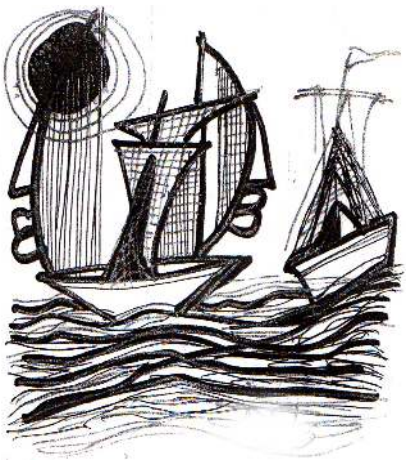

जब मैं सुशील के विद्यालय गया तो कक्षाध्यापक के रूप में मैंने मेरे सहपाठी को पाया। एक बार तो मुसकराकर उसने आत्मीयता का परिचय दिया, लेकिन उसके पश्चात् मुझे उसके रूखेपन ने दूरी का एहसास कराते हुए मेरे सर्विस ग्रेड और अपने सर्विस ग्रेड की उच्चता की अनुभूति कराकर मुझे अंदर से हिला दिया था। मुझे नहीं पता था कि सर्विस ग्रेड की उच्चता हो या धन की, उच्चता का मानदंड हमारे जीवन-मूल्यों में भी आज स्वाइन फ्लू और डेंगू की तरह फैल गया है कि उससे बचना समाज और परिवार में भी संभव नहीं है। वर्तमान परिवेश की इन विशेषताओं को विस्मृत करते हुए मैंने अपने स्वाभिमान की आहुति देकर विनम्रतापूर्वक कक्षाध्यापक से नियमानुसार पुनः सुशील का नाम लिखने का आग्रह किया था। उसके पश्चात् मैं उससे पढ़ने के लिए कहता रहता था।

कुछ दिनों पश्चात् एक दिन दोपहर को जब मैं सोकर उठा तो मैंने देखा, सुशील लड़खड़ाते हुए अपने कपड़े उतार रहा है। उसकी आँखें नींद में भरी दिखाई दे रही थीं। जीभ बोलते हुए लड़खड़ा रही थी। यह दृश्य देखकर मेरी छोटी बिटिया भी घबरा गई थी। 'पापा, आप जल्दी मालूम करो, ये आज कहाँ गया था, पढ़ने भी गया था या नहीं, यह किसके साथ था? आप अभी जाओ पापा, अभी जाओ! मेरे भाई को आज यह क्या हो गया है? देखो पापा, इसकी तो गरदन भी लुढ़कती जा रही है!' बिटिया ने रुँधे स्वर में घबराहट के साथ कहा।

मैं किंकर्तव्यविमूढ़ हो गया था। हाथ-पैर काम नहीं कर रहे थे। फिर भी हिम्मत जुटाकर मैंने साइकिल उठाई और गांधी नगर गया। जब सुशील के बारे में जानकारी प्राप्त की तो पता चला कि सुशील विद्यालय में अनियमित रूप से आता है, आज आया तो था, पीछे बैठा था, शायद अपनी तबीयत ठीक नहीं बता रहा था।' इतना कहकर निरंजन गोयल श्यामपट्ट पर कुछ लिखने लगे थे।

मैं उदास हो गया था। मेरे हाथ-पैरों की जान सी निकल गई थी। जैन की दुकान पर जब पूछा तो वह बोला, 'अंकल, सुशील यहाँ तो नहीं आया था। आजकल वह मेरे पास भी नहीं आता है, उसकी अपनी मित्र मंडली अलग है। उसी से मेल-जोल अधिक होने के कारण अब हम उसकी गतिविधियों से भी अनभिज्ञ रहते हैं।'

मैं घबराहट के साथ बुझे दिल से घर आ गया था। मेरे एक मित्र जब अचानक मेरे घर आए तो उन्होंने सारी स्थिति भाँप ली। रसोईघर से कई नीबू मँगाए। नीबू काटकर उसका रस सुशील के मुँह में डाला तो कुछ बाहर और कुछ अंदर आ-जा रहा था। सुशील की गरदन लुढ़क गई थी। तब तक उसकी मम्मी भी ड्यूटी से घर आ चुकी थी। उसने अपने पीहर फोन करके अपने दोनों भाइयों को बुला लिया था। वे फटाफट उसे अस्पताल लेकर चले गए। मैं कुरसी पर बैठा था तो बैठा ही रह गया। लाख प्रयास करने पर भी मुझसे उठा नहीं जा रहा था। बस अनुभूति होने लगी कि अब हम किसके लिए जीएँगे, हमारा तो अब जीना ही निरर्थक है। हे ईश्वर! यह तुमने क्या किया हमारे साथ? हमें किस गलती का दंड दिया है आपने!

'मैं तो पहले ही कहती थी कि एक दिन तुम इसे मारकर ही छोड़ोगे। बस, अब तुम्हारी आत्मा को शांति मिल जाएगी न—रोज-रोज की खटपट और डाँट-फटकार, हमेशा उसके पीछे पड़े रहना। मेरा कहना तुमने कभी नहीं माना। अब तुम अकेले रहकर ही खुश रहोगे न! देख लिया तुमने, अब सुशील की यह स्थिति तुम्हारे कारण ही हुई है।' शीला रोते हुए मुझे खरी-खोटी सुनाए जा रही थी। उस समय मेरी क्या स्थिति हुई होगी, यह अनुभूति की स्थिति है।

बताया गया कि पहले किसी प्राइवेट अस्पताल में ले गए थे। वहाँ डॉक्टर ने कुछ खा लेने के कारण आत्महत्या का केस बताकर सुशील को भरती करने से स्पष्ट इनकार कर दिया था। दूसरी तरफ अमित जो कि मेरे साले का दोस्त था, वह भी जी-जान से सुशील को बचाने में जुटा था। मोबाइल पर संदेश मिला। डॉक्टर साहब ने उल्टी कराकर स्थिति सामान्य हो जाने का आश्वासन दिया है। राहत का समाचार पाकर मैं भी अस्पताल जा पहुँचा। उससे पूर्व सुशील की मम्मी तो जाने का कई बार आग्रह कर चुकी थी, लेकिन उसे अस्पताल ले जानेवाला घर

पर कोई नहीं था।

दूसरे दिन सुबह राजेंद्र मास्टरजी को खबर कर दी गई थी। डॉक्टर साहब उनके घनिष्ठतम थे। उन्होंने इलाज की परची से कुछ खा लेने और आत्महत्या के प्रयास की पंक्ति बदलकर दूसरी परची बनाकर दे दी थी। सुबह लगभग ग्यारह बजे सुशील घर पर आ गया था।

एक किशोर पुत्र को अध्ययन की हिदायत और भटकने से रोकने के लिए एक पिता को इतनी बड़ी सजा मिलेगी, यह वर्तमान परिवेश की नियति बन गई है, जो अभिभावक की छाती पर चढ़कर तन गई है। पुत्र कुछ भी करे, उसे आज पूर्ण स्वतंत्रता के अधिकार की आवश्यकता अनिवार्य हो गई है। परिणाम की परिणति से अनभिज्ञ आज की पीढ़ी बूढ़े माँ-बाप का सहारा नहीं, बल्कि अब वह उनके लिए बोझ है। यह बात अलग है कि किशोर पुत्र बड़ा होकर माँ-बाप को ही बोझ समझने लगे हैं।

सुशील के मित्रों के परामर्श पर उसे दिल्ली कंप्यूटर का कोर्स करने के लिए भेज दिया गया था। दो हजार रुपए महीने उसका मासिक खर्च और कोर्स की फीस कई हजार रुपए थी। सुशील के मामाजी का साला दिल्ली में वकालत करता था, उसके माध्यम से उसे मकान दिलाने का प्रबंध किया गया। हर माह खर्च की राशि भी उन्हीं के माध्यम से दी जा रही थी। असलम, डेविड, दर्शन सिंह, जेठानंद और विनोद नंदवाना उसकी मित्र मंडल में सम्मिलित होकर सांप्रदायिक सद्भावना की गंगा प्रवाहित कर रहे थे।

दो वर्षों के उपरांत हमारी दृष्टि में जब सुशील का कंप्यूटर का कोर्स पूर्ण हो गया तो उसे रोजगार से लगाने के लिए उसकी बड़ी बहन आशा को चिंता होने लगी थी। उसने कहा, 'पापा, आप सुशील को अविलंब चंडीगढ़ ले आइए। मैं उसे टाटा कंपनी में इनसे कहकर काम पर लगवा दूँगी।'

'ठीक है बेटा! मैं शीघ्र सुशील को लेकर चंडीगढ़ आ रहा हूँ। तुम कंपनी में बात करके उसे लगवा देना।' मैंने आग्रहपूर्वक बड़ी बिटिया-बेटा से कहा था। मैं दिल्ली सुशील को लेने गया तो वहाँ उसकी मन:स्थिति चंडीगढ़ जाने की नहीं थी। जैसे-तैसे राजी करके मैं उसे चंडीगढ़ ले आया था। उसके साथ दो वर्ष पूर्व रखे सामान में खाने-पीने के बरतन, पढ़ने की बहुत-सी किताबें, अंग्रेजी के शब्दकोश नदारद थे।

चंडीगढ़ ड्यूटी ज्वॉइन करने के कुछ दिनों बाद ही उसकी मौसी ने उसकी शादी की बात चलाई। हमने उसकी मौसी को पूर्व में ही कह दिया था, 'सुशील तुम्हारा अपना बेटा है। इसके वैवाहिक जीवन का निर्णय तुम्हें ही लेना है। हमारा इसमें कोई हस्तक्षेप नहीं होगा।'

सुशील की मौसी ने उसे लड़की दिखाई। लड़के को लड़की और लड़की को लड़का, जब एक-दूसरे को पसंद आ गए तो रिश्ता भी पक्का हो गया। शादी धूमधाम से संपन्न हुई थी। बेटीवालों के सम्मुख हमने स्पष्ट कह दिया था, 'हमें तो संस्कारी लड़की चाहिए, इसके अतिरिक्त हमारी और कोई अभिलाषा नहीं है।' बेटीवाला हमारी बात सुनकर अश्रुपूरित नेत्रों से कहने लगा, 'आज के परिवेश में आप जैसा व्यक्ति मैंने कहीं नहीं देखा। मैं अपनी लड़की आपके घर देते हुए बहुत खुश हूँ।'

सुशील की बहू हमारे घर क्या आई कि हमें तो बस घर की लक्ष्मी मिल गई थी। बहुत ही सुशील और संस्कारवान बहू पाकर हमें लग रहा था कि हमें तो बेटी मिल गई है। बस हम बहू को बेटी-बेटी कहकर ही संबोधित कर रहे थे।

सुशील कहता था, 'पापा, आप इसे बेटी-बेटी कहकर ही सिर पर चढ़ा लोगे तो बाद में यह सिर दर्द बन जाएगी।' 'चुप्प रहो सुशील, तुम अपनी जबान पर लगाम दो। बहू आज हर घर में बेटी ही है, हमने बेटा देकर बेटी प्राप्त की है। हम इसे बेटी कहकर लाड़-प्यार से रखते हैं तो तुम्हें ईर्ष्या क्यों होती है रे?'

सुशील हँसकर वहाँ से चला जाता था।

एक वर्ष उपरांत हमने सुशील को राजस्थान बुला लिया था। हम दोनों को बेटा-बहू का अभाव अखर रहा था। लग रहा था कि क्या हमने अकेले रहने के लिए ही बेटा होने की मनौती माँगी थी। हम दोनों सरकारी कर्मचारी हैं। हमने सुशील से स्पष्ट कह दिया था कि तुम यहाँ कोई भी प्राइवेट काम कर लेना! हम तुम्हारी गृहस्थी का पूरा खर्च उठाने में समर्थ हैं। यहाँ कई कमरों का मकान है, थोड़ा-बहुत किराया भी आ जाता है, फिर हमारी नौकरी से प्राप्त वेतन भी तो है न, वह किस काम आएगी?

सुशील राजस्थान में घर आकर हमारे पास रह रहा था। हमें उसका रात को देर से आना अखरता था। कई बार जब लड़खड़ाते हुए आते देखा तो हम हतप्रभ रह गए। हमारे परिवार की सभी परंपराओं को तोड़कर वह मर्यादाएँ लाँघ रहा था। बहू से जब बात हुई तो उसने बताया था, 'शादी की प्रथम रात्रि को भी वे इसी मुद्रा में मेरे पास आए थे।'

इन सब बातों को सुनकर हमारे नीचे की जमीन खिसक गई। मैंने स्वैच्छिक सेवानिवृत्ति ली तो उसका कहना था कि 'पापा को कितने लाख की राशि मिली होगी, सारी राशि जीते जी मुझे आप सौंपकर दुकान करा दीजिए। तुम्हारे बाद इस राशि का मैं क्या उपयोग कर पाऊँगा।' तब तक मेरा शरीर भी जबाव दे चुका होगा। सुशील ने यह बात कई बार दोहराई थी।

'पापा, आपने मेरे लिए किया क्या है, अपने पास बुलाकर मुझे बेरोजगार और कर दिया है।' सुशील के ये शब्द मेरे कानों में बजते रहते थे।

सुशील अब हमारे बुढ़ापे का लाभ उठाकर सारे काम अपनी मरजी से संपन्न करने में ही अपने कर्तव्य का निवर्हन कर रहा है। आज मैं आईने में अपने बालों की सफेदी और चेहरे की झुर्रियों को देखकर चिंता में डूबा हूँ।

गुप्ता सदन,
एस.बी.के. गर्ल्स हायर सेकेंडरी स्कूल के पास,
मंडी अटलबंद, भरतपुर-३२१००१ (राजस्थान)
दूरभाष : ०९९८३४०९४५४

एक संपूर्ण आलोचक का आलोचना-कर्म

● अरुण होता

अपभ्रंश और हिंदी भाषा-साहित्य के विद्वान् गुरुवर प्रो. रामसिंह तोमर की प्रेरणा से सन् १९९० में बैंक रोड, इलाहाबाद स्थित प्रो. रामस्वरूप चतुर्वेदी के आवास में उनसे मिलने का सौभाग्य प्राप्त हुआ था। प्रबल आकर्षक व्यक्तित्व और ज्ञान विद्या एवं बुद्धि के अधिकारी रामस्वरूपजी ने अत्यंत स्नेह एवं आत्मीयतापूर्ण वार्त्तालाप किया। उन्होंने गुरुदेव रवींद्रनाथ का गीत 'मरण रे तुहूँमम श्याम समान' सुनाया। इसके बाद पट के निहितार्थ बताने के बाद रवींद्रनाथ की मृत्यु चेतना पर सविस्तार चर्चा की। उनकी व्याख्या और विश्लेषण सुनकर गद्‌गद होना स्वाभाविक था। उन दिनों मैं शोधार्थी था। मेरे शोध-कार्य 'ब्रजबुलि' पर भी लंबी चर्चा करने का अवसर मिला था। बहरहाल रामस्वरूप चतुर्वेदीजी के आलोचकीय व्यक्तित्व एवं उनकी आलोचना दृष्टि पर विचार करना हमारा लक्ष्य है।

प्रो. रामस्वरूप चतुर्वेदी
(६-५-१९३१—२४-७-२००३)

रामस्वरूप चतुर्वेदी का स्मरण होते ही पहला सवाल यह उठता है कि वे कविता के आलोचक हैं या उपन्यास के, साहित्येतिहासकार हैं अथवा काव्यभाषा के आलोचक; मध्यकालीन साहित्य अथवा आधुनिक साहित्य के आलोचक? उनके पचास वर्ष के आलोचकीय जीवन में लगभग तीस पुस्तकों की सूची यह सिद्ध करती है कि रामस्वरूप चतुर्वेदी न केवल साहित्य के, बल्कि दर्शन, विचारधारा, समाज, संस्कृति, राजनीति के भी गंभीर चिंतक हैं। उनके आलोचना-कर्म की विशद व्याप्ति है। अत: उन्हें संपूर्ण आलोचक या पूरा आलोचक कहना अधिक युक्तियुक्त प्रतीत होता है।

अपनी पहली आलोचनात्मक पुस्तक 'शरत् के नारी पात्र' (१९५५) के माध्यम से रामस्वरूपजी ने हिंदी आलोचना को प्रसारित करने का स्तुत्य प्रयास किया है। भाषाई परिधि से हिंदी आलोचना को मुक्त करने का भी प्रयत्न किया गया है। शरतचंद्र चट्टोपाध्याय के कथा साहित्य का गंभीर अध्ययन करने के पश्चात् आलोचक ने उनकी नारी की प्रेम भावना, करुणा उसके मनोविज्ञान और समाज चिंता को वैदुष्यपूर्ण, परंतु अत्यंत सहज और बोधगम्य भाषा-शैली में प्रस्तुत किया है। सबसे महत्त्वपूर्ण बात यह है कि शरत् के नारी पात्रों के बहाने तत्कालीन बांग्ला समाज और संस्कृति को भी अन्वेषित किया गया है। इस कृति में रामस्वरूप चतुर्वेदी की मूल स्थापना रही है—'सृष्टि की रहस्य-स्वरूपा नारी के जीवन की जैसी सूक्ष्म परख शरत् की थी, वैसी हमारे देश के किसी साहित्यकार में ही नहीं, वरन् किसी विदेशी कलाकार में भी मुश्किल से ही मिलेगी। नारी-जीवन अपनी सभी अच्छाइयों और बुराइयों के साथ जिस ढंग से शरत् की कृतियों में अभिव्यक्त हुआ है, वह अन्यत्र दुर्लभ है।' इस स्थापना से स्पष्ट हो जाता है कि आलोचक अपने विचार को पूरी हठता और आत्मविश्वास के साथ प्रस्तुत करने में सफल रहा है। यह दृढ़ता और आत्मविश्वास उसे गंभीर अध्ययन, चिंतन-मनन और आलोचकीय दृष्टि से प्राप्त है।

रामस्वरूप चतुर्वेदी के आलोचक व्यक्तित्व के संदर्भ में कहा जा सकता है कि निष्पक्षता, साहस, सहानुभूतिपूर्ण दृष्टिकोण, इतिहास और वर्तमान का सम्यक् ज्ञान, देशी-विदेशी साहित्य और कलाओं का ज्ञान, संवेदनशीता, अध्ययनशीलता और मननशीलता आदि गुणों से यह संपन्न है। उनकी आलोचना पद्धति में व्यक्तिगत राग-द्वेष का कोई स्थान नहीं है। उसका संबंध सदा रचना से होता है। स्वस्थ मन से साहित्य का अध्ययन करने के पश्चात् चतुर्वेदीजी आलोचना-कर्म में प्रवृत्त होते हैं। इस कर्म में उनका आलोचनात्मक विवेक समाहित होता है। सहृदय होकर वे किसी रचना से रचनाकार की समान अनुभूति से जुड़ने का प्रयास करते हैं। रामस्वरूप चतुर्वेदी की आलोचनात्मक पुस्तकों का उपर्युक्त गुण समवेशित प्रतीत होते हैं। एक बिंदु और है कि चतुर्वेदीजी की आलोचना पद्धति में किसी कृति को समकालीन समाज और परिस्थितियों के संदर्भ में देखने-परखने की दृष्टि। चतुर्वेदीजी के शब्दों में, 'यों पुनर्मूल्यांकन के माध्यम से हम युग-युग के साहित्य को समकालीन जीवन से जोड़ते चलते हैं।' इस दृष्टि से 'कामायनी का पुनर्मूल्यांकन' शीर्षक पुस्तक का महत्त्व असंदिग्ध है।

दूधनाथ सिंह के अनुसार, रामस्वरूप चतुर्वेदी हिंदी के महत्त्वपूर्ण आलोचक हैं। उन्होंने लिखा है—'वे रामचंद्र शुक्ल के बाद दूसरे आलोचक हैं, जिन्होंने हिंदी साहित्य का इतिहास लिखने की कठिन चुनौती स्वीकार की और 'हिंदी साहित्य और संवेदना का विकास'

लिखकर दिखा दिया। इस इतिहास में आधुनिक काल पर अधिक बल है, जिसके वे मास्टर आलोचक हैं।' प्रसाद, निराला, अज्ञेय, आचार्य शुक्ल ही नहीं, नवलेखन समकालीन साहित्य आदि को केंद्रित करते हुए चतुर्वेदीजी ने आधुनिक साहित्य का विवेचन प्रस्तुत किया है। उनकी आलोचना का संबंध साहित्य से है तो इतिहास और सामाजिक विमर्श से भी। उनके आलोचना जगत् में संवेदना की पहचान करने, उसका विश्लेषण करने, परिवर्तन के कारणों की पहचान करने के साथ-साथ उसे तत्कालीन समाज से जोड़ने का भी लक्ष्य समाहित है।

डॉ. निर्मला जैन के अनुसार, रामस्वरूप चतुर्वेदी विवेक-संपन्न आलोचक हैं। उनकी विवेक संपन्नता उन्हें चर्चित ही नहीं, प्रसिद्ध आलोचक बनाती है। बिना किसी पूर्वग्रह के वे कृति अथवा कवि का मूल्यांकन करते हैं। पूरी निष्ठा के साथ अंत:सांक्ष्यों के आधार पर अपनी स्थापना हेतु तथ्यों को प्रस्तुत करते हैं। यदि इस प्रक्रिया में कोई विवादी स्वर उभरता है तो बिना किसी संकोच के उसे प्रकट करते हैं। उनकी इतिहास की दृष्टि में यह आग्रह पाया जाता है कि इतिहास के साथ छेड़छाड़ न हो। उदाहरण के लिए, निम्नलिखित पंक्तियाँ दृष्टव्य हैं—'यह हिंदी काव्यभाषा और साहित्य परंपरा की जीवंतता का सबसे बड़ा प्रमाण है कि जिसका जन्म हिंदू-मुसलिम संघर्ष के बाद होता है और जो इस संघर्ष को अनेक रूपों में चित्रण करता है, पर जिसकी रचना में सांप्रदायिक दृष्टि का संस्पर्श भी नहीं होने पाता।...हिंदू-मुसलिम संघर्ष की वस्तु का हिंदी रचनाकार द्वारा सजग चुनाव इसके लिए एक और साक्ष्य प्रस्तुत करता है, पर नामवर सिंह इस परिदृश्य से मुँह मोड़कर रामविलास शर्मा और इरफान हबीब के विद्वत्तापूर्ण अध्ययनों के आधार पर सिद्ध करने को उत्सुक हैं कि मध्ययुग के भारतीय इतिहास का मुख्य अंतर्विरोध शास्त्र और लोक के बीच का द्वंद्व है, न कि इसलाम और हिंदू धर्म का संघर्ष।' इसी तरह आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी की कबीर संबंधी मान्यताओं और स्थापनाओं से असहमत होने का कारण स्पष्ट करते हुए लिखते हैं—''यह पाठ जैसे स्वयं उन्होंने अपने ग्रंथ 'कबीर' के परिशिष्ट में स्पष्ट किया है, आचार्य क्षितिमोहन सेन के स्रोत से आया है। क्षिति बाबू ने यह पाठ साधुओं की चिलमों के बीच उनके मुँह से सुनकर तैयार किया था। स्पष्ट ही इस पाठ पर स्वयं रवींद्रनाथ का और उनके नोबेल सम्मान का प्रभामंडल छाया रहा।'' कबीर संबंधी विवेचन-विश्लेषण के लिए अधिक-से-अधिक शुद्ध पाठ को आधार बनाने का आग्रह करते हुए चतुर्वेदीजी ने लिखा है—''यदि हिंदी आलोचना ऐसा नहीं करती तो एक ओर कबीर के प्रति अन्याय होता और दूसरी ओर उन विद्वानों के प्रति, जिन्होंने बड़े परिश्रम और मनोयोग के साथ ये पाठ तैयार किए हैं।'' उपर्युक्त उद्धरणों से रामस्वरूप चतुर्वेदी के आलोचकीय विवेक तथा उनकी साहसिकता का परिचय मिलता है। यह जरूरी नहीं कि उनकी स्थापनाओं से सहमत हों। आप अपनी असहमति प्रकट कर सकते हैं। आलोचक की स्थापनाओं को पूरी तरह खंडित कर सकते हैं। यदि ऐसा हो तो आलोचना का मार्ग प्रशस्त होगा। आलोचना के लिए शुभ संकेत माना जाएगा।

युपरिचित रचनाकार। हिंदी की सभी प्रतिष्ठित पत्रिकाओं में लेख प्रकाशित। आलोचना की कई पुस्तकें प्रकाशित। आलोचना के लिए कई प्रतिष्ठत पुरस्कार से सम्मानित। संप्रति प्रोफेसर एवं अध्यक्ष हिंदी विभाग वेस्ट बंगाल स्टेट यूनिवर्सिटी कोलकाता।

चतुर्वेदीजी के आलोचना-कर्म का केंद्र संवेदना है। यह केवल 'हिंदी साहित्य और संवेदना का विकास' पुस्तक में नहीं, बल्कि उनके रचना जगत् के केंद्र में है। जयशंकर प्रसाद, सूर्यकांत त्रिपाठी 'निराला', अज्ञेय, केदारनाथ अग्रवाल, सर्वेश्वरदयाल सक्सेना, रघुवीर सहाय, आचार्य रामचंद्र शुक्ल, आचार्य नंददुलारे वाजपेयी, नगेंद्र, आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी, रामविलास शर्मा, विजयदेव नारायण साही, नामवर सिंह तथा प्रेमचंद, फणीश्वरनाथ रेणु, देवराज आदि पर व्यक्त विचार अथवा उनके पुनर्मूल्यांकन के संदर्भ में संवेदना को सर्वाधिक महत्त्व प्राप्त है। सैद्धांतिक एवं व्यावहारिक आलोचना में उन्होंने भाषा-संवेदना को मानदंड के रूप में स्वीकार किया है। संवेदना की व्याप्ति, उसके मर्म का विश्लेषण एवं उसके महत्त्व के आकलन की प्रक्रिया से हिंदी आलोचना निश्चित रूप से समृद्ध हुई है। आलोचना के क्षेत्र में नया स्वर उभरा है।

रामस्वरूप चतुर्वेदी की आलोचना-दृष्टि में अतीत से अधिक वर्तमान अपनी सामर्थ्य और सीमा के साथ मौजूद है। बढ़ती हिंसा, उपद्रव, अपराध प्रवृत्ति, सेक्स, मादक वस्तुओं का प्रयोग आदि से संसार में जड़ जमानेवाली समस्याओं को उन्होंने अनदेखा नहीं किया है। उन्होंने स्पष्टतया लिखा है—''पश्चिमीकरण से बचाव, राष्ट्रीय अस्मिता का विकास और विश्व-प्रवाह से समरस होना, ये तीनों प्रक्रियाएँ एक-दूसरे से जुड़ी रहती हैं।...यों भद्दी राजनीति और संस्कृति एक-दूसरे से बेमेल हो गई है। राजनीति बाँटती है, संस्कृति जोड़ती है। सभ्यता समरस करती है। इकबाल द्वारा कई दशक पूर्व प्रसन्न मुद्रा में संकलित सभ्यता की हमारी हस्ती को आगे मिटने से बचाए रखना शायद इसी तरह संभव होगा।''

यद्यपि रामस्वरूप चतुर्वेदी के आलोचना जगत् का क्षेत्र व्यापक है, तथापि तथ्य यह है कि उनकी दर्जन भर पुस्तकें कविता संबंधी विश्लेषण प्रस्तुत करती हैं तथा प्राचीन कवियों से लेकर अपने समकालीन कवियों तक का विवेचन करती हैं। उनके अनुसार निष्ठा और प्रतिबद्धता के साथ विवेक संपन्नता से सृजन सार्थक होता है। कविता का संबंध जीवन से है। कविता के विकास क्रम को वे आध्यात्मिकता, राष्ट्रीयता, जनचेतना, स्वचेतना आदि के रूप में रेखांकित करते हैं। यहाँ केवल उनकी छायावाद और नई कविता संबंधी मान्यताओं या स्थापनाओं का उल्लेख करना अनुचित न होगा। छायावाद को आचार्य महावीरप्रसाद द्विवेदी ने शैली की प्रकृति मात्र स्वीकार है तो नंददुलारे वाजपेयी ने अभिव्यक्ति की एक लाक्षणिक प्रणाली के रूप में अपनाया है। आचार्य

रामचंद्र शुक्ल ने इसे रहस्यवाद की भूलभुलैया में डाल दिया तो डॉ. नगेंद्र ने 'स्थूल के विरुद्ध सूक्ष्म का विद्रोह' कहा। डॉ. नामवर सिंह के शब्दों में—'छायावाद उस राष्ट्रीय जागरण की काव्यात्मक अभिव्यक्ति है, जो एक ओर पुरानी रूढ़ियों से मुक्ति चाहता था तो दूसरी ओर विदेशी पराधीनता। इस जागरण में जिस तरह क्रमश: विकास होता गया, इसकी काव्यात्मक अभिव्यक्ति भी विकसित होती गई और इसके फलस्वरूप छायावाद संज्ञा का भी अर्थ-विस्तार होता गया।' लेकिन रामस्वरूप चतुर्वेदी ने राष्ट्रीयता और जागरण से भी बड़ी रेखा खींचते हुए छायावाद को शक्तिकाव्य के रूप में प्रतिष्ठित किया—'अपने व्यक्तिगत प्रणय और राष्ट्रप्रेम की अनुभूति में और उनके संश्लेष में छायावाद मूलत: शक्तिकाव्य है।' इसे और अधिक स्पष्ट करते हुए उन्होंने लिखा—''राष्ट्रीयता शक्तिकाव्य का एक महत्त्वपूर्ण अंश है। परंतु शक्तिकाव्य का सामान्य अर्थ राष्ट्रीय काव्य नहीं है।'' शक्तिकाव्य की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि इसने व्यक्ति से मनुष्य, मनुष्य से जातीयता, जातीयता से राष्ट्रीयता और राष्ट्रीयता से विश्वभावना की यात्रा की है। प्रसाद, पंत, निराला एवं महादेवी के सृजन जगत् से तमाम उद्धृतियाँ प्रस्तुत करते हुए चतुर्वेदीजी ने छायावाद को शक्तिकाव्य के रूप में स्थापित कर अपनी मौलिक आलोचकीय प्रतिभा का परिचय प्रदान किया है। छायावादी काव्यांदोलन ने ऊर्जस्वित शक्ति-साधना से हिंदीसाहित्य को परिपूर्ण कर दिया है। बंधनों, अंधविश्वासों, दकियानूसी विचारों, पुरानी मान्यताओं तथा गलित परंपराओं से मुक्ति प्रदान करने की अपार शक्ति छायावादी रचनाओं में निहित है। अत: छायावादी काव्य यथार्थत: शक्तिकाव्य है।

नई कविता के प्रमुख सिद्धांतकार तथा भाष्यकार के रूप में भी रामस्वरूप चतुर्वेदी का महत्त्व अक्षुण्ण है। उन्होंने नई कविता को 'संपूर्ण जीवन की कविता' के रूप में आख्यायित किया। 'हिंदी नवलेखन', 'नई कविताएँ : एक साक्ष्य', 'हिंदी साहित्य की अधुनातन प्रवृत्तियाँ', 'अज्ञेय और आधुनिक रचना की समस्या', 'तार सप्तक से गद्य कविता' आदि कई कृतियों में न केवल नई कविता के सिद्धांत सृजित हुए हैं, बल्कि इसे यूरोपीय नवलेखन के अनुकरण से मुक्त और भारतीय परिस्थितियों की उपज स्वीकार करते हैं। अज्ञेय, मुक्तिबोध, शमशेर बहादुर सिंह, गिरिजाकुमार माथुर, धर्मवीर भारती, भवानी प्रसाद मिश्र, कुँवर नारायण, सर्वेश्वर दयाल सक्सेना, रघुवीर सहाय आदि के कवि कर्म का प्रामाणिक तथा विश्वसनीय आकलन करने में इस आलोचक को विशेष ख्याति प्राप्त हुई है।

बड़ा आलोचक वही कहलाता है, जो सैद्धांतिक तथा व्यावहारिक आलोचना में अपनी विशिष्ट छाप छोड़ता है। इस दृष्टि से रामस्वरूप चतुर्वेदी का महत्त्व असंदिग्ध है। उनकी व्यावहारिक आलोचना में सिद्धांत समाहित होते ही हैं, लेकिन 'कविता का पक्ष', 'काव्याभाषा पर तीन निबंध' आदि पुस्तकों में उनकी सैद्धांतिक आलोचना का स्वरूप स्पष्ट होता है। उनकी लगभग सभी आलोचनात्मक कृतियों में भाषा एवं संवेदना संबंधी सैद्धांतिक विचार प्रस्तुत हुए हैं। काव्यभाषा संबंधी उनका चिंतन अत्यंत व्यापक है। उन्होंने आधुनिक कविता के मर्म को समझने के लिए काव्यभाषा को विश्वसनीय उपादान के रूप में प्रतिष्ठित किया है—''यों तो प्रत्येक युग के काव्य-बोध को समझने के लिए कवि की भाषा-प्रयोग-विधि हमारे लिए शायद सबसे महत्त्वपूर्ण कुंजी सिद्ध हो सकती है। पर जैसा कहा गया कि आधुनिक कविता का मर्म ग्रहण करने के लिए काव्यभाषा का उपादान ही एकमात्र विश्वसनीय उपादान रह गया है, जिससे हम इस युग विशेषज्ञ के काव्य सर्जन की क्षमता को समझ सकते हैं।'' रामस्वरूपजी प्राचीन काव्यभाषा से लेकर मध्ययुगीन काव्यभाषा एवं आधुनिक भाषा के स्वरूप को प्रसंगतया स्पष्ट करते हैं। मौलिक लेखक के लिए शब्दों से संघर्ष करना अनिवार्य मानते हैं। वे काव्यभाषा को रचना की समीक्षा का एकमात्र कसौटी स्वीकार करते हैं। यह मान्यता पूर्णयता स्वीकृत नहीं हो सकती है। इससे असहमति हो सकती है। लेकिन आलोचक यह नहीं चाहता है कि उससे पूर्णत: सहमत हों। ऐसा हो तो आलोचना का विकास अवरुद्ध होने का खतरा मँडराने लगता है।

प्रगतिशील लेखक संघ की अध्यक्षता करते हुए प्रेमचंद ने साहित्य के उद्देश्य को स्पष्ट किया था। रामस्वरूपजी ने 'साहित्य के नए दायित्व' शीर्षक पुस्तक में परिवर्तित समय और समाज में साहित्य के उत्तदायित्व पर विचार किया है। मसलन, आलोचना की सापेक्षिक स्वायत्तत स्वीकार करते हुए वे लिखते हैं—''निराला ने अपेन युग में 'कविता की मुक्ति' की बात बलपूर्वक कही थी और उसे व्यवहार में निदर्शित भी किया था। मैं समझता हूँ कि आलोचना की मुक्ति की बात उसी से जुड़ी हुई है। 'कविता की मुक्ति' को निराला ने मनुष्य के वृहत्तर सवाल से जोड़कर देखा था, उनकी जो परिकल्पना आज एशिया, अफ्रीका और पूर्वी यूरोप के देशों में क्रमश: चरितार्थ हुई दिखती है। जीवन, रचना और आलोचना के जिस क्रम को हम अपने विवेचन में लक्षित करते आ रहे हैं, उसमें आलोचना की मुक्ति 'कविता की मुक्ति' से सहज जुड़ जाती है। कविता मुक्त हो और आलोचना लक्षणों, प्रतिमानों में बद्ध यह बड़ी अटपटी और इतिहास-विरुद्ध बात होगी।''

डॉ. रामस्वरूप चतुर्वेदी आचार्य रामचंद्र शुक्ल की परंपरा के आलोचक हैं। वे आलोचना को किसी बद्ध पद्धति या विचारधारा में सीमित करना नहीं चाहते हैं। विचार से पोषित आलोचना संकीर्णता से मुक्त आलोचना के वे सर्वदा पक्षधर रहे हैं। पुन: उनकी दृष्टि में आलोचना भी रचना है। आलोचना में सर्जनात्मक गुणों का समावेश होना आवश्यक है। अत: रामस्वरूप चतुर्वेदी की आलोचना दृष्टि में एक पूरापन परिलक्षित होता है। रूपवादी या कलावादी आलोचक कहकर मार्क्सवादी आलोचना ने उनके आलोचना कर्म के साथ अन्याय किया है। खंड-खंड में विचार करना, रामस्वरूप चतुर्वेदी की आलोचना के विराट् तथा व्यापक फलक से अन्याय है। उनके आलोचना कर्म का समग्रता में मूल्यांकन होना अभी शेष है।

२ एफ, धर्मतला रोड, कस्बा, कोलकाता-७०००४२
दूरभाष : ०९४३४८८४३३९

राजरानी की गाय

कहानी

● राकेश भ्रमर

रोज की तरह आज भी राजरानी मुँह अँधेरे उठी थी। घर-आँगन की झाड़ू-बुहारी, कूड़ा-कर्कट और गोबर उठाने के बाद अपनी बूढ़ी गाय के पास गई। देखा कि चरही में थोड़ा-सा सूखा भूसा पड़ा है। उसने गाय के सिर पर हाथ फेरा। गाय ने दुलार से अपना मुँह राजरानी के हाथ में रगड़ दिया। वह भूखी थी।

राजरानी ने दोनों हाथों से गाय का सिर अपने अंक में समेट लिया। ममता का एक सागर उसके सीने में उमड़ आया। गाय उसकी माँ थी, बेटी थी, बहन थी, और पता नहीं क्या-क्या थी। इसी के सहारे वह अपना बुढ़ापा काट रही थी। सभी तो साथ छोड़कर चले गए थे। बस उसकी गाय अभी तक उसके साथ थी, लगभग बीस साल से। यह गाय उसी के घर पैदा हुई थी और अब शायद इसी घर में मरकर विदा होगी।

गाय अब बूढ़ी हो गई थी। एक साल से दूध नहीं दे रही थी। इस साल गाभिन भी नहीं हुई थी, परंतु इसकी चिंता राजरानी को नहीं थी। चिंता थी तो बस उसके चारे-पानी की। राजरानी स्वयं बूढ़ी हो गई थी। हार-बाहर जाकर उसके लिए हरी घास काटकर नहीं ला पाती थी। पैसे से भूसा-चारा खरीदने की उसकी हैसियत नहीं थी। बस घर की खेती से जो चारा पैदा होता था, उसी से गाय का पेट भरती थी, वह भी आधे मुँह'''गाय बेचारी भूखी रह जाती थी।

उसके यहाँ इस गाय ने दस बछिया-बछड़ों को जन्म दिया था। वे सब उसने बेटियों के घर भिजवा दिए थे।

थोड़ी देर गाय को पुचकारने-दुलारने के बाद वह भुसौरे में गई। अभी तो कोठरी भरी थी, परंतु इतना भूसा सावन तक मुश्किल से चलेगा। फिर चारा कहाँ से आएगा? कहने को सावन-भादों में चारों तरफ हरियाली होती है। हरे चारे की कमी नहीं होती, परंतु काटकर लाए कौन? उससे तो अब उठा-बैठा भी नहीं जाता। दिनोदिन गाय को पालना मुश्किल होता जा रहा था।

घर में केवल दो प्राणी थे—राजरानी और गाय। दोनों ही बूढ़े थे और अपने लिए रोटी और चारा जुटाने में असमर्थ थे। फसल पकने पर जो अन्न और चारा घर में आता था, वह पूरे साल के लिए पूरा नहीं पड़ता था।

राजरानी सदा की ऐसी दीन और असहाय नहीं थी। मायका खुशहाल था तो ससुराल में भी खाने-पीने का अभाव नहीं था। इतनी खेती थी कि साल भर में कुछ बच ही जाता था, परंतु जैसे-जैसे बच्चे बड़े हुए, खर्चे भी बढ़ते गए, तब भी उन्हें अभाव का मुँह नहीं देखना पड़ा। उसका पति पंजाब जाकर ईंट-भट्ठे में काम करने लगा था। वह गाँव में रहकर खेती सँभाल लेती थी। वह तीन बेटों और तीन बेटियों की माँ बनी। खेती और पंजाब की कमाई से सभी के शादी-ब्याह किए।

सुपरिचित साहित्यकार। 'जंगल बबूलों के', 'हवाओं के शहर में'(गजल-संग्रह), 'उस गली में' (उपन्यास), 'अब और नहीं' (कहानी-संग्रह। 'प्राची' मासिक पत्रिका का संपादन। पत्र-पत्रिकाओं में सौ से अधिक रचनाएँ प्रकाशित। दूरदर्शन लखनऊ तथा आकाशवाणी रामपुर, जबलपुर और मुंबई से रचनाओं का प्रसारण। संप्रति केंद्र सरकार में अधिकारी।

इन सबसे निबटते ही राजरानी और उसके पति को लगा, जैसे गंगा नहा लिए, परंतु असली दु:ख तो बेटों की शादी के बाद आने शुरू हुए।

हर बाप सोचता है कि बेटा उसके बुढ़ापे की लाठी बनेगा, परंतु ऐसा होता नहीं है। राजरानी का बड़ा बेटा शादी के तुरंत बाद ससुराल में जाकर रहने लगा था। उसे ससुराल की जायदाद मिली थी, क्योंकि उसकी पत्नी के कोई भाई-बहन नहीं थे।

दूसरा बेटा अपने हिस्से की जमीन लेकर तुरंत अलग हो गया। उसने घर भी छोड़ दिया और अपने खेतों के बीच एक कच्ची कोठरी बनाकर पत्नी के साथ रहने लगा। उसकी पत्नी को भी सास-ससुर के साथ रहना पसंद नहीं था।

बचा छोटा बेटा, तो वह भी कम नहीं निकला, वह पत्नी के साथ शहर चला गया। साल-दो साल में आता तो एक-दो दिन घर में रहकर ससुराल चला जाता और शहर लौटने तक वहीं रहता, जैसे अपने माँ-बाप से उसे कुछ लेना-देना नहीं था।

घर में बस राजरानी और उसके पति थे। कहने को नाती-पोते थे, लड़के-बेटी थे, लेकिन मात्र मुँह-दिखावे और कहने भर के लिए। जरूरत पड़ने पर एक लोटा पानी देने के लिए भी उनके पास कोई नहीं था। मझला बेटा गाँव में रहते हुए भी कभी माँ-बाप के हाल पूछने नहीं आता था, बहू तो सामने पड़ते ही मुँह फेरकर दूसरी ओर चली जाती, जैसे उनके बीच सात जन्मों का बैर हो। पता नहीं कैसी औरत थी?

राजरानी का पति मरा तो तीनों बेटे इकट्ठा हुए। तेरहीं तक घर में रहे, परंतु तेरहीं खत्म होते ही तीनों जमीन-जायदाद के बँटवारे का टंटा लेकर बैठ गए। बड़े को ससुराल में अच्छी-खासी जायदाद मिली थी, परंतु पुश्तैनी जमीन कैसे छोड़ता। सभी को अपना हिस्सा चाहिए था।

अंतत: गाँव के बड़े-बूढ़ों के समक्ष यह तय हुआ कि पूरी जमीन में राजरानी का एक बीघा अलग रहेगा। जो बेटा उसे रोटी देगा, वह उस जमीन को जोते-बोएगा। बाकी जमीन तीन हिस्सों में बँट गई, परंतु लिखा-पढ़ी नहीं हुई। बड़ा बेटा अपने हिस्से की जमीन मझले भाई को बँटाई पर देकर चला गया। छोटावाला बोला, ''मैं तो शहर में रहता हूँ। माँ ही मेरे हिस्से की जमीन की देखभाल करेगी और जो पैदा होगा, आधा-आधा बाँट लेंगे।''

इस तरह जमीन का बँटवारा हो गया, परंतु राजरानी के भाग्य का निपटारा नहीं हुआ। तीन बेटों के होते हुए भी वह अनाथ हो गई। अब घर में वह और उसकी गाय थी। उसकी दिनचर्या खेती और घर में सिमट गई थी। वह पूरी मेहनत से खेती का काम सँभालती, परंतु हर फसल के अंत में छोटा बेटा आता और अपने हिस्से की पैदावार बनिए को बेचकर चला जाता। माँ से कभी न पूछा कि उसे किसी चीज की दरकार है या नहीं? वह भी इतनी खुद्दार थी कि भूखे रहकर भी उसने बेटे के सामने कभी मुँह नहीं खोला। बेगैरत बेटों से माँ-बाप कोई उम्मीद नहीं करते।

राजरानी के शरीर में जब तक दमखम रहा, तब तक बेटे को कमाकर देती रही। जब उसकी ताकत और हिम्मत जवाब दे गई तो उसने तय किया कि बेटे से दो टूक बात करनी होगी। अगली बार जब वह फसल बेचने के लिए आया तो बोली, ''बेटा, तुम देख रहे हो, अब मैं जर्जर हो गई हूँ। खेती-किसानी मेरे वश की नहीं रही। मुश्किल से घर का काम कर पाती हूँ। अब अपनी खेती तुम सँभालो। मैं नहीं कर पाऊँगी।''

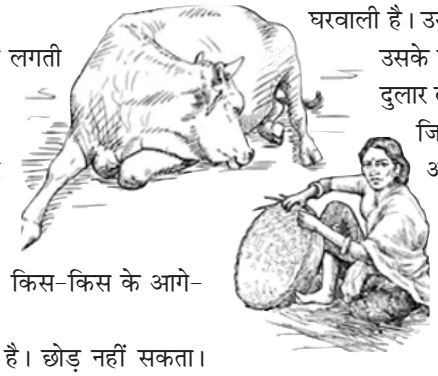

''माँ, आजकल खेती में कौन-सी मेहनत लगती है। सारा काम ट्रैक्टर से होता है, पंप से सिंचाई होती है और कटाई के लिए थ्रेसर होता है।''

''मशीनें अपने आप सारा काम नहीं कर लेतीं। हर काम में किसान की मेहनत भी लगती है। निराई-गुड़ाई और कटाई के लिए मजदूर लगते हैं। यह सब जुटा पाना मेरे वश का नहीं, किस-किस के आगे-पीछे भागूँ-दौड़ूँ?''

''माँ, मेरी तो दिल्ली में अच्छी नौकरी है। छोड़ नहीं सकता। बताओ, कैसे होगा?''

''मैं क्या बताऊँ, कैसे होगा? तुम्हारी जमीन है, तुम जानो।'' राजरानी ने लापरवाही से कहा।

बेटे ने बेचारगी से अपनी पत्नी की तरफ देखा। राजरानी ने कहा, ''बहू को यहाँ छोड़ दो, वह खेती का काम देख लेगी।''

बेटे के कुछ कहने के पहले ही बहू लगभग चीखकर बोली, ''हाँ, बुढ़िया यही तो चाहती है कि यहाँ रहकर उसके लिए मैं चूल्हा फूँकूँ और आँखें फोड़ूँ। यह टाँगें पसारकर रानी की तरह ऐश करे।''

''बहू, जुबान को ज्यादा लंबा न कर! शादी के बाद एक दिन भी इस घर में नहीं रही। मुझे तेरी रोटियों की जरूरत नहीं। आज क्या, तू अभी शहर चली जा। मुझे न तेरी बनाई रोटियों की भूख है, न तेरे मरद की कमाई की आस। शहर से आती है तो मैं ही ठोपकर तुझे, तेरे मरद और तेरे पिल्लों को खिलाती हूँ। तू तो मेहँदी और महावर लगाकर बैठी रहती है। मैं मरते वक्त भी तुझसे कोई आस नहीं रखूँगी। जब तेरा खसम मेरा नहीं हुआ तो तू कब होगी मरी?'' कहकर राजरानी ने मुँह फेर लिया।

बेटा बोला, ''मैं गाँव के किसी आदमी को बँटाई पर खेत दे दूँगा।'' वह जैसे हवा से कह रहा था।

राजरानी कुछ नहीं बोली। उसका खून खौल रहा था। आँखों में आग जल रही थी और मन में यही विचार घुमड़ रहा था कि जवान बेटे-बहू यह क्यों भूल जाते हैं कि एक दिन वे भी बूढ़े होंगे और उनके घर में बेटे के लिए बहू आएगी।

शायद जवानी में बेटे-बहू ऐसा नहीं सोचते। जब तक पाँव में काँटा नहीं चुभता, उसका दर्द हमें पता नहीं चलता।

बेटे ने खेत बँटाई पर दे दिए और तीसरे दिन अपनी चिकनी-चमेली को लेकर दिल्ली चला गया।

जिस दिन बेटा गया, राजरानी को लगा कि घर में कोई मर गया हो। ऐसा उसे पहले कभी नहीं लगा था। पहले वह तन-मन से चुस्त थी। अब बुढ़ापे ने उसके तन-मन को ढीला कर दिया था। अब मन यादों की तरफ दौड़ रहा था।

बेटा और बहू भले ही उससे सीधे मुँह बात नहीं करते थे, परंतु वह जब भी अपने बच्चों के साथ गाँव आते थे तो घर भर जाता था। बच्चों की चिल्ल-पों से उसे लगता कि वह भी पोतेवाली है; भरे-पूरे घरवाली है। उसका मन गद्‌गद हो जाता था। बच्चे माँ के डर से उसके पास कम ही आते थे, परंतु वह चोरी-छिपे उनको दुलार लेती थी। यह उसके जीवन के सुनहरे पल होते थे, जिनकी यादों के सहारे वह अगले साल तक उनके आने का इंतजार करती थी।

खट्टी-मीठी यादों से उबरकर उसने खोंचे में भूसा भरा और गाय के आगे चरही में डाल दिया। गाय ने एक बार सूखे भूसे में मुँह मारा, चरपरा लगा तो मुँह खींच लिया और दीनभाव से राजरानी की ओर देखा। राजरानी का दिल दहल गया। गाय के ऊपर कितना अत्याचार कर रही हूँ। पहले इसी गाय को वह खली और आटे की सानी लगाकर चारा देती थी, क्योंकि तब वह दुधारू थी। आज वह बूढ़ी हो गई थी। थनों में दूध नहीं था तो उसके सामने सूखा भूसा डाला जा रहा था। बेजुबान गाय भी यह बात समझ रही थी, तो क्या राजरानी यह बात नहीं समझ सकती थी कि बुढ़ापे में माँ-बाप भी अपने बच्चों के लिए टूटे सामान की तरह हो जाते हैं, जो घर के किसी अँधेरे कोने में बिना देखभाल के पड़े धूल खाते रहते हैं।

राजरानी को रोना आ गया। वह चुपचाप अंदर गई और टोकनी भर आटा लाकर सूखे भूसे में मिला दिया। गाय चाव से खाने लगी।

राजरानी ने डबडबाई आँखों से गाय को चारा खाते हुए देखा और धीरे से बुदबुदाई, 'मेरी बहना, न तेरा भूसा ज्यादा दिन चलनेवाला है, न मेरा आटा। पता नहीं आगे क्या होगा? तेरे लिए कहाँ से हरा चारा लाऊँ, खली और आटे का जुगाड़ कहाँ से करूँ? रोज तुझे आटा दूँगी, तो मेरा चूल्हा जलना बंद हो जाएगा।'

भूसे में जब तक आटे का स्वाद मिला, गाय ने खाया, उसके बाद उसने फिर राजरानी को निहारा। वह जानती थी, गाय अभी भूखी है, परंतु करे भी तो क्या? वह फिर अंदर गई और बालटी का पानी लाकर उसके आगे रख दिया। गाय पूरा पानी पी गई। फिर वह सरकारी नल पर

पानी भरने चली गई। गाय ने एक बालटी पानी और पिया। शायद गाय भी समझती थी कि भूखे पेट रहकर पानी से पेट भरना ही अब उसकी नियति है।

राजरानी और गाय की नियति में बहुत अधिक अंतर नहीं था।

खेती में मशीनों का प्रयोग बढ़ने से लोगों ने बैल रखने बंद कर दिए थे। जमीनी अतिक्रमण से चरागाह ही नहीं, खेती की जमीन भी सिकुड़ गई। लोगों ने चारेवाली फसल की जगह नकदीवाली फसलें उगानी शुरू कर दी थीं। नतीजा यह हुआ कि लोगों ने पशु पालने कम कर दिए। ज्यादा दूध देनेवाले पशुओं को लोग प्रमुखता देने लगे। लोगों ने मुर्रा और पछाहीं भैंस दरवाजे पर बाँध लीं। गायों का बहिष्कार कर दिया। खासकर देसी गायों का। बहुत सारे लोगों ने तो चारे की कमी से परेशान होकर गाय और बछड़ों को खुला छोड़ दिया।

गाँव-गाँव आवारा गाय-बछड़ों की टोलियाँ घूम-घूमकर फसलों को बरबाद कर रही थीं। लोग उनका कुछ कर भी नहीं सकते थे। चोरी-छिपे कुछ कसाई उन पशुओं को पकड़ ले जाते थे, परंतु कितने पकड़ते। उनकी संख्या तो हजारों में थी।

ऐसी स्थिति में भी राजरानी ने गाय को बाँधे रखा। उसके रहते वह स्वयं को अकेला महसूस नहीं करती थी। वह अकेले में गाय से बातें करती और गाय भी उसके साथ ऐसे व्यवहार करती, जैसे उसकी सारी बातें समझती हो। बस जवाब नहीं दे सकती थी, परंतु अपने हाव-भाव से प्यार और स्नेह का सागर उड़ेल देती थी।

गाँव के बहुत से स्त्री-पुरुष थे, जो उसे यदा-कदा समझाते रहते थे, 'अरे, अम्मा या चाची' जो भी जिसका रिश्ता होता था, ''क्यों इस ठाँट को बाँधकर रखा है? खुला छोड़ दे। इधर-उधर मुँह मारेगी तो कुछ दिन ज्यादा जिंदा रहेगी। तुम्हारे यहाँ तो भूखों मर जाएगी। अब तो दूध भी नहीं देती!''

'हाँ भैया या बहना' वह कहती, ''परंतु इसको बेटी जैसा पाला है। ममता बड़ी चीज होती है। मोह नहीं छूटता है। अलग होने के नाम पर कलेजा फट जाता है। कैसे छोड़ दूँ, पता नहीं कहाँ जाए और कौन इसके साथ कैसा व्यवहार करे? मार-काट न डाले! बस यही डर लगा रहता है।''

''भौजी!'' उसके एक देवर ने कहा, ''इतनी बूढ़ी गाय की क्यों फिकर करती हो, जवान गाय-बछड़े खुले घूम रहे हैं, उनको कोई नहीं पूछता? और तुमको शायद पता नहीं, गोहत्या पाप है। इसमें सजा भी दी जा सकती है।''

''सजा और पाप का तो मुझे पता नहीं, परंतु गाय मेरी बेटी और सगी बहन जैसी है। उसके रहते मेरा मन भी लगा रहता है, वरना तुम क्या जानो, इतने बड़े घर में जैसे भूत दौड़ते हैं।''

''चाची, आप भी कमाल करती हो। अपने बेटे-बेटी बड़े होते ही पराए हो जाते हैं, बहुएँ सात जन्म का बैर बाँधकर घर के अंदर पैर रखती हैं। कौन किसका होता है? बस पैसे की माया है। कोई किसी की परवाह नहीं करता और तुम इस बूढ़ी गाय के पीछे जान दे रही हो।'' किसी और ने उसे जीवन-दर्शन दिया।

''सब अपनी समझ से रिश्ते-नाते निभाते हैं। बेटे-बेटी और बहुएँ अगर हमारा साथ छोड़ दें तो क्या हम भी उन्हें छोड़ देंगे। उनके साथ हम भी नालायक हो जाएँ?'' राजरानी के अपने तर्क होते।

लोग तरह-तरह से समझाते, परंतु वह अपने तर्कों से सभी को परास्त कर देती। धीरे-धीरे लोगों ने कहना-सुनना ही बंद कर दिया।

किसी तरह जेठ बीत गया। आषाढ़ आया, परंतु बादल न आया। विधवा के जीवन की तरह आसमान भी सूना था। बारिश होती तो प्यासी धरती की कोख हरी होती। हरी घास उगती तो गाय के पेट में कुछ चारा जाता, वरना सूखा भूसा खाते-खाते राजरानी की गाय आधी रह गई थी। कभी-कभी आटा मिला देती, परंतु उससे गाय की देह थोड़े सुधरने वाली थी। बुढ़ापे के शरीर में खाया-पिया लगता भी कहाँ है! जैसे राजरानी, वैसे उसकी गाय, दोनों ही हड्डियों का ढाँचा मात्र थीं। लोगों को राजरानी के ऊपर तरस आता और राजरानी गाय की गिरती हालत देखकर दुःखी होती रहती।

आषाढ़ की पहली बरसात हुई तो खूब जमकर हुई। धरती हरी हो गई। राजरानी के शरीर में जान नहीं थी, फिर भी गिरते-पड़ते रोज गाय को लेकर चराने चली जाती। हरी घास खाकर गाय की गिरी हुई हालत में काफी सुधार आ गया था। फिर सावन आया और बरसात की झड़ी लग गई। कई दिन तक बारिश होती रही। चारों तरफ पानी भर गया। सभी लोग घरों में बंद होकर रह गए थे। गाय के हिस्से में फिर वही सूखा भूसा, वह भी लगभग खत्म हो गया था। आगे क्या होगा, राजरानी की समझ में नहीं आ रहा था।

इसी बारिश में, जब चारों तरफ कीचड़ और पानी था, गाय बीमार पड़ गई। वह पतला गोबर पोकने लगी। राजरानी को बड़ी चिंता हुई। कुछ घरेलू नुस्खे आजमाए। नहीं ठीक हुई तो गाँव के लोगों से पूछा, सबने अलग-अलग तरह के इलाज बताए। उसके बस में जो था किया, परंतु गाय की हालत बिगड़ती ही जा रही थी।

पड़ोस में ही राजरानी से कुछ कम उम्र की सुधिया रहती थी। वह रिश्ते में देवरानी लगती थी। गाय की हालत सुधरते न देखकर उसने सलाह दी, ''दीदी, क्यों गोहत्या का पाप मोल लेती हो? बूढ़ी गाय है, खूँटे से खोल दो, कहीं चली जाएगी। तुमको भी मुक्ति मिल जाएगी।''

राजरानी का दिल धक् से रह गया। यह मर जाएगी तो किसके सहारे जिएगी। चली जाएगी, तब भी मरने के समान है।

''बहन, अंतिम समय में क्यों इसको बाहर मरने के लिए छोड़ूँ। जंगली जानवर नोचकर खा जाएँगे। तब भी पाप मेरे सिर ही आएगा। मेरे घर पैदा हुई है। जी नहीं करता कि इसे अपने से अलग करूँ।''

''दीदी, तुम अपनी हालत देखो। अपने को नहीं सँभाल पा रही हो, गाय की देखभाल कैसे करोगी। मौसम खराब चल रहा है। पता नहीं कब ठीक होगा। तब तक यह मर न जाए!''

''बहन, यही सोचकर तो दुःख होता है, जब मैं बेटे-बहुओं के होते हुए असहाय हूँ तो बुढ़ापे में इस गाय का कौन होगा। इस खराब मौसम में तो यह एक दिन में ही मर जाएगी।''

सुधिया को राजरानी के ऊपर तरस आया। बोली, ''दीदी, आप

बहुत सीधी हो। खुद दु:ख सह लोगी, परंतु दूसरे का दु:ख नहीं देख सकती, चाहे वह जानवर ही हो। तुम्हारे बेटे तुम्हारे जैसे होते तो आज क्या तुम्हें यह दिन देखना पड़ता?''

''बहन, उनके करम उनके साथ हैं?'' राजरानी ने कहा, ''मैं कौन सा दस-बीस बरस जिऊँगी और यह गाय भी कितने दिन जिएगी। जब तक जिंदा है, सेवा कर रही हूँ। शायद इसी की सेवा से मेरा परलोक सुधर जाए। यह लोक तो बिगड़ गया।'' कहते-कहते राजरानी का गला भर आया। आँखों से गंगा-जमुना बहने लगीं। उसके हृदय में दु:ख का सागर उमड़ पड़ा। यह दु:ख गाय के बीमार होने का था या बेटों के नालायक हो जाने का, राजरानी दु:ख के अतिरेक में खुद भी नहीं समझ पाई थी।

राजरानी की दशा देखकर सुधिया का कोमल मन द्रवित हो गया। दयाभाव से बोली, ''दीदी, पड़ोस के गाँव का एक आदमी जड़ी-बूटियों की दवा देता है, जो गाय-भैंस, बकरी के पेट को ठीक कर देता है, परंतु जाए कौन?''

राजरानी ने सुधिया को इस भाव से देखा, जैसे कह रही हो, 'तुम्हीं कुछ करो।'

''वर्षा की झड़ी लगी है, परंतु मैं रमेश को बोलती हूँ।'' रमेश उसका बेटा था। आज्ञाकारी और बहुत मेहनती। सुधिया ने उससे राजरानी की गाय की हालत बयान की, तो भरी बरसात में छाता लेकर दवाई लेने के लिए चल पड़ा। लगभग दो घंटे बाद लौटा, वह पूरी तरह से भीग चुका था। छाता होने के बावजूद तेज बौछारों ने उसके बदन को पूरी तरह से भिगो दिया था। हवा भी चल रही थी। हलकी ठंड ने उसके बदन में कँपकँपी पैदा कर दी थी, परंतु वह दवा की चार खुराकें लेकर आया था।

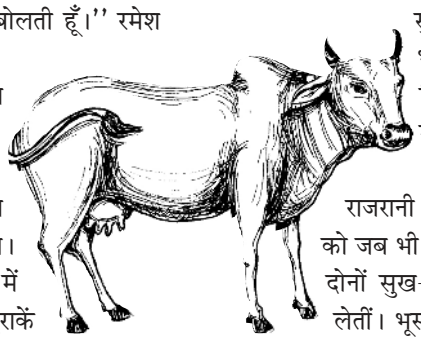

राजरानी के हृदय में खुशी की लहर दौड़ गई। अब उसकी गाय ठीक हो जाएगी और सचमुच दो खुराक खाकर उसकी हालत में बहुत सुधार आ गया। तीसरी खुराक के बाद तो वह बिल्कुल ठीक हो गई।

सुधिया और रमेश को आशीषें देते राजरानी की जुबान नहीं थकी। वह उठते-बैठते उनको दुआएँ देती रहती।

तीसरे दिन गाय भली-चंगी होकर चारा खाने लगी। अब बरसात भी थम गई थी। मौसम साफ हुआ तो किसान अपने खेतों के काम में जुट गए। राजरानी भी कभी गाय बाहर घुमा लाती, कभी हँसिया-खुरपी से घास काट लाती। जब से गाय बीमार हुई थी, सुधिया भी उसकी मदद करती रहती थी। कभी घास दे देती, कभी घर की बची हुई रोटियाँ उसे खिला देती।

जब तक गेहूँ की बोवाई शुरू नहीं हुई, तब तक चारे की खास दिक्कत राजरानी को नहीं हुई। चारों तरफ हरी-हरी घास थी। खेतों में खरीफ की फसल थी, परंतु कुछ खेत परती पड़े थे, जहाँ गाँव के लोग अपने जानवरों को चराने के लिए ले जाते थे। राजरानी भी गिरते-पड़ते गाय को लेकर चली जाती। गाय का पेट भर जाता और नहीं भरता तो घर में भूसा तो था ही।

परंतु जब खेतों में गेहूँ की बुवाई हो गई तो खेत परती न रहे। चरागाह पहले ही खत्म हो गए थे। अब गाय को घर में ही बाँधकर खिलाना था। इधर-उधर से घास छीलकर लाना राजरानी के वश में नहीं था। जैसे-जैसे जाड़ा बढ़ रहा था, वैसे-वैसे राजरानी का भूसा भी खत्म होता जा रहा था। निराई-गुड़ाई से खेतों से कुछ हरी घास निकलती थी, परंतु इतनी मेहनत का काम राजरानी के वश का नहीं था। उसने खुद अपना खेत बँटाई पर दे रखा था। हरा चारा कहाँ से लाती? गाहे-बगाहे बस सुधिया और उसके बेटे रमेश का सहारा था।

पूस का महीना था। ठंड अपनी जवानी पर थी, घना कोहरा गिरने लगा था। धूप निकलती, परंतु मरी-मरी सी। पता ही नहीं चलता कि दिन है कि चाँदनी रात। राजरानी घर में बँधकर रह गई थी। गाय के पास अलाव जलाकर बैठी रहती। मन करता तो चूल्हा जलाकर कुछ कच्चा-पक्का बनाकर खा लेती, वरना भूखी ही बैठी रहती।

खाने की तरफ से जैसे उसे विरक्ति हो गई थी। इसका कारण भी था। भूसा समाप्ति की कगार पर था। वह गाय को थोड़ा-थोड़ा करके भूसा डालती, ताकि मौसम ठीक होने तक चल जाए। उसने यह बात सुधिया को नहीं बताई, वरना वह दो-तीन झौवा भूसा उसे दे सकती थी, परंतु उससे कितने दिन निकलते। रबी की फसल कटने में अभी तीन महीने बाकी थे।

गाय सूखकर आधी से कम रह गई थी। राजरानी को उसे देखकर रोना आने लगा था। सुधिया को जब भी फुरसत मिलती, उसके पास आकर बैठ जाती। दोनों सुख-दु:ख की बातें करतीं और जी हलका कर लेतीं। भूसा खत्म हो गया। उस दिन राजरानी गाय के गले लगकर खूब रोई। गाय को जैसे स्थिति का पता चल गया था। उसकी आँखों में भी पानी भर गया था। दोनों सगी बहनों की तरह देर तक रोती रहीं।

शाम को रमेश कुछ हरी घास गाय के आगे डाल गया, परंतु गाय ने मुँह नहीं मारा। यह देखकर राजरानी का दिल बैठ गया। उसने उस रात चूल्हा नहीं जलाया। न खाया, न चारपाई पर लेटी। बस अलाव जलाकर गाय के पास बैठी रही। दोनों एक-दूसरे को देखकर भविष्य के बारे में सोच रही थीं, परंतु तय नहीं कर पा रही थीं कि उन्हें क्या करना है?

गाय खड़ी टुकुर-टुकुर राजरानी को देख रही थी। राजरानी बुझती आग को कुरेद रही थी। कुछ देर बाद आग भी बुझ जाएगी, फिर जाड़ा भगाने के लिए गरमी कहाँ से आएगी? और जीवन की गरमी कहाँ से आएगी? अंतत: आग बुझ गई। बैठने का कोई सहारा न रहा। जीने की भी कोई उम्मीद नहीं थी। राजरानी कराहती-सी उठी और डरते-डरते गाय के पास गई। गाय जैसे उसी के पास आने का इंतजार कर रही थी। उसने अपना मुँह आगे कर दिया, राजरानी उसे पुचकारने लगी। गाय अपनी चटपटी जीभ से उसके खुरदरे रूखे हाथों को चाटने लगी। राजरानी के पूरे शरीर में ममता की लहर दौड़ गई।

परंतु उसे ममता में पड़कर कमजोर नहीं होना था, उसने कुछ तय कर लिया था। गाय का सिर सहलाते हुए बोली, ''मेरी बहना, मुझे माफ कर देना। हम दोनों का साथ यहीं तक था। अब मैं तुम्हारी और सेवा नहीं कर सकती। तुम्हारा चारा-भूसा खत्म हो गया है। मेरा भी जल्दी ही खत्म हो जाएगा। मैं तुम्हें अपनी आँखों के सामने मरता नहीं देख सकती।'' कहते-कहते वह सुबकने लगी और झुककर गाय के मुँह को अपने आँचल में छिपा लिया। गाय और ज्यादा उसके बदन से सट गई, जैसे वह राजरानी की ममता को पाकर निहाल हो गई थी।

मन को कड़ा कर राजरानी ने गाय के गले से रस्सी खोल दी। रस्सी को खूँटे से खोलकर अलग रख दिया और गाय को अपने से अलग करते हुए कहा, ''जा बहन, चली जा, जहाँ तेरा मन करे, बाहर रहेगी, तो कुछ दिन और जिंदा रह लेगी। बहुत सारे जानवर बाहर घूम रहे हैं। तू भी उन्हीं के झुंड में मिलकर आजादी से घूम-फिरकर इधर-उधर मुँह मार लेगी तो पेट भरा रहेगा। मेरे घर से तेरा चारा-पानी उठ गया। जा, चली जा!'' उसने धकियाया, परंतु गाय टस-से-मस नहीं हुई।

राजरानी का हृदय दहल रहा था, आँसू थमने का नाम नहीं ले रहे थे। बाहर निविड़ अंधकार था। कोहरा बहुत घना था, हाथ-को-हाथ नहीं सूझ रहा था। इतनी ठंड में गाय क्या बाहर जाएगी? भूख लगेगी तो चली जाएगी। खूँटे से तो आजाद है ही, कब तक खड़ी रहेगी? जब उसे एहसास होगा कि वह बँधी हुई नहीं है तो भाग जाएगी।

राजरानी ने एक बार फिर से गाय की चुम्मी ली और आँसुओं को दबाती हुई चिराग उठाकर घर के अंदर चली गई। दरवाजा बंद करते हुए उसे ऐसा लगा, जैसे उसका कलेजा हलक से बाहर आ जाएगा। वह फिर सिसक पड़ी। सारी रात उसे नींद नहीं आई। चारपाई पर करवटें बदलती रही। सुबह हलकी झपकी लगी तो डरावने सपने ने उसे फिर से जगा दिया। परंतु चारपाई से नहीं उठी। दु:खी होते हुए भी वह निश्‍चिंत थी कि आज उसे गाय के लिए चारा-पानी का इंतजाम नहीं करना है। उसे अपने भी खाने-पीने की चिंता नहीं थी। आज उसकी भूख-प्यास जैसे मर गई थी।

जब वह उठी तो उसे लगा, जैसे उसके शरीर में जान नहीं है। फिर भी उठना तो था ही। वह उठी और दु:खी मन से घर का दरवाजा खोला। सबसे पहले उसकी नजर गाय के ठीहे पर गई। उसका जी धक् से रह गया। उसे अपनी आँखों पर विश्‍वास नहीं हुआ। उसने आँखें मिचमिचाकर देखा कि गाय अपने ठीहे पर वैसे ही खड़ी थी, जैसे कल रात में उसे छोड़कर गई थी। वह लगातार दरवाजे की तरफ देख रही थी। जैसे ही राजरानी ने दरवाजा खोला, वह दौड़कर आगे आई और उसके हाथों को चाटने लगी।

राजरानी हिलक-हिलककर रोने लगी। गाय को गले से लगाकर उसे चूमने लगी। ममता का सागर उसके हृदय में उछाल मारने लगा। वह बुदबुदा रही थी, ''मेरी बहन, तू क्यों इतना मोह में पड़ी है? मुझे भी मोह में डाल रही है। सगे बेटा-बेटी, बहुएँ-पोते, नाती सभी मेरा साथ छोड़ गए, तू ही मेरा साथ नहीं छोड़ रही है। कौन कहता है कि तू जानवर है। जानवर तो मेरे सगेवाले हैं, तू नहीं!''

इस अंक के चित्रकार

सिद्धेश्‍वर

जाने-माने लेखक एवं चित्रकार। 'बूँद-बूँद सागर' (लघुकथा-संग्रह); 'इतिहास झूठ बोलता है' (कविता-संग्रह); 'ढलता सूरज-ढलती शाम' (कहानी-संग्रह); 'दहशतजदा' (उपन्यास-अंश) प्रकाशित। इसके अतिरिक्त कई पुस्तकों का संपादन किया। कई सम्मान व पुरस्कारों से सम्मानित। संप्रति वरीय टिकट परीक्षक (पूव मध्य रेवले)।

सा
अ

सिद्धेश सदन,
किड्स कार्मल स्कूल के बाएँ
द्वारकापुरी, रोड नं.-२, हनुमाननगर,
कंकड़बाग, पटना-८०००२०
दूरभाष : ९२३४७६०३६५

उसने गाय को खुला ही रहने दिया। उससे अलग होकर बोली, ''कल से तू भूखी है। थोड़ी देर रुक, मैं अभी घास छीलकर लाती हूँ।'' वह भागती-सी घर के अंदर गई। उसके अंदर पता नहीं कहाँ से इतनी स्फूर्ति और ऊर्जा आ गई थी, जबकि वह स्वयं भूखी थी। कल से उसके पेट में अन्न का एक दाना भी नहीं गया था।

आज राजरानी के मन में खुशी का असीम संचार हो रहा था। जाने कैसा संयोग था कि आज मौसम भी खुशगवार हो गया था। सुबह से ही कोहरा छँटने लगा था और अब सुखद धूप खिली हुई थी।

भूसे की कोठरी से इधर-उधर बिखरा भूसा समेटा। थोड़ा सा ही निकला, परंतु राजरानी को अफसोस नहीं हुआ। उसने उस भूसे में एक किलो के लगभग आटा मिलाया और गाय के सामने डालते हुए कहा, ''तब तक इसी से पेट भर, मैं अभी हरी घास छीलकर लाती हूँ।''

और वह एक जवान औरत की तरह मन में खुशी की लहरें समेटते हुए हँसिया-खुरपी लेकर भूखी-प्यासी ही खेतों की तरफ निकल गई।

सा
अ

७, श्री होम्स, कंचन विहार,
बचपन स्कूल के पास, लामती
विजय नगर, जबलपुर-४८२००२ (म.प्र.)
दूरभाष : ०९९६८०२०९३०

भारतवंशी रोमा यायावर : कल और आज

• श्याम सिंह 'शशि'

राहुल सांकृत्यायन ने धर्म और घुमक्कड़ी की व्याख्या करते हुए लिखा है—''किसी-किसी पाठक को भ्रम हो सकता है कि धर्म और आधुनिक घुमक्कड़ी में विरोध है, लेकिन धर्म से घुमक्कड़ी का विरोध कैसे हो सकता है? प्रथम श्रेणी के घुमक्कड़ कितने ही धर्मों के संस्थापक हुए और कितनों ने अद्‌भुत साहस का परिचय दिया तथा दुनिया के दूर-दूर देशों की खाक छानी। फाहियान, ह्वेनसांग और इत्सिंग के दुर्दम्य साहस का परिचय उनकी यात्राओं में पाया जाता है। मार्कोपोलो का उस समय की अज्ञात दुनिया में घूमना और देखी हुई चीजों का सजीव वर्णन आज भी घुमक्कड़ों के हृदय को उल्लसित कर देता है।''

मैंने वर्षों पूर्व यायावर-संस्कृति पर शोध आरंभ किया था और मेरे शोधस्थल थे—चंबा के मनमोहक धौलाधार, भरमौर और उसके आस-पास के गीत गाते गाँव, गद्दियों और गुज्जरों के काफिले तथा फिर पंगवाल व किन्नरों के बीच। यहाँ की प्रकृति की सात्त्विकता और ऋजुता ने मेरे मानवशास्त्र को नई दिशा देकर महानगरों की ओर भेजा। भारतीय आदिम जाति सेवक संघ में तथा अन्यत्र मेरे अध्ययन-पात्र यदा-कदा मिलते रहे। उनसे परिवर्तनों के संबंध में प्रश्न करता और फिर कुछ नया जोड़ता। यूरोप और अमरीका में भी यायावरों के बीच रहा। ये यायावर रोमा, जिप्सी, सिगानों, मानुष आदि संज्ञाओं से जाने जाते हैं। मेरा स्पष्ट अभिमत है कि ये लोग एक हजार वर्ष पूर्व पश्चिमोत्तर भारत से अपना घर-बार छोड़कर चले गए थे। पश्चिमोत्तर भारत में हिमाचल प्रदेश भी आता है। जिस प्रकार गद्दियों के प्रवास के बारे में कहा जाता है—'उजड्या लाहौर ते वस्या भरमौर।' उसी प्रकार इन लोगों के बारे में भी अवधारणा है कि इन रोमाओं के पूर्वज लाहौर अथवा पंजाब से बड़ी संख्या में पश्चिम की ओर गए थे। इस लेखक के अद्यतन अनुसंधान के आधार पर रोमा केवल पंजाब से ही नहीं गए, बल्कि राजस्थान, महाराष्ट्र, गुजरात, मध्य प्रदेश, वर्तमान हरियाणा, दिल्ली तथा पश्चिमी उत्तर प्रदेश आदि से भी गए थे।

रोमा-संस्कृति विश्व की सबसे विशाल यायावर संस्कृति है; क्योंकि वे लोग रोमानिया, युगोस्लाविया सर्बिया, मेसोडोनिया, हंगरी, जर्मनी, फ्रांस', स्विट्जरलैंड, डेनमार्क, फिनलैंड, इटली, ब्रिटेन, कनाडा, अमरीका और रूस तथा अन्य देशों में घुमक्कड़ी करते रहे हैं। सूर्य मंदिरों की खोज के दौरान मुझे मेक्सिको में भी यायावर संस्कृति को देखने-परखने का अवसर मिला। वहाँ रोमा समुदायों को 'जिटानो' के नाम से पुकारा जाता है। उनकी भाषा में आज भी हिंदी तथा भारतीय

प्रतिष्ठित कवि-साहित्यकार। पचहत्तर देशों में शोध-यात्राएँ। हिंदी-अंग्रेजी में चार सौ से अधिक पुस्तकें। 'रोमा-द जिप्सी वर्ल्ड', 'द नोमेड्स ऑफ इंडिया', 'इंसाइक्लोपीडियाज' दो सौ ग्रंथ। साहित्य सम्मान, लोहिया साहित्य पुरस्कार, महापंडित राहुल सांकृत्यायन सम्मान साहित देश-विदेश में अनेक पुरस्कार।

भाषाओं के अनेक शब्द मिलते हैं और कुछ शब्द पहाड़ी भाषाओं, गद्दी एवं गूजरी बोलियों के भी हैं। उनकी रोमानी भाषा में कान, याँख (आँख), बाल, मानुष (मनुष्य), कालो (काला), फेन (बहन), सालो (साला), सासुर (ससुर), तु (तू) आदि शब्द सुने जा सकते हैं।

रोमाओं का प्रवज्रन एक बार में ही नहीं हो गया। वे एक के बाद एक कई समूहों में गए। ये समूह छोटे-बड़े, दोनों प्रकार के होते थे। इनमें एक परिवार या एक वंश के लोग भी होते थे। यह नहीं कहा जा सकता कि यह प्रक्रिया अब बंद हो गई है, जबकि यूरोप में विभिन्न राष्ट्रीयताओं के लोग बहुत पहले ही बस गए थे। चैकोस्लोवाकिया व अन्यत्र रोमा हंगरी भाषा भी बोलते हैं। वे यहाँ द्वितीय विश्वयुद्ध के बाद पड़ोसी देश हंगरी से आए थे; क्योंकि युद्ध में चैकोस्लोवाकिया के जिप्सियों का हिटलर ने सर्वनाश कर दिया था, जिसे इतिहास में हॉलोकॉस्ट कहा जाता है। वे किस प्रकार एक देश से दूसरे देश में घूमते-फिरते थे, यह शोध का विषय है। डॉ. केनरिक व डॉ. काखोनोस्की उन्हें भारत के पूर्व जाट, क्षत्रिय, गुर्जर, बनजारा, धनगर आदि समाजों से जोड़ते हैं।

एक रूसी शोधकर्ता एम.जे. कोनाविन के अनुसार रूस में जिप्सियों ने ब्रह्मा, इंद्र, विष्णु, लक्ष्मी और पृथ्वी की कथाओं को अक्षुण्ण बनाए रखा है। पृथ्वी देवी को वे 'माता' कहते हैं। चिकित्सक कोनाविन एक उत्साही भाषा-वैज्ञानिक थे। उनका जन्म सन् १८२० में हुआ था। उन्होंने अपने जीवन के ३५ वर्ष जिप्सी लोगों की उत्पत्ति और जीवन के अध्ययन में लगाए तथा वे दो बार भारत आए। उन्होंने १२३ जिप्सी कथाएँ, ८० पौराणिक परंपराएँ और ६२ जिप्सी लोकगीत संकलित किए। उनकी कृतियों के अनुवादक डॉ. ऐलीसेफ ने रूसी न जाननेवाले पाठकों को उनके शोधकार्य की जानकारी देकर महान् सेवा की है। डॉ. कोनाविन इन लोगों के बुद्धिजीवी प्रतिनिधियों से बातचीत करके जिस निष्कर्ष पर पहुँचे थे, वह सब स्मृति में सुरक्षित रह सका।

स्वीडन की भाँति अमरीका ही ऐसा देश है, जहाँ रोमा धन-धान्य संपन्न रहे। अमरीका अग्रदूतों और साहसी लोगों का देश माना जाता

है। यहाँ कारपेंटर समाज के अब्राहम लिंकन तथा ब्लैक वर्ग के मार्टिन लूथर तक मिलेंगे, जो अपनी मेहनत से राष्ट्रपति तक बन गए। यहाँ रोमा ऐसी मोटरकारों में चलते हैं, जिनमें सभी सुविधाएँ उपलब्ध हैं। उन्हें व्यापार करने का पूरा अवसर मिलता है। असीमित संभावनाएँ उनके पास हैं। अमरीका के विस्तृत मैदानों में उनको डेरे डालकर ठहरने की स्वतंत्रता है।

रोमा अब अंतरजातीय विवाह भी करने लगे हैं। मुझे जर्मनी तथा इंग्लैंड में कुछेक अकादमिक व सुशिक्षित परिवार मिले, जिनमें पति गाजो (गैर-रोमा) थे तो पत्नी रोमा। अब तलाक की संख्या भी बढ़ी है। रोमा बच्चों के लिए सचल विद्यालय खोले गए हैं, किंतु फ्रांस में उन्हें आज भी पूर्वग्रहों से जूझना पड़ता है। विकास की गति धीमी है। अंतरराष्ट्रीय स्तर पर रोमाओं की कांग्रेस बन जाने से इस समाज को लाभ तो मिला, किंतु संगठन सुदृढ़ न हो सके।

रोमाओं के संयुक्त परिवार टूटने लगे हैं। कारवाँ का जीवन भी बदला है। स्वच्छता तथा पवित्रता के नियम अलग हैं। मृतक को कभी जलाया जाता था, आज दफनाया जाता है। कई विचित्र रीति-रिवाज हैं। उनके लोकगीतों और लोकनृत्यों को दुनिया भर में लोकप्रियता मिली है। उनका जीवन-दर्शन और संगीत दु:ख-दर्द को भुला देता है, भले ही यह क्षणिक हो। आइए, एक लोकगीत की कुछ पंक्तियाँ देखें—''बरो पानी (समुद्र) दी हुन्नालो आ दी पानी/ओ हुन्नालो बरो पानी/हुन्नालीन सारसा/कोस इट कांट ताल आंडूरो/ऐन गुरमीन आजा।'' (पानी का गर्जन सुनो/गरजते हुए महासमुद्र का/यह सदैव से गरजता रहता है)। चार्ली चैपलिन, रेशमा, यूल ब्रिन्नर जैसे कलाकार इस समाज में जनमे थे। इस दिशा में गहन अनुसंधान की आवश्यकता है।

रोमाओं को पीड़ा सहने के अतिरिक्त और कोई उपाय नहीं था, इसलिए उनके यहाँ इस प्रकार की एक कहावत ही बन गई, 'पीड़ा सम्मान का प्रतीक है।' इविंग ब्राउन ने लिखा है—'उन्हें मारो, उन सबको मारो।' एक चिल्लाया—'उनको मर जाने दो।' दूसरा चिल्लाया, तब मैंने एक तीसरे को कहते सुना, 'क्यों? बेचारे निर्धन जिप्सियों ने किया क्या है?' मैं भगवान् को पुकारकर पूछता हूँ, 'हाय! हम कितने कम हैं, हम निर्धन-काले लोग?' कुछ देशों में रोमाओं को अपराधी जातियों में शामिल किया गया। भारत में भी अंग्रेजों द्वारा कई ऐसी जातियों को अपराधी करार दिया गया था। (दृष्टव्य : लेखक की अंग्रेजी पुस्तक 'A Social-History of Ex-Criminal Communities, OBCs...', Roma The Gypsy World', 'World of Nomads', 'Nomads of India' आदि।

वास्तव में जिन समाजों ने अंग्रेजों के विरुद्ध लड़ाई लड़ी और भारत की स्वतंत्रता के लिए संघर्ष किया, उन्हें अपराधी जाति घोषित कर दिया गया, यह एक ऐतिहासिक तथ्य है। यही स्थिति विदेशों में रोमाओं की रही। भारत की क्षत्रिय-राजपूत जातियों की तरह रोमा समुदायों में ७५ प्रतिशत ए.बी.ओ. रक्त समूह पाया जाता है तथा अब उनकी सामाजिक-आर्थिक स्थिति प्राय: भारत के पिछड़े, दलित आदिवासी वर्गों की तरह है।

रोमा परंपरागत परिवारों में शिशु का जन्म दैवी घटना मानी जाती है। जच्चा को किसी खुले स्थान में या किसी गाजो (गैर जिप्सी) के घर प्रसव करना होता है। जन्म देने के बाद बच्चे को वह अपने तंबू में लेकर आ जाती है। चार सप्ताह उसे अशुद्ध माना जाता है। कई देशों में खानाबदोश रोमा नवजात शिशु को तुरंत ठंडे पानी में नहलाते हैं, ताकि वह सर्दी का प्रकोप सह सके। दुष्ट आत्माओं से बचाने के लिए विधि-विधान हैं।

रोमाओं में शिक्षा का कोई महत्त्व नहीं था, क्योंकि वह तो उनको बड़े-बूढ़ों से ही मिल जाती थी। इंग्लैंड सहित कई देशों में सचल जिप्सी विद्यालय खोले गए थे। शायद अब उनका स्वरूप आधुनिक दूरस्थ शिक्षा प्रणाली की तरह बदल गया है। आजकल रोमा समाज के इलीट वर्ग शिक्षा का महत्त्व समझने लगे हैं। उनमें प्रोफेसर, शिक्षक, डॉक्टर, इंजीनियर, उद्यमी, बिजनेसमैन, राजनेता आदि भी देखे जा सकते हैं। 'जिप्सी' डेरोगेटरी शब्द समझा जाता है। अत: उसके स्थान पर 'रोमा' शब्द सर्वमान्य हो गया है, जो बहुवचन होता है, किंतु वह हिंदी में 'रोमाओं' बन गया है। इसी तरह 'रोम' एकवचन है, किंतु उसे 'रोमा' लिखते हैं।

रोमा समाज में महात्मा गांधी, जवाहरलाल नेहरू, इंदिरा गांधी तथा आजकल डॉ. अंबेडकर के नाम बड़े आदर से लिये जाते हैं। वर्तमान प्रधानमंत्री श्री नरेंद्र मोदी व विदेश मंत्री श्रीमती सुषमा स्वराज भी अत्यंत लोकप्रिय हैं। फरवरी २०१६ में भारतीय सांस्कृतिक संबंध परिषद् द्वारा अंतरराष्ट्रीय सहयोग परिषद् के तत्त्वावधान में आयोजित अंतरराष्ट्रीय रोमा सम्मेलन में अनेक देशों के रोमा विद्वानों व कलाकारों ने भाग लिया था, जिसका उद्घाटन श्रीमती सुषमा स्वराज ने किया था। हार्ट सर्जरी के कारण मैं उपस्थित नहीं हो सका, किंतु मेरे संस्थान रिसर्च फाउंडेशन के शिक्षक व स्कॉलर वालंटियर्स के रूप में सम्मलित हुए थे। बाद में रोमा सगंठन के अध्यक्ष श्री जोवन दमजानोविच, महासचिव वैराम हलिति सहित कुछ रोमा मेरे आवास पर आए थे। डॉ. लोकेश चंद्र, अध्यक्ष भारतीय सांस्कृतिक संबंध परिषद्, श्री श्याम परांडे, एआरएसपी, डॉ. शशि बाला आदि का महत्त्वपूर्ण योगदान रहा।

रोमा समुदायों में सतसारा, काली व कुछ भारतीय देवी-देवताओं के प्रति आस्था रही है। रोमाओं के अनेक पूर्वज मुसलमान व ईसाई बन गए थे। किंतु उनमें भी हिंदुत्व तथा पेगानिज्म विद्यमान है। विश्व के कोने-कोने से लाखों रोमा आज भी प्रतिवर्ष दक्षिण फ्रांस में एकत्र होते हैं और सतसारा देवी की पूजा करते हैं। उसे वे काली भी कहते हैं, जो

दुर्गा का स्वरूप मानी जाती हैं। उसे बंगाल-परंपरा की तरह जलस्पर्श कराया जाता है, पर विसर्जित नहीं किया जाता। धर्म उनके जीवन का अंग है। कभी उनके यहाँ यज्ञ भी होते थे, गोत्र-परंपरा थी और हिंदू कर्मकांड भी प्रचलित थे, किंतु खानाबदोशी के कारण जीवन-दर्शन ही बदल गया। पर जो कुछ शेष है, वह भारत की पुरातन परंपराओं की धरोहर है।

रोमा भारत को आज भी बारो थान (बड़ा स्थान) कहते हैं। वर्ष २००१ में उन्हें जब हरिद्वार तथा ऋषिकेश की यात्रा कराई गई तो उन्होंने श्रद्धापूर्वक मंदिरों के दर्शन किए तथा यहाँ का गंगाजल वे अपने साथ ले गए। उन्होंने प्रतिज्ञा की कि वे भविष्य में अपने पूर्वजों की धरोहर, भारतीय संस्कृति को अपने-अपने देशों में सुरक्षित रखेंगे। यह सम्मेलन मोदी फाउंडेशन, हिंदू हेरिटेज प्रतिष्ठान, रिसर्च फाउंडेशन व संस्कृति मंत्रालय के सहयोग से संपन्न हुआ था। वे तत्कालीन प्रधानमंत्री श्री अटल बिहारी वाजपेयी से भी मिले थे। वर्ष २००७ में जर्मन की एक रोमा कलाकार कथारीना पोलक की चित्र-प्रदर्शनी रोमा रिसर्च सेंटर, रिसर्च फाउंडेशन, भारतीय विद्याभवन तथा आइफैक्स आर्ट गैलरी, दिल्ली में लगाई गई थी। इसमें स्थानीय कलाकारों ने भाग लिया था। इन पंक्तियों के लेखक ने सर्बिया गणराज्य बेलग्रेड की पार्लियामेंट में २१-२३ अप्रैल, २०१२ को विश्व रोमा कांग्रेस में भारतीय सांस्कृतिक संबंध परिषद् के सहयोग से भाग लिया था। रोमा समाज पर नृवैज्ञानिक शोध-कार्य के नाते मुझे इंटरनेशनल रोमा कल्चरल यूनिवर्सिटी के अध्यक्ष (चांसलर) व रोमा शिक्षा कमिश्नर आदि पदों का कार्यभार सौंपा गया था।

अनुसंधान, बी-४/२४५,
सफदरजंग एन्क्लेव, नई दिल्ली-११००२९
दूरभाष : ९८१८२०२१२०

नवगीत

दीये जलते रहे

● यश मालवीय

बीते कल के बरामदे में

बीते कल के बरामदे में
कल की छाया टहल रही,
एक वही तारीख हाथ ही
मछली जैसी फिसल रही।

कुछ बातें अब तक जिंदा हैं
कुछ यादों पर धूल पड़ी,
वक्त तेज कदमों से निकला
बँधी रह गई हाथ घड़ी।

नई सुबह की यह भूमिका
तकिए-चादर बदल रही,
चाँद बादलों का सिरहाना
पाता था, सो जाता था
छत पर दोपहरी का सूरज
आता था, खो जाता था,
गेंद रोशनी की अँधियारे में
रह-रहकर उछल रही।

मौसम बदला, मगर नहीं
बदला ढुलमुलपन मौसम का
और कठिन हो गया समझना
मर्म घाव के मरहम का,
ठंडी ओस फूल पर बैठी
मन-ही-मन में उबल रही।

जग रहा है भाव संचारी

हम तुम्हारे बहुत आभारी
जग रहा है भाव संचारी।
आँच देती ओस वाले
फूल में तुम ही बसे,
बह रहा संगीत तुममें
तार वीणा के कसे,
तुम्हीं से त्योहार सारे
तुम्हीं त्योहारी
तुम्हें देखा तो सुबह का
मन जेहन में सज गया
समझ आया नहीं
सूरज उगा और नौ बज गया
व्यर्थ सा लगने लगा
हर काम अखबारी,
एक लंबी सड़क
ले आई नदी के पुल तलक
'तलत' को सुनते हुए
फिर आँख आई है छलक,
दीये जलते रहे
उजियारा रहा तारी।

एक अकेला फूल

ढूँढ़ रहे थे और
और कुछ मिलता चला गया
धीरे-धीरे साँसों में
दिन खिलता चला गया,
नीला कागज नहीं मिला
पर मिली गुलाबी कॉपी
पलभर को स्थगित हो गई
सारी आपाधापी,
एक अकेला फूल
हवा में हिलता चला गया।

पल छिन ठहरा
मूँगफली सी खुशी टूँगने में
वही न पाए,
मिला बहुत कुछ, मगर ढूँढ़ने में
बातों का ही धनी
होंठ को सिलता चला गया।

हरे ताल में छुपे-अनछुपे,
हरियाली के आखर,
परदे में ही रहे मगर
सबकुछ कर दिया उजागर,
रेशम से रेशम का धागा
छिलता चला गया।

हरा पेड़ कटता है

हरा पेड़ कटता है
कटती है झाड़ी,
रात गए चलती है
नींद पर कुल्हाड़ी,
जंगल के सीने पर
चलता बुलडोजर,
डसते हैं साँप
काटते बिच्छू-गोजर,
मौसम का हर दावेदार
पिए ताड़ी,
पत्ती-पत्ती बहार की
बोटी-बोटी,
पत्थर के हैं अचार
पतझड़ की रोटी
चौराहे पर अपना घर
अपनी बाड़ी,
चले नहीं जिस पर
उस पथ के भी पेड़ गिनें
बात करें फसलों की
खेतों की मेंड़ गिनें,
सपने हैं चोट दे रहे
तिरछी-आड़ी।

रामेश्वरम्, ए-१११ मेंहदौरी कॉलोनी,
इलाहाबाद-२११००४ (उ.प्र.)
दूरभाष : ९८३९७९२४०२

जोश में होश कहाँ रहता है

● बी.एस. जौहरी

डॉ. बी.एस. जौहरी दिल्ली के जाने-माने हाम्योपैथी चिकित्सक हैं। मानसिक रूप से कम विकसित छोटे बच्चों के इलाज में उनको महारत हासिल है। वे अनेक सामाजिक संगठनों से जुड़े हुए हैं।

आइए जंगल बसाएँ

आइए कुछ जंगल फिर से बसाएँ,
कुछ जानवरों के घर और पंछियों के लिए घोंसले बनाएँ।
बादल नाराज बारिश कहीं कोप भवन में बैठी है,
क्यों न उत्साह और उमंग की नई चेतना उनमें जगाएँ।

जन्मदिन बच्चों का हो तो चलो चंपा और चमेली ले आएँ,
घर में आज कुछ उदासी सी कहीं दिखती है,
आइए घर को गुलाब और रात की रानी से फिर से महकाएँ।

तितलियाँ आजकल उदास सी बहुत दिखती हैं
ढूँढ़ती फिरती हैं खुशबू से भरे फूलों को,
आइए बेला-मोतिया और जूही फिर से घर में ले आएँ,
तितलियों को जीवन और बच्चों को दौड़ने का कारण दिलवाएँ।

कल एक गौरैया अजमेर के एक घर में दिखी
मैंने पूछा, 'अब दिल्ली में नहीं दिखती हो?'
बोली, 'दिल्ली में अब फलों के पेड़ नहीं बाकी हैं,
आपके लिए तो कबूतर और कौवे ही काफी हैं।'
आइए फिर से कुछ अमरूद, अनार और जामुन लगाएँ,
और अपनी प्यारी चिरैया को वापस बुलाएँ।

घर की चौखट भी कुछ सूनी-सूनी सी बहुत लगती है
क्यों न घर के पूरब में आम और पश्चिम में पीपल लगाएँ,
नीबू तो समृद्धि का प्रतीक है,
घर के ताजा नीबू से खाने का स्वाद फिर से बढ़ाएँ।

घर के आँगन की तुलसी भी कुछ नाराज सी दिखती है,
आइए एक संध्या का दीया रोज वहाँ भी जलाएँ।

बरसों से पेड़ों को बहुत बेरहमी से हमने काटा है,
इक नई कार के लिए घर के बाहर का बाग हमने उजाड़ा है
क्यों न सरकार से कहें पेड़ में भी चेतन है,
इक-इक आधार कार्ड चलो उनका भी बनवाएँ।

मजबूरी

घर से वह अब मकान हो गया,
एक शख्स क्या रुखसत हुए चमन वीरान हो गया।

एक फूल कब तक चमन आबाद करेगा,
हर गुंचे को यह अदब निभाना पड़ेगा।

अदब की बात इस दौर में अजूबी है,
सहना और कुछ न कहना बुजुर्गों की मजबूरी है।

मजबूरी की बात क्यों बार-बार करते हो,
तुम क्या अकेले हो, जो आज के जोश से डरते हो।

जोश में होश कहाँ रहता है,
और इस मदहोशी से बुढ़ापा यहाँ डरता है।

बुढ़ापा सोच के एक सिरहन सी होती है,
लाठी को क्या हुआ, यह क्यों अपना विरद भूली है।

विरद की बात इस युग में अब बेमानी है,
यह तो अब घर-घर की अनकही कहानी है।

ए-११५, सूरजमल विहार
दिल्ली-११००९२

राम झरोखे बैठ के

दाढ़ी, बुद्धिजीवी और बादल

● गोपाल चतुर्वेदी

हम में भी हाल में बुद्धिजीवी बनने और दिखने का शौक चर्राया है। कुछ अक्ल के जीव साधु संतों सी दाढ़ी पाल लेते हैं। उन्हें मुगालता है कि इससे उनकी बुद्धिजीवी की छवि बनेगी। वे भूल जाते हैं कि इससे वे बुद्धिजीवी कम, अक्ल के बैताल अधिक लगते हैं। यों भी इधर साधु-संतों की साख गिरी है। पारंपरिक विक्रम-वैताल की कथा के विपरीत भ्रम होता है कि दाढ़ी ऐसे बुद्धिजीवियों पर सवार है। इसका एक लाभ जरूर है कि जब कहीं चर्चा में कोई गंभीर विषय उठता है तो उनका दाढ़ी सहलाने का कार्यक्रम चल निकलता है। स्वाभाविक है कि इससे जुबान पर ताला जड़े, लिहाजा वह हर विवाद से परे हैं। ये भव्य मुद्रा के चुप्पे बुद्धिजीवी हैं। इनकी पहचान कोई वैचारिक उपलब्धि न होकर केवल इनकी लहलहाती दाढ़ी है। कुछ का आरोप है कि ये चिंतन के वशीभूत होकर दाढ़ी पर हाथ नहीं फेरते, इसका सीधा-सादा कारण उसमें जुओं की पूरी कॉलोनी का वास होना है।

हमें इस टैगोरी दाढ़ी की उपयोगिता पर शक हुआ। दूसरों के मजाक का पात्र बनने का क्या फायदा है? हमने मित्रों से चर्चा के दौरान खोज की कि इधर अज्ञेय फैशन में हैं। यानी उन जैसी दाढ़ी लोकप्रिय है; अध्ययन-लेखन से किसका वास्ता है? आजकल फैशन ही साहित्य है। वैसे भी अब लिखने-पढ़ने का जमाना न होकर, दिखने-दिखाने का है। बहुत दिनों से आँखों को आराम देने का चलन है। किताबों का 'फ्लैप' पढ़ लिया, यही क्या कम है? देखने को टी.वी. है, उसमें समाचार भी है, चैनल के आका के विचार भी और सबसे महत्त्वपूर्ण मनोरंजन भी। आँखों पर भार है, पर दिमाग पर नहीं। पढ़ने में दोनों की सक्रियता आवश्यक है। बाजार के भौतिकवाद में लाभ-हानि महत्त्वपूर्ण है। किताब पढ़ने का लाभ क्या है? 'पढ़ाकू श्रेष्ठ' का कोई सम्मान तक नहीं है? मेरा सुझाव है कि झूठी-सच्ची समाज-सेवा या लेखन में श्रेष्ठता की बजाय सरकार को पढ़ाकू-प्रतिभा को बढ़ावा देने के नेक इरादे से ऐसे लोगों को 'फ्लैप-पद्मश्री' से अलंकृत करना चाहिए। फ्लैप अध्ययन का कुछ लाभ तो हो? यह महान् सम्मान किसी विश्वविद्यालय के कुलपति के प्रमाण-पत्र और राज्य के मुख्यमंत्री की अनुशंसा पर दिया जाए। पूरी निर्णय प्रक्रिया का खाका है मेरे दिमाग में। यदि सरकार ने इस विषय में कोई कमेटी गठित की और हमें उसमें सम्मानजनक स्थान दिया, तभी हम उसका खुलासा करेंगे।

हम जानते हैं कि अध्ययन-लेखन में अज्ञेय बनने की अपनी कूवत नहीं है, पर दाढ़ी का अनुकरण तो आसान है। बुद्धिजीवी दिखने के लिए कइयों ने ऐसा कार्य किया है। कुछ ने ऐसा करके पुरस्कार-सम्मान भी हथियाए हैं। क्या पता, अपनी किस्मत भी चेते? वैसे तो दाढ़ी रखकर हम एक निष्कर्ष पर पहुँचे हैं कि इसे रखना तो आसान है, पर इसका रख-रखाव कठिन है। एकाध बार हमने शेव करने की प्रक्रिया में दाढ़ी-स्थल से बिना छेड़-छाड़ किए पाया कि संतुलन बराबर नहीं है। दाढ़ी कुछ दक्षिणपंथी हो चली है, यानी बाईं ओर की फसल कुछ अधिक कट गई है। हमें शीशे में अपना चेहरा कुछ हास्यास्पद सा दिखता है। वैचारिक झुकाव से हमें शिकायत नहीं है, पर दाढ़ी देखकर प्रतीत होता है कि चेहरा सीधा न होकर जैसे दाईं ओर कुछ लटक सा गया है। संभव है कि यह केवल मन का भ्रम हो?

फिर भी हमने स्थिति में सुधार के लिए 'कन्हैया केश कर्तनालय' का तत्काल रुख किया। यहाँ यह स्पष्ट करना अनिवार्य है कि कृष्ण का इस दुकान से उतना ही संबंध है, जितना मथुरा-वृंदावन की गोपियों का महाभारत से। दुकान के स्वामी कन्हैया राम हैं और उन्होंने अपना नाम केश कर्तनालय से जोड़कर अपने अहं को तो संतुष्ट किया ही है, साथ ही हजामत की कला को देवत्व से भी जोड़ा है। उन्होंने एक बार हमारे लटके हुए चेहरे का शीशे में अध्ययन किया, फिर हमें सलाह दी, ''पंडितजी! जब हम हैं तो आप अपने चेहरे के साथ ऐसी अवांछित भौगोलिक हरकत क्यों करते हैं? हमारे हाथ बालों में कंघी फँसाकर, कैची से नपाई के अभ्यस्त हैं। मजाल है कि दाएँ-बाएँ कटाई में रत्ती भर का भी अंतर आ जाए! यह जो आपने ठुड्डी से होंठों तक चौथाई दाढ़ी का खूबसूरत नक्शा उकेरा है, इसमें शक्ल के भूगोल के साथ गणित का ज्ञान भी होना-ही-होना। इसके अभाव में कहीं रेजर ज्यादा चला है, कहीं कम। मेहरबानी करके ऐसा प्रयोग करने का हमें मौका दीजिए, वरना आप कहीं 'बंदर के हाथ उस्तरा' की मसल सच न कर बैठें, वह भी स्वयं के साथ।''

इस भूमिका के साथ कन्हैया ने हमारे चेहरे के संतुलन को सँवार तो दिया, पर पूरे पचास रुपए धरवाकर। उन्होंने भविष्य के लिए अनुरोध के स्वर में निर्देश भी दिया, ''आगे से जब भी इस दिलकश दाढ़ी में

कतर-ब्योंत की जरूरत पड़े तो सीधे हमारे सैलून की ओर आएँ, नहीं तो ऐसा दुर्घटना होती ही रहेंगी। आपका काम हम रियायती दर पर कर देंगे। बस शर्त यही है कि कृपया दुर्घटना के बाद न पधारें।''

उनकी चर्चा से यह तथ्य तो स्पष्ट हो गया कि बुद्धिजीवी दिखना भी सबके बस की बात नहीं है। इसमें भी हुनरमंद लोग बाजी मार लेते हैं। हमारे लिए तो यह एक खर्चीला सौदा है। इसमें अपनी सफलता कलाकार-हज्जाम कन्हैया पर निर्भर है। हर हफ्ते में एक बार उसके केश कर्तनालय में नियमित हाजरी दें, तभी सफलता संभावित है। यों तो दाढ़ीवालों में बुद्धि का बुलडॉग दिखने की भयंकर प्रतियोगिता है। यह भी तय नहीं है कि कब कोई नया फैशन चल निकले? उसे अपनाने वाले दूसरों से बाजी न मार लें? वाकई जहाँ बुद्धिजीवी होने से कहीं अधिक महत्त्व बुद्धिजीवी दिखने का है, वहाँ कुछ भी संभव है। हमें लगने लगा कि दाढ़ी-दौड़ में आगे निकलना मुश्किल है।

सवेरे देखा तो सूरज गायब था। पता नहीं कुदरत के कार्यालय में गुमशुदा की रिपोर्ट लिखी जाती है कि नहीं? या वहाँ भी धरती जैसा आलम है? बिना खर्चा-पानी के एफ.आई.आर. संभव नहीं है तो तफशीश का सवाल ही कैसे उठे? बहरहाल सूरज को बादलों ने ढक लिया था, वह भी ऐसे कि किसी को संदेह तक न हो कि यहाँ कभी जीवन दायिनी रोशनी का केंद्र रहा होगा! प्रकाश का श्रोत यदि छह-सात दिन इसी प्रकार अदृश्य रहे तो त्राहि-त्राहि मच जाए। वादे से मुकरना गृह-युद्ध का वायस बनता। हम छाते का रक्षा-कवच साथ लेकर बाजार गए और हमेशा की तरह ठगे जाकर आटा-सब्जी लेकर छुट्टी या विवाह की कीमत चुकाने घर लौट आए। हमारा दृढ़ निश्चय था कि आज पूरे दिन चिंतन की मुद्रा का जाल उछालकर किसी-न-किसी वैचारिक पंछी को फाँसेंगे।

इसी बीच हमें एक आशा की किरण नजर आई। हमने एक आयोजन में देखा कि दाढ़ीवालों के बीच बैठे एक सज्जन आस-पास की चर्चा से उदासीन होकर ठुड्डी कभी दाईं तो कभी बाईं हथेली पर टिकाए, छत के शून्य को ताक रहे हैं। हमने भी छत पर नजर डाली। वहाँ मकड़ी के जालों के अलावा कुछ और नहीं था। हमें चिंतन के मकड़जाल में उनका खोना अनुकरणीय लगा। आस-पास के बुद्धिजीवी संवाद से बेखबर उनका मौन-चिंतन आकर्षक है। इसको अपनाने में क्या हर्ज है? इस बुद्धिजीवी मुद्रा में न मुँह खोलना आवश्यक है, न दाढ़ी रखना। जुबान हिलाने की भी बचत है और जेब में डाका पड़ने की भी। हमें एहसास हुआ कि बुद्धिजीवी दिखने के लिए इस शानदार नुसखे पर अमल करना क्या बुरा है?

पहले हमने इस नुसखे को कार्यालय में आजमाया। नतीजा कुछ संतोषप्रद नहीं रहा। वहाँ के कलीग, दोस्त कम, दुश्मन अधिक होते हैं। हमारे पड़ोसी ने हमारी चिंतन की मुद्रा की अफसर से शिकायत कर दी, ''सर! लगता है कि पंडित का सिर फिर गया है। सामने फाइलों का ढेर है और उन्हें न निबटाकर वह ठुड्डी हथेली पर टिकाए छत ताक रहा है। हमने याद भी दिलाया कि दफ्तर छत ताकने को नहीं, काम निबटाने को है तो उसकी न मुद्रा बदली, न उसने कोई उत्तर दिया।'' अफसर ने आव देखा न ताव, हमें कमरे में बुलाकर जी भर कर हड़काया। कौन कहे कि घर से वे प्यारे पप्पू से झाड़ खाकर चले हैं? हमें दुःख हुआ। यदि हम, यूनियन के लीडर होते तो वे ऐसा दुस्साहस न करते। हम लौटे तो पूरी तरह से बुद्धिजीवी से बाबू अवतार में आ चुका था। हमने पास बैठे सहयोगी को आग्नेय दृष्टि से घूरा। और कर ही क्या सकते थे? वह मुसकराया और जैसे अपनी जीत की खुशी में कैंटीन की सैर को निकल पड़ा। हम इस निष्कर्ष पर पहुँचे हैं कि दफ्तर में चिंतन ही क्यों, उसकी मुद्रा तक पागलपन का पर्याय है। यहाँ सिर्फ उन कवियों का सम्मान है, जो अफसरों के स्वागत और विदाई में ऊल-जलूल कविताएँ लिखते और गाते हैं। अकसर उनके खाने-कमाने के चक्कर में दफ्तर गोल करने की न शिकायत होती है, न काम-काज में उससे कोई फर्क पड़ता है। वे कार्यालयों के हाथी-दाँत अर्थात् शोभा की वस्तु हैं, जिन्हें सजावट के बतौर किसी अलग कोने में रख छोड़ा है।

हमने दफ्तर से निराश होकर फैसला किया कि चिंतन के नए अंदाज को फर पर क्यों न आजमाया जाए? वहाँ खतरा तो है, पर उसका दायरा सीमित है। कम-से-कम नौकरी गँवाने की आशंका तो नहीं है? बहुत हुआ तो पत्नी की झाड़ खानी पड़ेगी, पर यह तो बहुधा बिना बात भी मुमकिन है। हम इसे दहेज में बिके पति की अनिवार्य नियति मानकर स्वीकार करते हैं। शाम को बहुमंजिली इमारत के अपने फ्लैट की बालकनी में सूखते कपड़ों को खिसकाकर, हमने आसमान देखने की संध बनाई। फिर कुरसी लगाकर वहीं अपनी नई सीखी मुद्रा अपनाकर आकाश के शून्य को ध्यान से ताकने लगा। क्या पता, शून्य की प्रेरणा से कोई नया विचार हाथ लगे! जो अब तक गायब था, वह विचार तो क्या आता, पर पत्नी जरूर आ गई। उन्होंने हमारी प्रश्नचिह्न सी भाव-भंगिमा को देखकर सवाल दागा, ''क्या इरादा है? फाके करने हैं क्या? न घर में आटा है, न सब्जी। कुछ लाना हो तो ले आओ!''

दफ्तर में तो हम हार गए थे, घर की पराजय को कैसे बरदाश्त करते? हमने अनुभव से जाना है कि सौ मर्जों की एक अचूक दवा चुप्पी है। हम चुप रहे। पत्नी ने झुँझलाकर अपनी चेतावनी दोहराई। गांधीजी की सत्याग्रह की पावन परंपरा के अनुपालन में हम अपने मौन व्रत पर अडिग रहे। तंग आकर गृह स्वामिनी ने कुकर मैं खिचड़ी चढ़ा दी। खिचड़ी खाते समय हमने अपना मौन-व्रत तोड़कर उनका और उनकी पकाई खिचड़ी का गुणगान किया। उन्हें आश्वस्त किया कि सबेरे-सबेरे सरोजनी नगर से आटा-सब्जी हाजिर हो जाएगी। फर के अमन-चैन को उनकी तारीफ से स्थापित कर हम चैन की नींद सो गए।

सवेरे देखा तो सूरज गायब था। पता नहीं कुदरत के कार्यालय में गुमशुदा की रिपोर्ट लिखी जाती है कि नहीं? या वहाँ भी धरती जैसा आलम है? बिना खर्चा-पानी के एफ.आई.आर. संभव नहीं है तो तफशीश का सवाल ही कैसे उठे? बहरहाल सूरज को बादलों ने ढक

लिया था, वह भी ऐसे कि किसी को संदेह तक न हो कि यहाँ कभी जीवन दायिनी रोशनी का केंद्र रहा होगा! प्रकाश का श्रोत यदि छह-सात दिन इसी प्रकार अदृश्य रहे तो त्राहि-त्राहि मच जाए। वादे से मुकरना गृह-युद्ध का वायस बनता। हम छाते का रक्षा-कवच साथ लेकर बाजार गए और हमेशा की तरह ठगे जाकर आटा-सब्जी लेकर छुट्टी या विवाह की कीमत चुकाने घर लौट आए। हमारा दृढ़ निश्चय था कि आज पूरे दिन चिंतन की मुद्रा का जाल उछालकर किसी-न-किसी वैचारिक पंछी को फाँसेंगे।

हम बालकनी में स्थापित होकर शून्य को ताकने में व्यस्त हो पाते कि हमारे दृष्टि-पथ पर बादल-ही-बादल आ घिरे। शून्य से वैचारिक अन्वेषण में हम अब तक भले असफल रहे हों, पर बादलों ने हमें नए सोच की सामग्री दे दी।

कितनी विविधता है इन बादलों में, कतई बुद्धिजीवियों की दाढ़ी के समान। कुछ बारिश का आश्वासन लेकर नेताओं की तरह आते हैं और बिना बरसे चले जाते हैं। कुछ ही बादल पानीदार हैं। अधिकतर सुविधा-भोगी हैं। आसमान की ऊँची कुरसी पर बैठकर केवल अपनी जनसेवा के जल का प्रचार ही उनका काम है। गरजते हैं, चमकते हैं, बस बरसते नहीं हैं। ज्यादातर बादल बारिश की आशा जगाकर पधारते हैं और किसी बजट-पर्यटक सा, बिना कुछ खरीदारी किए कहीं और सिधारते हैं। हमें यकीन है कि वहाँ भी कंजूसी का उनका यही रवैया बरकरार रहता होगा?

बादल पानीदार हो या न हो, उसका हमारे जीवन में उल्लेखनीय योगदान है। सामान्य व्यक्ति रोटी-सब्जी की जगह जमीन से सिर उठाकर आसमान देखें, यह कोई कम महत्त्वपूर्ण उपलब्धि है क्या? यों तो जहाँ बादलों की कृपा होती है, वहीं बाढ़ का आगमन भी। जैसे जन्म के साथ मृत्यु एक अनिवार्य स्थिति है, वैसे ही बिना बारिश के सूखा पड़ना भी। कोई सोचे कि पूरी प्रांतीय सरकार कमर कसे रहती है, बाढ़ और सूखे से अपने सूबे को बचाने के लिए। सरकार की कमर केवल जनता से वसूल किए कर की कमाई को बरबाद करके कसी जाती है। इसके बावजूद वर्षा ऋतु के साथ कहीं-न-कहीं बाढ़ का आना और सूखा पड़ना वर्तमान की एक अनिवार्यता है। सरकार का एक वर्ग पहले कमर कसने में दोनों हाथों से पैसा कमाता है, फिर बाढ़ या सूखे से जूझने में। परिणामस्वरूप कई लड़कियों के हाथ पीले होने में और कई युवाओं के विदेश-गमन और अध्ययन में बाढ़ और सूखे का अहम योगदान है। जहाँ गरीबों के घर बाढ़ में बह जाते हैं, वहीं इस विशेष वर्ग के कोठी-महल भी बाढ़/सूखे की इनायत से ही खड़े होते हैं।

हमें ताकते-ताकते पान की दुकान के दार्शनिक का यह कथन भी ध्यान आया कि जीवन में हमेशा सकारात्मक नजरिया अपनाना चाहिए। यदि किसी का नुकसान होता है तो किसी और का फायदा भी। लाभ-हानि झेलनेवाले इनसान ही हैं। सुख और दु:ख दोनों अस्थायी स्थितियाँ हैं। न सुख टिकता है, न दु:ख। उनके दर्शन का सार है कि यदि किसी के घर चोरी हो तो उसे यह सोचकर जश्न मनाना चाहिए कि चोर का घर तो भरा। अब हम भी ठुड्डी कोहनी पर टिकाकर दिखाएँ बुद्धिजीवी हो गए हैं। गौर से देखें तो बादलों के बीच देखनेवालों को कई तरह की दाढ़ियाँ नजर आएँगी। यह भी आभास होगा कि जहाँ चेहरों पर छोटी, बड़ी फैशनेबल दाढ़ियों की भरमार है, वहीं कइयों के पेट में अदृश्य दाढ़ियाँ भी हैं!

सा.अ.
९/५, राणा प्रताप मार्ग
लखनऊ-२२६००१
दूरभाष : ९४१५३४८४३८

सुधी पाठकों से निवेदन

- जिन पाठकों की वार्षिक सदस्यता समाप्त हो रही है, कृपया वे सदस्यता का नवीनीकरण समय से करवा लें। साथ ही अपने मित्रों, संबंधियों को भी सदस्यता ग्रहण करने के लिए प्रेरित करने की कृपा करें।
- सदस्यता के नवीनीकरण अथवा पत्राचार के समय कृपया अपने सदस्यता क्रमांक का उल्लेख अवश्य करें।
- सदस्यता शुल्क यदि मनीऑर्डर द्वारा भेजें तो कृपया इसकी सूचना अलग से पत्र द्वारा अपनी सदस्यता संख्या का उल्लेख करते हुए दें।
- चैक अथवा बैंक-ड्राफ्ट **साहित्य अमृत** के नाम से भेजे जा सकते हैं।
- ऑन लाइन बैंकिंग के माध्यम से सेंट्रल बैंक ऑफ इंडिया के एकाउंट नं. १११०७३४३९३ अथवा CBIN ०२८०२९७ में **साहित्य अमृत** के नाम से शुल्क जमा कर फोन अथवा पत्र द्वारा सूचित अवश्य करें।
- पत्रिका न मिलने पर १५ से २० तारीख तक सूचित कर दें, ताकि वह अंक नए अंक के साथ भेजा जा सके।
- आपको अगर **साहित्य अमृत** का अंक प्राप्त न हो रहा हो तो कृपया अपने पोस्ट ऑफिस में पोस्टमैन या पोस्टमास्टर से लिखित निवेदन करें। ऐसा करने पर कई पाठकों को पत्रिका समय पर प्राप्त होने लगी है।
- सदस्यता संबंधी किसी भी शिकायत के लिए कृपया कार्यालय दिवस में २ से ५ बजे तक फोन नं. ०११-२३२५७५५५, २३२७६३१६ अथवा sahityaamrit@gmail.com पर इ-मेल करें।

दादा की भीनी-भीनी यादें

● सुमन चौरे

दादा चले गए, ऐसे तो कभी नहीं जाते थे! गली के नुक्कड़ पर लगे लाल डिब्बे में चिट्ठी डालने जाएँ, नरसु! नरसु, सेठ की दुकान पर पान खाने जाएँ? पास की रामजीलाल हलवाई की दुकान से बच्चों के लिए गरम जलेबी लेने जाएँ, यानी घर से चार कदम भी दूर जाना हो तो कहकर जाते थे। कहते थे, 'हाऊँ आयो, अब्भी आयो या हाऊँ अऊँजऽऽऽ।' लेकिन इस बार दादा बिना बताए इतनी लंबी दूरी पर कैसे चले गए? उसके बाद वे कभी नहीं आए। दिन-पर-दिन बीते, महीने-पर-महीने, साल-पर-साल बीते जा रहे हैं, पर यह कहकर ही नहीं गए कि कब आऊँगा। वे कैसे आएँगे, अब तो दादा की सिर्फ याद आएगी। ज्येष्ठ की अंधड़ लू-लपट जैसी झुलसाने वाली नहीं, माघ-पौष कही गुनगुनी धूप जैसे मन को सहलाने वाली। घर में रखे दादा के पेन की स्याही सूख गई। एक पैर आगे और एक पैर पीछे की स्थिति में बेतरतीब उतारे गए जूते अब जोड़ी से रखे हैं। उनके कपड़े, कागज आदि सब सामग्री काँच की अलमारी में रख दिए गए हैं। आज दोपहर में डाली गई चिट्ठी का जवाब आया, पर उसे रजिस्टर में चढ़ाकर रख दिया। उत्तर कौन पढ़ पाएगा दादा के लिखे पत्र का? कोई व्यक्ति भूल से आकर दरवाजे पर सिसकियाँ भरकर रो रहा था—हम कालमुखी से इस आशा में आए थे कि जातू भाई हमारा काम करवा देंगे।'

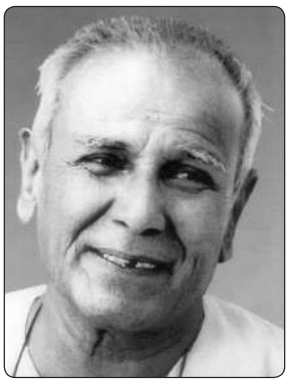

स्व. पं. रामनारायण उपाध्याय

जातू भाई गाँव कालमुखी के प्रतिष्ठित मालगुजार पंडित सिद्धनाथ उपाध्याय की तीन पुत्रोंवाली संतान में बीच के थे। बड़े पुरुषोत्तम (बाबू भाई), दूसरे रामनारायण (जातू भाई), तीसरे शिवनारायण (शिवा भाई)। बड़े भाई पिता की मालगुजारी में हाथ बँटाते थे। छोटे भाई खेती-बाड़ी का काम-धंधा देखते थे और जातू भाई इन सब से परे अपनी दुनिया, लिखना-पढ़ना एवं स्वतंत्रता संग्राम की गतिविधियों में सहभागी होते थे। एक बार की घटना स्वयं दादा सुनाते हैं कि उन्होंने अपने गाँव के पटेल की चावड़ी पर एक सभा की, जिसमें तुलसीकृत रामायण की चौपाई अंग्रेजी शासन के खिलाफ गाई—'जाके राज ना प्रजा सुखारी···'। इस बात की शिकायत खंडवा जिले के धनगाँव थाने में जंगल की आग की तरह पहुँच गई। थानेदार धनगाँव से घोड़े पर सवार होकर कालमुखी पहुँचे, उनकी भुजा पकड़ी और उन्हें मालगुजारजी के सामने खड़ा कर दिया और बोले, 'महाराज! हम आपका आदर करते हैं, वरना आपके बेटे को जेल की कोठरी में ठूँस देते, इसे समझाओ कि अंग्रेजों और अंग्रेजी शासन के खिलाफ लोगों को न भड़काया करे!' इसी प्रकार एक बार और स्वतंत्रता आंदोलन में जाने के लिए गाँव से दूर बने अतर (atar) रेलवे स्टेशन चले गए थे। उन्हें वहाँ से पकड़कर लाया गया। दादा ने ही हमें बतलाया था कि मैं गांधीजी से वर्धा में मिला। गांधीजी ने मुझे सूत्र दिया—'गाँव की सेवा करो'। तब से वे गाँव में रहकर सबके सुख-दुःख के साथी बनकर अपनी कलम चलाते रहे। दादा को अपने पिताजी ने आंदोलन में जाने से इसलिए रोक दिया कि वे सदा बहुत बीमार रहते थे। एक बार उनके कष्ट को देखकर उन्होंने कह दिया—'जा तू', तभी से उनका गाँव का नाम 'जातू' ही रहा।

दादा की स्कूली पढ़ाई की बात करें तो वे सिर्फ कक्षा सात तक ही पढ़ पाए। गाँव में साधन नहीं था, तब खंडवा में अपने बच्चों को पढ़ाने के लिए उनके पिताजी ने खंडवा में एक घर खरीदकर नौकर रख दिया। दोनों भाई आगे नहीं पढ़ पाए। वे अपने गाँव कालमुखी लौट आए। प्रमुख कारण बीमारी ही रही। कालमुखी में ही रहकर दादाजी ने लिखना-पढ़ना और गाँव की सेवा-सहयोग में अपना समय लगा दिया। दादा का जीवन अप्रतिम सादगी से भरा था। उनके स्वभाव व प्रकृति में गाँव का भोलापन था। सबसे भुज भर भेंटना। आते को नमन करना, जाते को 'अरु आव जो' कहकर सत्कार करना। यह उनके पूर्वजों और परिवार की संस्कृति रही। दादा के पास खादी की तीन धोतियाँ और दो कुरतों से ज्यादा कुछ नहीं रहा। दादा को बहुत दम चलता था। यह अस्थमा रोग बरसात शुरू होते ही उन पर घात करता और चार-पाँच महीने बहुत सताता था। जब हम लोग बड़े हो गए, तब रात को सोते समय उनकी पीठ पर तेल मालिश करते थे, तभी दादा बहुत सारी बचपन की बातें हमें सुनाया करते थे। हम पूछा करते थे, ''दादा, आप ने निमाड़ी के गीत, निमाड़ी साहित्य पर कैसे काम करने लगे?'' दादा ने बताया, ''एक बार गणगौर पर्व के अवसर पर रात के समय महिलाएँ बड़े मधुर भाव से टोल में गीत गाती जा रही थीं, मैं दहलीज पर बैठा सुन रहा था। गीत था—शुक्र को तारो रे ईश्वर, ऊँघी रह्यो, तेऽऽऽ की मखऽऽऽ टीकी गाढ़ाओ।

''भीई (माँ) से पूछा कि भाभी यह क्या गीत गा रही हैं? जब

उन्होंने वह गीत गाकर बताया तो मैं अचंभित रह गया। गाँव की अनपढ़, भोली-भाली महिलाओं की कितनी अद्‌भुत कल्पना है। निमाड़ी लोक गीतों में तो मोती की खान है। अत: मैंने लोकगीतों और लोक साहित्य पर काम करना शुरू कर दिया।'' दादा कहते थे कि मेरे इस गीत के लेखों को पढ़कर वासुदेव शरण अग्रवालजी ने ही कहा था कि निमाड़ी के इस लोकगीत पर लाखों-लाख लोकगीत न्योछावर हैं। लोकसाहित्य के मूल से जुड़े दादा लोक से भी कभी विलग नहीं हुए। लोकगीतों की उनकी पहली पुस्तक कालमुखी में आई। जब पुस्तकों के उस बड़े बंडल को खोला तो देखा कि उसके आवरण पृष्ठ पर पलाश के फूलों से लदी टहनी के साथ लिखा था—'जब निमाड़ गाता है।'

गाँव के कई लोग आ गए, भीड़ लग गई। सबने देखा कि पुस्तक कैसी होती है? हाथ में पकड़कर शीश से लगाया और कहा, ''जातू भाई, हमारे लेखे तो कालो अक्खर भैंसी बराबर, अब रात को चावड़ी पर पढ़कर सुनाना, सब सुन लेंगे।'' गाँव के लोग जो पढ़ सकते थे, वे पढ़ते थे, वरना वे पढ़वा लेते थे। दादा के विषय में गांधीवादी चिंतक और मूर्धन्य साहित्यकार श्री विष्णु प्रभाकरजी ने कहा था, ''प्रेमचंद के लेखन को कितने होरियो ने पढ़ा, नहीं जानता, किंतु राम नारायण भाई के साहित्य को उनके गाँव के लोग प्रेम से पढ़ते हैं। परिवार के लोग, बच्चा-बच्चा पढ़ता है। यह उनके लेखन की सार्थकता है।'' दादा की दिनचर्या में कुछ बदलाव आया। हम भाई-बहनों को पढ़ाने के लिए उन्हें खंडवा आना पड़ा। कालमुखी में चार कक्षा पास कर सबको एक के बाद एक बड़ी कक्षा में जाना था। दादा भाई हमें पढ़ाने खंडवा आ गए। कालमुखी में सुबह जल्दी उठते ही दादा गाँव में घूम-घूमकर सबकी खैर-खबर लेते थे। अब वे खंडवा में सुबह ही दादा माखनलालजी चतुर्वेदी के यहाँ ताजा अखबार लेकर जाते और उन्हें समाचार पढ़कर सुनाते थे। उसके बाद कई विषयों पर चर्चा करते और दो-ढाई घंटे बाद घर आते थे, फिर लेखन कार्य में लगे रहते थे।

कालमुखी में एकांत वातावरण में पढ़ना-लिखना और खंडवा के शोरगुल में वही क्रम जारी रखना दादा के लिए कठिन कार्य न था। दादा लिखने बैठते थे तो बड़े तन्मय भाव से, चाहे बच्चे उनके सिर पर आपड़ी-की-थापड़ी कर लें, गोल-गोल घूम लें, फिर भी वे अपने में एक चित्त होकर लिखते रहते थे। दादा का कहना था, 'रचना एक बैठक में ही अच्छी बनती है।' किंतु जब वे लिख रहे होते, तब कोई आ जाए तो वे अपनी तख्ती-कागज और पेन एक तरफ रख आगंतुक से बातें करने लगते थे। कोई कहता, भाई, हमारे आने से आपके लेखन का तारतम्य टूट गया।'' इस पर वे कहते थे, ''लेखन का तार तो फिर से जुड़ जाएगा, किंतु आप आएँ और मैं न बोलूँ तो आपके और मेरे मन का तार टूट जाएगा, जो कभी नहीं जुड़ेगा, मेरे लेखन को जड़ बना देगा।''

दादा की मानवतावादी एवं उदारवादी सोच ही उनके लेखन को जीवंत बनाती थी। दादा कहा करते थे, ''मैं क्यों लिखता हूँ, क्योंकि मैं लिखे बिना रह नहीं सकता और मैंने जो लिखा है, उसे दूसरे तक पहुँचाना मेरा दायित्व है। मुझे इसमें सुख मिलता है।'' दादा कोई भी रचना लिखते थे तो पूरी होने पर आवाज देते थे—''शिवा, नारायण और सुमन बुला लो अपनी बाई को भी।'' रचना पाठ करते समय उनके चेहरे पर एक संतुष्टि का भाव होता था। खंडवा में रहकर भी दादा अपने गाँव से कभी दूर नहीं रहे। खंडवा आने पर दादा के साहित्य-परिवार का दायरा बढ़ गया। एक तो माखनलाल दादा के पास जो भी साहित्यकार उनसे मिलने आता था, तब माखन दादा हमारे दादा को बुलवा लेते थे। वहाँ माखनलालजी से चर्चा के बाद दादा भोजन और ठहरने हेतु उन्हें अपने यहाँ ले आते थे। एक बार माखनलालजी के पास भोजपुरी लोक साहित्य के प्रकांड विद्वान् डॉ. कृष्णदेव उपाध्यायजी हमारे यहाँ एक दिन के लिए आए थे। किंतु हमारे परिवार में ऐसे रँग गए कि वे पाँच-छह दिन तक हमारे यहाँ रुके थे। चूल्हे के पास बैठकर बड़ी बाई (बड़ी माँ) के हाथ की गरमागरम चूल्हे की रोटी खाते जाते और लोक साहित्य की चर्चा करते जाते थे। दादा ने चिंता जताते हुए कहा, ''पंडितजी, लोग तो शहर की ओर पलायन कर रहे हैं, तब लोक साहित्य का क्या होगा?'' उपाध्यायजी ने कहा, ''राम नारायण भाई, लोक की जड़ रसातल तक है, लोक तो व्यापक है, फैला हुआ है, चिंता की कोई बात नहीं।''

तुलसी जयंती के अवसर पर खंडवा में साहित्यकारों का महाकुंभ होता था। पाँच दिन माणिक वाचनालय में विशिष्ट विषयों पर साहित्यिक चर्चा, संवाद, परिसंवाद, फिर रात्रि में भव्य-विशाल कवि-सम्मेलन होता था। भवानी दादा (श्री भवानी प्रसाद मिश्र) तो सदा हम लोगों के साथ ही आकर रहते थे। कार्यक्रम के व्यवस्थापकों की शिकायत ही रहती थी कि हमने आपके ठहरने का अच्छा इंतजाम किया है, आप वहीं सर्किट हाउस में रुकिएगा। तब भवानी दादा कहते, ''मैं घर में रहूँगा, सर्किट हाउस में नहीं।'' उन दिनों हमारे घर में भी साहित्य सरोवर लहराता था। एक बार पंडित विद्यानिवास मिश्रजी हमारे परिवार में बैठे थे। बात चली तो वे दादा से कहने लगे, ''भाई, गाँव के तुम भी हो, गाँव का मैं भी। ललित तुम भी लिखते हो, मैं भी लिखता हूँ, किंतु मैं गाँव छोड़ शहर आया तो शहर का हो गया और तुम शहर में रहकर भी गाँव की सरलता को अपनी गाँठ में बाँधे हो, यही वजह है कि तुम्हारा ललित अधिक ललित है।'' फिर इस टिप्पणी पर दादा बोले, ''अरे पंडितजी, क्या बात करते हैं आप, 'कहाँ आप और कहाँ मैं'।'' विद्वानों की यही विनम्रता होती है। यह गाँव की प्रेमगली दादा को राष्ट्रपति भवन तक ले गई। 'पद्मश्री' का हकदार बना दिया। दादा का लेखन भी उनके व्यक्तित्व की तरह बहुआयामी था। लोकसाहित्य के साथ वे व्यंग्य भी बहुत तीखा लिखते रहे। वे एक व्यंग्य सुनाते थे—शेर ने कहा, 'रे बकरी! तू मांस खाएगी', बकरी ने कहा, 'मेरा ही बच जाए तो बहुत है।' प्रशासनिक अधिकारियों के साथ भी दादा की बड़ी घनिष्ठ मित्रता रही। जब कभी बिना कोई विशेष राष्ट्रीय पर्व और बिना तीज-त्योहार के हमारी गली की नाली पर चूना डले, सड़क-नाली की विशेष साफ-सफाई की जाए, तब हम भाई-बहन एक-दूसरे से पूछते थे, ''क्यों, आज कौन आ रहा है? नए कलेक्टर आए हैं या नए पुलिस अधिकारी?'' और सच में शाम के समय कोई अफसर-अधिकारी आकर चरण छूकर कहता, ''दादा,

मैंने यहाँ पर पदभार ग्रहण किया है। पूर्व कलेक्टर साहब ने कहा था, ज्वॉइन करते ही उनसे मिलना।'' सच में जिन अफसरों के होंठों पर डेढ़ इंच मुसकान भी कभी नहीं आती थी, वे यहाँ ऐसे ठहाके लगाते थे कि घर के टीन-टप्पर हिल जाते थे। दादा उन्हीं अफसरों के विभाग की बातें करते थे कि जिस अधिकारी को देख लोग सहम जाते थे। वे यहाँ पेट पकड़-पकड़कर हँसते थे। इस अवसर पर एक घटना याद आती है, पर नाम नहीं लिखूँगी। वे खंडवा में कलेक्टर थे। इंदौर स्थानांतरित होकर चले गए। उनकी बहुत गहरी मित्रता हो गई थी दादा से। वे इंदौर से मिलने आए तो गाड़ी को बड़े बम पर ठहराकर पैदल गली में आए। ड्राइवर से कहा कि एक घंटे में आता हूँ। जब दो-तीन घंटे हो गए तो ड्राइवर को चिंता हुई, वे साहब जिस ओर गली में गए थे, वह गया, फिर लौटा, फिर गया। घर के सामने ओटले पर पहारे दादा बैठे थे। ड्राइवर की बेचैनी देखकर उन्होंने पूछा, ''क्या बात है?'' ड्राइवर ने कहा, ''मेरे साहब इस गली में आए थे, अभी तक वापस नहीं आए।'' पहारे दादा ने कहा, ''तुम वहाँ पूछो, तुम्हारे साहब वहीं होंगे!'' ड्राइवर ने कहा, ''नहीं दादा, मेरे साहब तो बड़े अफसर हैं, वहाँ तो लोग खूब हँस रहे हैं।''

जब पहारे दादाजी ड्राइवर को दरवाजे तक लेकर आए और सब बताया तो हँसी का रिकॉर्ड ही टूट गया। दादा बोले, ''लो साहब, अफसर भी कोई हँसनेवाला जीव है क्या!'' दादा को एक बहुत बड़ा शौक था—पत्र लेखन का। उन दिनों फोन आदि की इतनी सुविधाएँ उपलब्ध नहीं थीं। दादा का मानना था कि पत्र के माध्यम से मन-से-मन की बात हो जाती है। सुबह उठकर दादा बहुत सारे कार्ड लिखते थे। उन दिनों डाक दो समय आती थी। डाकिया चिट्ठी लेकर घर आए तो उसके पहले ही वे पोस्ट ऑफिस पहुँचकर अपनी डाक लेकर आ जाते थे और पत्र पढ़कर तुरंत उत्तर लिखकर पोस्ट ऑफिस में डाल आते थे।

यही डाक-चिट्ठी मेरे मन को बहुत व्यथित कर देती है। दादा अपने परिवार से बहुत खुश थे, किंतु मुझसे कभी-कभी बड़े नाराज हो जाते थे और कहते थे, ''तुमको क्यों पढ़ाया? चार लाइन चिट्ठी नहीं लिखते हो। मैं चिट्ठी लिखता हूँ तो जवाब नहीं देते हो?'' मैं कहती, ''दादा, बच्चे छोटे हैं, स्कूल भी जाना रहता है। घर के कामों से समय नहीं मिलता।'' तो वे कहते, ''मैं नहीं जानता। ये रखो, बीस कार्ड ला दिए हैं। हर सप्ताह मुझे चिट्ठी मिलनी चाहिए!'' और फिर भी मैं नहीं लिख पाती थी। शायद आलस या लापरवाही! आज मेरे बच्चे बड़े हो गए। नौकरी से भी निवृत्त हो गई हूँ। दादा को चिट्ठी लिखने को मन विह्वल है, किंतु आज उनका पता नहीं मालूम! जिस किसी को उनका पता मालूम हो, पता जानता हो, मुझे बता देना, मैं कार्ड पोस्ट कर दूँगी!

दादा चले कहाँ गए? यादों में हमारे बीच यहीं हैं। याद आता है कि दादा जब 'पद्मश्री' से अलंकृत हुए थे तो ग्रामीणजनों ने उनका लोक समारोह किया। उस समारोह में उपस्थित ज्ञानपीठ सम्मान से पुरस्कृत साहित्यकार श्री नरेश मेहताजी भी थे। इस लोक सरोवर को देखकर वे बोले, ''बिना किसी आमंत्रण-निमंत्रण, न सरकारी आदेश, फिर भी इतना बड़ा जनसैलाब, अपने खर्चे से समारोह में उत्साह से पहुँचे!' मैं राम नारायण भाई के इस लोकानुराग के प्रति नतमस्तक हूँ। वे किसी लोक नायक से कम नहीं है। मेरा सिर बार-बार नतमस्तक हो रहा है।''

दादा के एक ग्रामीण सखा ने निमाड़ी में कहा, ''जातू भाई सिंगाजी जैसे गवलई, ओंकारजी जैसे भोला और निमाड़ी की माटी जसा सौंधी खुशबू वाला छे। उननेऽऽऽ निमाड़ी की सेवा करी, न निमाड़ सी उरिण हुया।''

इसी बात को डॉ. शिवमंगल सिंहजी ने भी बड़े सूत्र में कहा, ''रामनारायण भाई ने निमाड़ी की साधना की और निमाड़ को तीर्थ बना दिया।''

दादा के शताब्दी वर्ष पर उन्हें बार-बार प्रणाम!

१३, समर्थ परिसर, ई-८ एक्सटेंशन,
बावड़िया कला, त्रिलंगा पोस्ट ऑफिस,
भोपाल-४६२०३९
दूरभाष : ०९४२४४४०३७७

आकस्मिकता या ईश्वरीय कृपा

लघुकथा

● **विनोद शंकर गुप्त**

एक गर्भवती हिरणी अपने बच्चे को जन्म देने के लिए सुरक्षित जगह तलाश रही थी। वह एक नदी के किनारे घास में मैदान पर पहुँची। उसने देखा कि पूरब की ओर एक शिकारी खड़ा है। दक्षिण दिशा में जंगल में आग लगी है और उत्तर दिशा में एक शेर बैठा है। उसे डर लग रहा था। सोच रही थी कि शिकारी से बचने के लिए कहाँ जाए? तभी आसमान में गरज के साथ बिजली चमकी, जोर से वर्षा होने लगी और जंगल की आग बुझ गई। तेज हवा और बादलों की गर्जन से शिकारी अपना निशाना चूक गया और तीर शेर को जा लगा। शेर मारा गया। हिरणी ने एक छोटे से हिरण को जन्म दिया और सुख की साँस ली। यह घटना आकस्मिक थी या ईश्वरीय कृपा?

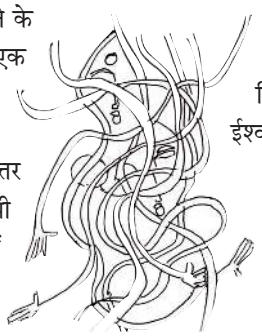

ए-३, ओल्ड स्टाफ कॉलोनी,
जिंदल स्टेनलैस लि.
ओ.पी. जिंदल मार्ग, हिसार
दूरभाष : ०९४१६९९५४२२

पावस और सर्जन

● श्रीराम परिहार

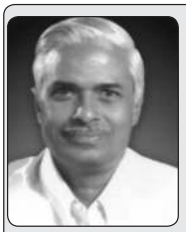

जाने-माने साहित्यकार। आठ ललित निबंध संग्रह, एक नवगीत, एक संत-साहित्य आदि पुस्तकें प्रकाशित तथा पत्रिका 'अक्षत' का संपादन। 'बागीश्वरी पुरस्कार', 'सृजन सम्मान', 'श्रेष्ठ कला आचार्य सम्मान', 'निर्मल पुरस्कार', 'राष्ट्रधर्म गौरव सम्मान', 'ईसुरी पुरस्कार', 'दुष्यंत कुमार राष्ट्रीय अलंकरण' सहित अनेक सम्मान प्राप्त।

भारतवर्ष पृथ्वी की गोद में बसा हुआ ऐसा देश है, जिस पर प्रकृति की ममता अन्य देशों की अपेक्षा सर्वाधिक बरसती है। विश्व के बहुत कम देश हैं, जिनको छह ऋतुओं का उपहार मिला है। वैशाख-ज्येष्ठ—गरमी, आषाढ़-सावन—पावस, भादौं-कुआर—शरद, कार्तिक-अगहन—हेमंत, पौष-माघ—शिशिर, फागुन-चैत—बसंत। ये बारह महीने, प्रत्येक ऋतु दो-दो महीने की होती है। इसमें कौन-सी ऋतु कम महत्त्व की है और कौन-सी अधिक महत्त्व की, ऐसा कहना प्रकृति के चक्र के हिसाब से ठीक नहीं होगा। क्योंकि प्रकृति ने जो चक्र बनाया है, वह अत्यंत कल्याणकारी है। मनुष्य को जो अभी तक की जानकारी है, सौर मंडल में या भूलोक, द्युलोक और स्वर्लोक हैं। पृथ्वीलोक, अंतरिक्ष और द्युलोक, इन तीनों में जितने भी ग्रह-नक्षत्र हैं, इनमें जीवन केवल पृथ्वी पर है। पृथ्वी के जीवन को बहुत तरीके से यह प्रकृति सँभालती है। उसे आगे बढ़ाने के लिए ही ऋतुओं का चक्र है। पृथ्वी अपनी धुरी पर घूमती है, इसलिए दिन-रात होते हैं। पृथ्वी सूर्य का चक्कर लगाती है, इसलिए ऋतुएँ होती हैं। वह अपने अक्ष पर झुकी हुई है, इसलिए सारे विश्व में एक समय व एक समान ऋतुएँ नहीं होती हैं।

पावस चिंतन में, साहित्य में, सृष्टि के क्रम में, सृष्टि के संचालन में और सर्जन के संदर्भों में बहुत गहरे पैठा हुआ है। जब कुछ नहीं था—धरती नहीं थी, आकाश नहीं था, सूर्य नहीं था, चंद्र नहीं था, तब क्या था? यह चिंतन की परंपरा कहाँ तक जाती है? सबसे पहले क्या आया? उसे महाकाल की संज्ञा हमने ऐसे ही नहीं दी है। इसका आरंभ कहाँ से है। अंत कहाँ है? आज तक यह कोई नहीं जान पाया। इसलिए समय को हमारे यहाँ चक्राकार स्थिति में अनुभव किया गया है। विश्व में समय की तीन अवधारणाएँ हैं—चक्रीय, रेखीय और सर्पाकार। कुछ मत सर्पाकार मानते हैं, पश्चिम में रेखीय मानते हैं। भारतीय मनीषा समय को चक्रीय मानती है। इस अखंड समय के भीतर हमारा देश है, संपूर्ण ब्रह्मांड है, सौर मंडल है। यह ब्रह्मांड भी उस महाकाल में ही स्थित है। उस महाकाल के संकेत पर सब अपनी-अपनी गति में क्रियाशील हैं। एक घंटा यदि सूर्य न निकले तो संपूर्ण विश्व में हाहाकार मच जाए। सब अपने-अपने नियम से बँधे हुए क्रियाशील हैं, जिसे 'ऋत' कहा जाता है। ऋत को संचालित करनेवाला कोई सत्य है, जो ये सब नहीं थे, तब भी था और ये सब नहीं रहेंगे, तब भी रहेगा। इसे 'सत्य' कहते हैं। जिसके इशारे पर यह सबकुछ चल रहा है, निर्मित हो रहा है, संचालित हो रहा है, रचित हो रहा है, सर्जित हो रहा है, उस नियमावली को 'ऋत' कहा जाता है। ऋत और सत्य दो तत्त्व हैं, जिसे हमारी भारतीय मनीषा ने मानवी सभ्यता के विकास और प्राकृतिक ऊर्जा के विकास में बहुत ही महत्त्वपूर्ण स्थान दिया है।

अलग-अलग पंथों और मतों में भी यह बात आई है। सृष्टि के आरंभ के भी बहुत पहले कुछ नहीं था। शून्य था। अँधेरा था। महामौन था। उत्पत्ति की अनेक अवधारणाओं में से एक यह भी है कि सबसे पहले जल की उत्पत्ति हुई। जल से ही सारी सृष्टि का विकास हुआ। भारतीय चिंतन में विशेषकर, जो दस अवतारों की अवधारणा है, उनका क्रम ध्यान देने योग्य है—मत्स्य, कच्छप, वराह, नृसिंह, वामन, परशुराम, राम, कृष्ण, बुद्ध और कल्की। डार्विन का विकासवाद बाद में आया। डार्विन की भूमि पर ही वह खारिज कर दिया गया। सृष्टि की उत्पत्ति की अवधारणा में हम ऐसा मानते हैं कि जो जल है, वह सृष्टि के विकास-क्रम का प्राणतत्त्व है, बीजतत्त्व है। 'क्षिति, जल, पावक, गगन, समीरा, पंच रचित यह अधम शरीरा।' पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु, आकाश इन पाँचों से ही सारी सृष्टि बनी है। जलतत्त्व सबमें सर्वाधिक है। इसका एक प्रमाण तो यह है कि पृथ्वी के ऊपर भी जल तीन-चौथाई मात्रा में है। उसी तरह सारे चेतन प्राणियों में जलतत्त्व की मात्रा अन्य तत्त्वों से अधिक है। पश्चिमी विश्व में जब बसंत आता है, वहाँ का व्यक्ति खुशी मनाता है। हमारे यहाँ मेघों की मनुहार, कोयल की मनुहार, वर्षा की मनुहार, इंद्र की मनुहार, यह सब क्यों होता है? सृष्टि की अनादि यात्रा में वर्षा पहली बार कहीं-न-कहीं तो हुई होगी? जल आया कैसे? जिस दिन पहली बरखा हुई होगी, उसी दिन धरती की गोद से किसी नन्हे अंकुर ने आकाश की तरफ पृथ्वी की सारी सर्जन-क्षमता के साथ आँख उठाकर उत्साह से देखा होगा। जल नहीं होता तो सर्जन नहीं होता। जल के साथ सर्जन का मूल रूप जुड़ा हुआ है। मूलत: सर्जन के साथ जल

का संबंध है।

सर्जन केवल धरती पर ही नहीं होता। धरती पर दूसरे स्तर पर होता है। ब्राह्मण ग्रंथों की कथा को आधार बनाकर जयशंकर प्रसाद ने 'कामायनी' में महाजलप्लावन का संदर्भ रूपायित किया है। हम कल्पना करें कि कितनी बारिश हुई होगी? सारी पृथ्वी जलमग्न हो गई। सबसे पहली वर्षा पृथ्वी की रचना के बाद हुई। मान लें कि पृथ्वी का जन्म सूर्य से ही हुआ है। करोड़ों वर्षों तक यह ठंडी होती-होती पृथ्वी के रूप में रूपायित हुई—मिट्टी बनी, पहाड़ बने, कछार बने, घाटियाँ बनीं। उस समय जो पहली वर्षा नहीं हुई होती तो क्या हमें वानस्पतिक संसार प्राप्त होता? वनस्पति मनुष्य से करोड़ों वर्षों पहले आई है। उसके बाद मनुष्य का जीवन आया है। वनस्पति का सीधा संबंध तथा पृथ्वी की ऊर्जा का सीधा संबंध पावस से है। वही पहली वर्षा या बार-बार होनेवाली बरखा से अंतरिक्ष में मेघमय आकाश की रचना होती है। सबसे पहला सर्जन कहाँ होता है? सबसे पहला सर्जन गरमी, हवा, जल—इन तीनों के सम्मिश्रण से आकाश में होता है।

प्यास सबको लगती है। भय सबको सताता है। निद्रा सबको आती है। मैथुन क्रिया में सब तत्पर होते हैं। सारे जीवों में, जिन्हें हम नग्न आँखों से नहीं देख पाते हैं, उनमें भी ये चार आचार होते हैं। चारों प्रकार के जीवों में उद्‌भिज का सीधा संबंध पृथ्वी से है। अनेक जीव पावस में असंख्य मात्रा में पैदा होते हैं और दो-चार दिनों में ही समाप्त हो जाते हैं। असंख्य मात्रा में पैदा होनेवाली इल्लियाँ ग्रीष्म में दिखाई नहीं देती। शरद, हेमंत, शिशिर, वसंत में ऐसी इल्लियाँ पैदा नहीं होतीं। कितना सुंदर, अद्‌भुत, विचित्र, रहस्यमय, विविधतापूर्ण सर्जन पावस के द्वारा होता है।

हमारी मनीषा यह कहती है कि सर्जन का यह रथ बिना पुरुष और प्रकृति के गतिमान नहीं हो सकता। सीता प्रकृति हैं और राम आकाश हैं। आकाश का गुण है—शब्द। मैं जो कह रहा हूँ, वह आप तक इसलिए पहुँच रहा है या सुनाई दे रहा है, क्योंकि बीच में आकाश है। आकाश नहीं होता तो हमारी वाणी—परा, पश्यंती, मध्यमा और वैखरी, ये वाणी के चारों रूप संप्रेषित नहीं हो पाते। हम कंठ से कितनी भी जोर से ध्वनि निकालते, पर आकाश नहीं होता तो किसी को सुनाई नहीं देती। यह जो सर्जन की पहली पीड़ा है, आकाश में बादलों के सर्जन के रूप में होती है। निर्माण और सर्जन में अंतर है। भवन का निर्माण होता है। कविता का सर्जन होता है। प्रकृति ने नदी का सर्जन किया है, नदी का निर्माण नहीं किया। सर्जन सॉफ्टवेयर है। भौतिक रूप में मनुष्य द्वारा और पशु-पक्षियों द्वारा निर्मित सारी वस्तुएँ निर्माण की प्रक्रिया के अंतर्गत हैं। मनुष्य की मेधा या ऐसी अदृश्य शक्ति, जो दिखाई नहीं देती, लेकिन रहती है, उसकी प्रेरणा से जो रचते हैं, वह 'सर्जन' है। हम जिस प्रज्ञा से कविता लिखते हैं, उससे कविता तो दिखती है, लेकिन वह शक्ति नहीं दिखती, जिसके बल पर हम कविता लिखते हैं। संगणक का सॉफ्टवेयर तो बाद में आया, प्रकृति के पास एक सॉफ्टवेयर बहुत पहले से था। सबसे पहला सर्जन आकाश में बादल के रूप में होता है।

दूसरा सर्जन तब होता है, जब बादल पावस में बरसता है। जब बादल बरसते हैं तो भारतवर्ष का कोना-कोना, पत्र-पत्र, तृण-तृण उसके स्वागत में नृत्य करता है। केवल वानस्पतिक संसार ही नहीं; 'लछिमन देखहूँ मोरगन, नाचत वारिद पेखि'। लक्ष्मण मोरगणों को देखो, वे बादलों को देखकर नाच रहे हैं। कोयल की कूक, पपीहा की रट, चातक का संकल्प, तितलियों के रंग-बिरंगे पंख, कितने-कितने नन्हे बीज, विशाल वृक्ष बनने की कामनाएँ लिये पावस के स्वागत में खड़े हो जाते हैं। न जाने कब से सुषुप्त बीज धरती की गोद में बैठा हुआ है। पावस की एक बूँद की नम्रता, आर्द्रता, तरलता उसे मिलती है और उसमें जीवन अंकुरित हो जाता है। यह सर्जन की निसर्गजात प्रक्रिया है। यह एक ऐसी शाश्वत क्रिया है, जिसके बिना सृष्टि का संकल्प-रथ या विजय-रथ आगे नहीं बढ़ सकता।

पावस में जब वर्षा होती है, बदरा घिर-घिरकर बरसते हैं तो वानस्पतिक दृश्यावली ही जीवित और प्राणवान नहीं होती है, बल्कि सारे जीव-जंतु अपने जीवन-अस्तित्व के साथ जनमते हैं। हमने एक बात अनुभव की कि ग्रीष्म ऋतु में छोटे-छोटे कीट-पतंगे तो दिखते नहीं हैं, लेकिन जैसे ही पहली वर्षा होती है, असंख्य जीव-जंतु पैदा हो जाते हैं। पावस का सीधा संबंध सर्जन से है। प्रकृति एक संतुलन बनाए हुए है। छिपकली के छोटे-छोटे बच्चे पावस के आगमन के ठीक पंद्रह-बीस दिन पूर्व रेंगने लगते हैं, क्योंकि उनका खाद्य असंख्य कीड़े-मकोड़े हैं, जो पावस के आगमन के साथ पैदा होते हैं। प्रकृति ने सबके भोजन की व्यवस्था कर रखी है तथा संतुलन भी बना रखा है। जीव चार प्रकार के होते हैं—अंडज, पिंडज, उद्‌भिज और स्वेदज। इसमें दो—उद्‌भिज और स्वेदज का संबंध सीधा प्रकृति से है। पावस आता है तो कितने जीव धरती पर चलायमान हो जाते हैं। गोगल गाय पैदा हो जाती है। असंख्य कृमि-कीट पावस के आते ही पैदा हो जाते हैं। यह भी है कि वे दूसरे जीवों का भोजन बनकर पैदा होते हैं। उनके पालन के लिए पैदा होते हैं। साँप दूध नहीं पीता है। साँप मणि को एक स्थान पर रख देता है। उसके प्रकाश में कीट-पतंगें आते हैं, उन्हें वह अपना भोजन बनाता है। इतने रोचक, सुंदर और रहस्यमय संसार की रचना प्रकृति-पुरुष ने कर रखी है।

प्यास सबको लगती है। भय सबको सताता है। निद्रा सबको आती है। मैथुन क्रिया में सब तत्पर होते हैं। सारे जीवों में, जिन्हें हम नग्न आँखों से नहीं देख पाते हैं, उनमें भी ये चार आचार होते हैं। चारों प्रकार के जीवों में उद्‌भिज का सीधा संबंध पृथ्वी से है। अनेक जीव पावस में असंख्य मात्रा में पैदा होते हैं और दो-चार दिनों में ही समाप्त हो जाते हैं। असंख्य मात्रा में पैदा होनेवाली इल्लियाँ ग्रीष्म में दिखाई नहीं देती। शरद, हेमंत, शिशिर, वसंत में ऐसी इल्लियाँ पैदा नहीं होतीं। कितना सुंदर, अद्‌भुत, विचित्र, रहस्यमय, विविधतापूर्ण सर्जन पावस के

द्वारा होता है। मनुष्य योनि के साथ ही चौरासी लाख योनियों में भटकने की अवधारणा इन जीव-जंतुओं को देखकर साकार हो उठती है। अनेक योनियों में जल्दी-जल्दी जन्म लेने और मर जाने के क्रम को पावस व्यवस्थित भी करता है।

पावस मनुष्य को शारीरिक तत्त्वों के आधार पर भी प्रभावित करता है। बादल होते ही अनेक लोगों के शरीर में दर्द या शिथिलता अनुभव होती है। अत: हमारे शरीर में जो जल की मात्रा है, वह आकाश में होनेवाले बादलों के जल से जुड़ी हुई है, उसी का अंश है। यह बात भौतिक विज्ञान मान रहा है, जैव विज्ञान मान रहा है और ज्योतिष विज्ञान भी मान रहा है। हमारा चिंतन तो यह स्वीकार करता ही है। छहों ऋतुओं में मनुष्य की क्रियाएँ प्रभावित होती हैं। बसंत में मन उल्लसित होता है। पावस में भीगते ही पिया की याद आती है, भामिनी की याद आती है और एकांतकांक्षिणी प्रिया की याद आती है। पावस की रसभीनी आर्द्रता सीधे-सीधे सर्जन को प्रेरित और उत्फुल्लित करती है। वैश्विक स्तर पर सर्वेक्षण करने से पता चलता है कि सर्वाधिक गर्भाधान पावस ऋतु में होता है। इतनी दूर तक पावस काम करता है। हमारे मनोभावों को प्रभावित और प्रेरित करता है। हमारे स्नायुओं को सक्रिय और सर्जन हेतु सक्रिय करने का नैसर्गिक कार्य पावस करता है। इसलिए कवि आग्रह करता है—'मेघा बरसो, सरसो, घन बरसो।' जायसी कहते हैं, 'बरसहिं मघा झकोरि-झकोरी, मोर दुई नयन चुवहिं जस ओरी। रकत के आँसू परहिं भुईं टूटी, रेंगी चली मनो वीरबहूटी।' रीतिकाल के कवि घनानंद कहते हैं, 'बदरा बरसै ऋतु में घिरी कै, अँखियाँ नित ही उधरी बरसै।' बादल तो ऋतु में घिरकर बरसते हैं, लेकिन ये ससुरी अँखियाँ उघड़कर बरसती हैं। यह जो भावात्मक आवेग और प्रकृति के संग-साथ क्रियात्मक संवेग है, यह जैविक स्तर के साथ ही हमारी प्रकृति में भी होता है। पत्र-पत्र नृत्य करता है। एक सुनहरी किरण पत्ते पर पड़ी हुई जल-बूँदों या तृण की नोक पर ठहरी हुई जल-बूँद का स्पर्श करती है तो जल की बूँद मोती जैसी चिलकने लगती है।

यह पावस हमको हमारी धरती से परिचय कराता है। एक विराट् धरातल पर, जहाँ प्रकृति अपने सर्जन के छंद रच रही है, ललित निबंध लिख रही है। ऐसे प्रांगण में बैठकर हमारा रचनाकार आदिकाल से आज तक अपनी सर्जनधर्मिता को एक गति देता है। हमारी सर्जनात्मकता, किसलिए है और किसके लिए है? पावस की सर्जनात्मकता तो स्पष्ट है—वह सृष्टि के क्रम को बनाए रखने में सृष्टि-नियमों का पालन करते हुए नैसर्गिक सर्जन का विराट् रचती है। क्या इस पावस और प्रकृति से प्रेरणा लेकर सर्जन करनेवाला हमारा जो सर्जन है, हमारा कोई-सा भी सर्जन हो—नृत्य, चित्र, गायन, वादन, अभिनय, नाट्य, और लेखन सब ललित कलाओं में आते हैं।

छहों ऋतुओं की अपनी महिमा होती है। छहों की अपनी सुषमा होती है। छहों ऋतुएँ सर्जनधर्मिता को निश्चित रूप से अलग-अलग प्रभावित करती हैं। सर्जन की प्रेरणा में भी ये ऋतुएँ पैठी हुई हैं। यदि भारतीय साहित्य के परिप्रेक्ष्य में विश्व साहित्य को देखें तो पश्चिमी साहित्य में अधिकांश कविताएँ वसंत पर लिखी पाएँगे। भारतीय साहित्य में सर्वाधिक कविताएँ पावस पर लिखी हुई हैं। महाप्राण निराला की चौदह कविताएँ पावस पर, बादल पर हैं। पंत ने, प्रसाद ने, महादेवी ने, सबने वर्षा-गीत लिखे हैं। समग्र हिंदी साहित्य में बादल कविता के प्रत्यक्ष-परोक्ष रूप में हृदय-स्थित है। कवि कुलगुरु कालिदास की अमर रचना 'मेघदूतम्' तो बादल को ही मानवीय भावों से पूरित करती है। कालिदास प्रेम और सौंदर्य के गहन काव्य-संदर्भों के कारण महान् कवि बन गए। पावस के आगमन के साथ ही यक्ष को अपनी प्रिया की मधुर याद सताती है। वह मेघ को दूत बनाकर संदेश भेजता है। संदेश भेजता है रामटेक से अलकापुरी को। पावस की वर्षा मनुष्य की सुकोमल हृत्तंत्री के विरहराग में बजाता है। जायसी की नायिका परदेश में गए प्रियतम की याद करते-करते आशंका करती है—

नहिं पावस वोहि देसरा, ना पावस न वसंत,
ना कोयल, ना पपीहरा, जेहि सुनि आवहिं कंत।

जब सारी प्रकृति उल्लसित होती है तो विधाता के रचनाकर्म के समांतर प्रतिभा लेकर पैदा होनेवाला धरती का बेटा मनुष्य, जिसे कवि या रचनाकार के रूप में संबोधित किया जाता है, जब वह इस प्रकृति को देखता है तो उसके भीतर एक शाब्दिक संसार, संसार के समकक्ष एक प्रतिसंसार खड़ा करने की प्रेरणा जागती है, तब वह उस कलम से उस सर्जन को जन्म देता है। ऐसी सर्जनात्मकता द्वारा वह प्रकृति के समांतर सृष्टि अपनी रचना में पैदा कर देता है। इसलिए कवि को दूसरा विधाता या दूसरा स्रष्टा कहा गया है।

हमारे साहित्य में दूसरा स्रष्टा इसलिए भी कहा है, क्योंकि प्रकृति में रचनाकार की दृष्टि से जो कमी दिखाई देती है, उसे वह अपनी रचना में पूरा करता है। कृति ऐसी नहीं; ऐसी होनी चाहिए। नदी ऐसी नहीं; ऐसी बहनी चाहिए। मनुष्य ऐसा होना चाहिए। मनुष्य कैसा? जैसे महावीर स्वामी, आदि गौतम बुद्ध, आदि राम, आदि कृष्ण आदि। हमारे रोल मॉडल या आदर्श हमें किसने दिए हैं या किसने बताएँ हैं। क्या किसी को सपना आया था? ये सब हमारे सर्जनात्मक साहित्य की देन हैं, जिनसे हम इन महापुरुषों के जीवन को जान सके और उस तरह का जीवन जीने का प्रयास कर सके। हमें रचनाकारों ने ही बताया, जताया—'मनुष्य तू है तो भोर का तारा, प्रात: होते ही छुप जाएगा। मनुष्य तू है तो अनंत जलराशि पर तैरती हुई कागज की नाव। तू है तो तिनके की नोक पर ठहरी हुई ओस की बूँद। तू है तो साँझ समय डूबते हुए सूरज का शृंगार

करती हुई किरण। तू है तो किसी के पाँव की ठोकर से आकाश की ओर उड़ती हुई धूल। लेकिन तू अमरता का वरदान और संदेश लेकर धरती पर आया है। तू मनुष्य, तू जितनी देर यहाँ ठहरेगा, इस संसार को सुंदर बना देखा।' यह रचनात्मक सर्जन कवि के पास ही होता है। इसलिए उसे 'दूसरा विधाता' कहा गया है। पावस और सर्जन के बहुत महीन और लंबे सूत्र हमारे लोक में उपस्थित हैं। जल से सर्जन के रिश्ते बहुत पुण्यश्लोक हैं। इसलिए कहा गया है—'चंद्रमा मनसो जातः।' मन से चंद्रमा उत्पन्न हुआ। इसका प्रमाण समुद्र तट पर हमें मिल जाएगा। चंद्रमा की पृथ्वी से निकटता और दूरी सिंधु जल को किस तरह आकर्षित, उद्वेलित और विस्फारित करती है। चंद्रमा जितना निकट होगा, जल उतना ऊपर चला जाएगा। सैकड़ों लोगों को पूर्णिमा के दिन भावात्मक ज्वार अधिक उमड़ता है। इसलिए विधु पर, चंद्रमा पर अधिक कविताएँ लिखी गईं। चाँदनी रात में टहलते हुए, निर्जन वन में टहलते हुए सर्वाधिक कविताएँ चाँदनी, चंद्रमा और इनसे जुड़े उपमा, उपमान प्रतिमानों और प्रतीकों को केंद्र में रखकर लिखी गईं। अब तो न चाँदनी रही और न देखनेवाले लोग रहे। न वह समय रहा, न पावस का स्वागत करनेवाला पल।

यह पावस हमको हमारी धरती से परिचय कराता है। एक विराट् धरातल पर, जहाँ प्रकृति अपने सर्जन के छंद रच रही है, ललित निबंध लिख रही है। ऐसे प्रांगण में बैठकर हमारा रचनाकार आदिकाल से आज तक अपनी सर्जनधर्मिता को एक गति देता है। हमारी सर्जनात्मकता, किसलिए है और किसके लिए है? पावस की सर्जनात्मकता तो स्पष्ट है—वह सृष्टि के क्रम को बनाए रखने में सृष्टि-नियमों का पालन करते हुए नैसर्गिक सर्जन का विराट् रचती है। क्या इस पावस और प्रकृति से प्रेरणा लेकर सर्जन करनेवाला हमारा जो सर्जन है, हमारा कोई-सा भी सर्जन हो—नृत्य, चित्र, गायन, वादन, अभिनय, नाट्य, और लेखन सब ललित कलाओं में आते हैं। हमारी सर्जनात्मकता के विविध आयाम हैं। ये किसके लिए हैं और क्यों हैं? जब धरती तपती है, पृथ्वी का हृदय फट पड़ता है, पपीहे की प्यास धरती-आकाश को चीरकर एक कर देती है, कोयल पुकार-पुकारकर मनुहार करती है—बरसो रे मेघा-बरसो! पशु-पक्षी, वृक्ष, नदियाँ, नीलकंठ सब पावस की प्रतीक्षा करते हैं, तब आकाश पसीजता है और बरसता है। क्या ऐसा दबाव रचनाकार के भीतर भी होता है? घनानंद कहते हैं—'परकाजहिं देह को धारी फिरौं, परजन्य जथारथ ह्वै दरसौ।' हे बादल! तुमने परकाज के लिए देह धारण की है। क्या रचनाकार का सर्जन भी दूसरों के लिए होता है। वृक्ष अपने फल कभी नहीं खाता। नदी अपना पानी नहीं पीती। चिड़िया अपना घोंसला बनाकर उसे संदूक में बंद करके नहीं रखती। कोई भी चिड़िया दूसरी चिड़िया या दूसरे के घोंसले का तिनका चुराकर अपना घोंसला नहीं बनाती है।

क्या हम इस पावस से, पावस के सर्जन के महत् उद्देश्य से महती प्रेरणा लेकर अपनी सर्जनात्मकता को विश्वहित में और उससे भी बड़ी बात सृष्टिहित में करुणा की शब्दधारा द्वारा प्रवाहित कर सके? करुणाजनित महाकाव्यों के चरित्रों ने भारतवर्ष को कितने-कितने कोणों से समृद्ध किया है। यह सर्जनात्मकता कितने विराट् धरातल पर संपूर्ण विश्व के मानव को कल्याण के भाव से देखती भी है और जोड़ती भी है। यह पावस नहीं बरसता तो यह सृष्टि इतनी सुंदर नहीं होती। यह धरती इतनी ममतालु नहीं होती। नर्मदा इतनी तरल नहीं होती। विंध्याचल इतना अचल नहीं होता। सतपुड़ा इतना सुषमावान नहीं होता। पावस में नृत्य करती, धरती की ओर आती हुई बूँद हरी-हरी दूर्वा पर बरसकर अपने सौंदर्य के साथ अपने अस्तित्व को मिटाकर धरती को सर्जन धर्म हेतु सन्नद्ध नहीं करती तो क्या इतना सुंदर संसार हमको प्राप्त हो सकता? हम पावस के सौंदर्य से सिक्त होकर अपने सर्जन को बहुत दूर तक सृष्टिहित में स्फुरित कर सकें। धरती के बचाव और मनुष्य की श्रेष्ठता के लिए हमारी सर्जन सक्षम हो। वर्षा होती है, क्योंकि चींटी की गति भी कायम रहे और हाथी की सूँड़ को भी पानी मिले, वृक्ष की टहनी को भी पानी मिले तथा सारे जीव-जंतुओं को प्राण-रस मिले।

बिना करुणार्द्र हुए क्या बादल धरती पर सर्जनात्मकता पैदा कर सकता है? पीड़ा को घनीभूत होना पड़ता है। न जाने कितना रोना पड़ता है वाल्मीकि को! न जाने कितना रोना पड़ता है वेदव्यास को। साहित्य के खाने या खंड या विभाग-प्रभाग नहीं होने चाहिए। वादों और मतवादों ने साहित्य को बाँट रखा है। क्या रस को भी बाँटा जा सकता है? क्या तलवार से जलधार को काटा जा सकता है? क्या आकाश में दीवार बनाई जा सकती है? क्या मिठास को तोड़ा जा सकता है? उसी तरह साहित्य को खंड-खंड विभाजित किया जा सकता है? साहित्य के डिब्बे नहीं बनने चाहिए। एक अखंड जीवन, एक सर्जनात्मकता, एक अखंड सृष्टि, एक अखंड रसबोध, एक अखंड साहित्य-सर्जनकर्म। यही दृष्टि और दृश्य पावस पैदा करता है, यही उद्देश्य हमारी सर्जनात्मकता का भी होना चाहिए। सर्जनात्मकता कल की प्रेरणा और कल के पथ को प्रशस्त करने में सहायक बने। पावस भी और मानव की सर्जनात्मकता, दोनों श्रेष्ठता की रचना के पथ का पाथेय बने। यह धरती कर्मलोक है, यहाँ कर्म तो करना ही है। कर्म करना है अर्थात् सर्जन करना है। कविता न लिखें। एक सुंदर बैलगाड़ी बना लें। एक सुंदर जहाज बना लें। सुंदर सॉफ्टवेयर बना लें। यह सब सर्जन ही तो किया। जीवन में एक पावस का ज्वार उमड़ा और मेधा से सुंदर कृति सर्जित हो गई। जल के भीतर तरलता नहीं होती तो अंकुरण नहीं होता। मनुष्य के भीतर मेघा की द्रवणशीलता नहीं होती तो सर्जन नहीं होता। सर्जन के अनेक आयाम हैं, अनेक रूपायन हैं, अनेक सौंदर्य प्रकल्प हैं। सर्जनात्मकता सृष्टि के कल्याण और मंगलविधान से जुड़ी हुई हो। पावस लोकमंगल से जुड़ा हुआ है। हमारा सर्जन भी लोकमंगल का विधान रचनेवाला हो, तभी पावस और सर्जन के संदर्भ सार्थक और अमर होंगे।

साअ
आजाद नगर
खंडवा-४५०००१ (म.प्र.)
दूरभाष : ७३३२२४६६५५

प्यार

• रागति रमा

शशिकला फूट-फूटकर रोते-रोते वहाँ से निकल गई। जो बातें कहनी थीं, कह दीं मैंने, किंतु मेरे मन को शांति नहीं मिली। मेरा मन धिक्कारता है कि आवेश में, स्वयं पर नियंत्रण खोकर कोमल हृदयवाली शशिकला के दिल को दु:ख दिया तुमने। कठोर वचन बोलकर दु:खी को और दु:ख दिया तुमने। एक ओर शशिकला की आँखों में आँसू देखकर संतोष हुआ, किंतु शशिकला को रोते हुए जाते देखकर मेरा दिल पिघल गया। आह्लाद नहीं, शांति नहीं···भार सा लगता है। मगर क्यों? जवाब जानता हूँ, किंतु···।

चारों तरफ सन्नाटा छा गया है। आकाश में तारे टिमटिमा रहे हैं। समुंदर पर काला रंग फैल रहा है। शशिकला से अपनी मुलाकात याद आई। एक साल पहले शशिकला के परिवार वाले हमारे बगल के मकान में रहने आए थे। शशिकला के पिताजी बैंक के अफसर थे।

उस दिन रात के दस बजे थे। माँ ने मेरे पास आकर कहा, ''शशिकला के कॉलेज में फंक्शन है, इसलिए शाम को चार बजे वह कॉलेज चली गई, पर अभी तक नहीं आई। उसके पिता कैंप में हैं। उसकी माँ हैरान-परेशान है। तुम कॉलेज जाकर शशिकला को ले आओ।''

शशिकला सुंदर और सुशील लड़की थी। कॉलेज में बी.ए. में पढ़ रही थी। ''जल्दी जाओ!'' अम्माँ का आदेश सुनते ही मैंने बाहर आकर स्कूटर स्टार्ट किया। गाड़ी तेज दौड़ाई। आधा घंटा में कॉलेज पहुँचा। कॉलेज से कुछ दूरी पर बस स्टॉप था। वहाँ अँधेरे में शशिकला बस के लिए इंतजार करती दिखी। वहाँ कुछ युवक शशिकला से मौज-मस्ती कर रहे थे, मजाक उड़ा रहे थे।

''शशिकला आओ, स्कूटर पर बैठो।'' मैं जोर से बोला। शशिकला मेरी आवाज सुनते ही दौड़कर आई और स्कूटर पर बैठी, गाड़ी आगे बढ़ी तो शशिकला ने अनेक बार धन्यवाद दिया। उस दिन से हम दोनों के बीच में मैत्री शुरू हुई। शशिकला को प्यार में डुबोकर धोखा देना मेरा लक्ष्य था। इसके लिए मैं मौके के इंतजार में हूँ। बदला लेने का मौका मिला।

एक साल के बाद शशिकला के पिताजी का विजयवाड़ा ट्रांसफर हो गया। शशिकला के कहने पर हम दोनों रामकृष्ण बीच पर गए। हम दोनों समुंदर के किनारे बैठे। शशिकला ने मेरे हाथ को अपने हाथों में लेकर बड़े प्यार से कहा, ''राजू, हम दोनों शादी कर लेंगे। तेरे बिना जीना मुश्किल है।''

तेलुगु भाषी कथाकार। तेलुगु में 'रेपटिवरकु आगे' (कविता-संग्रह), 'अम्माइलू जाग्रत्ता' (कहानी-संग्रह) प्रकाशित। आकाशवाणी से कई कहानियाँ, एकांकी प्रसारित। विविध तेलुगु पत्र-पत्रिकाओं में रचनाएँ प्रकाशित।

मैंने अट्टहास किया। शशिकला चकित रह गई। मैंने कहा, ''मैंने तुमसे प्यार नहीं किया और शादी भी नहीं करूँगा।'' शशिकला चीख पड़ी, ''राजू, तुम क्या कहते हो, राजू···मुझसे प्यार नहीं करते! यह झूठ है। तेरे दिल में प्यार है मेरे लिए, यह सच है। राजू, तुम पर मुझे अटल विश्वास है। हम दोनों शादी करेंगे। प्लीज, शादी के लिए हाँ कहो, राजू!'' शशिकला दु:ख से विह्वल हो गई। मैंने कहा कि मेरी शादी मेरे मामा की बेटी से होगी। वह फूट-फूट कर रोती वहाँ से चली गई।

मुझे मेरे पहले-पहले प्यार की याद आई। दो साल पहले विद्या और मैं, हम दोनों ने प्यार में डूबकर विहार किया। विद्या रोज कहती थी, 'राजू, आई लव यू।' किंतु एक दिन विद्या ने कहा, 'राजू, मुझे भूल जाओ!'

मैं निश्चेष्ट हो गया, बोला, 'यह क्या कहती हो, विद्या? मेरे दिल में तुम्हारे अलावा कोई नहीं है। तुम नहीं तो मैं जिंदा कैसे रहूँगा?' विद्या ने कहा, 'राजू, हम मध्यवर्ग के लोग हैं। रोज सपनों में विहार करते हैं, जो साकार नहीं होते। राजू, मुझे भूल जाओ। एक धनवान के साथ मेरी शादी तय हो गई है। कभी भी मेरे पास नहीं आना। तुमसे शादी करके मेरे सपने साकार नहीं होंगे।' ये बातें कहकर विद्या वहाँ से चली गई।

''मैं एक साल तक पागल-सा बना रहा। हर नारी के प्रति द्वेष, आक्रोश बढ़ गया। अब बदला लेने का मौका मिला है। एक स्त्री ने मुझे प्यार से वंचित किया। इसलिए, ठीक इसलिए शशिकला नायक स्त्री को

मैंने धोखा दिया। मैंने जो चाहा वह पूरा हुआ; किंतु मेरे दिल में शांति नहीं अशांति ही है।''

दूसरे दिन सुबह-सुबह अपने परिवार के साथ शशिकला विजयवाड़ा चली गई। जाते समय घायल पक्षी की तरह देखा तो मैं हैरान रह गया।

तीन दिन बीत गए। उस दिन शाम को ऑफिस से आया तो माँ ने कहा, ''राजू, हमारी गली की युवती गिरिजा ने आत्महत्या कर ली। किसी युवक से प्यार किया करती थी। उसने धोखा दे दिया। हमारे देश में ऐसे धोखेबाज, स्वार्थी और लंपट बहुत हैं। ऐसे लोग जिंदा रहने के हकदार नहीं हैं। उनका सर्वनाश हो जाएगा। यह मेरा शाप है!'' मेरे हृदय से कंपन निकला।

उस रात मुझे नींद नहीं आई। व्याकुलता बढ़ती जा रही है। शशिकला आत्महत्या कर···नहीं-नहीं, ऐसा नहीं होना चाहिए। शशिकला में जिजीविषा स्माप्त हो गई तो क्या होगा?···नो-नो ऐसा नहीं होना चाहिए।

प्यारी शशिकला मुझे माफ कर दो। मैं तुमसे प्यार करता हूँ, यह सच है, झूठ नहीं। मैंने दूरभाष से शशिकला का नंबर डायल किया।

''कौन···?'' शशिकला का स्वर सुनकर आनंद विभोर होकर कहा, ''आई लव यू, शशि!''

तब मेरे मन को शांति मिली।

साअ
प्लॉट नं. २०३, व्यासकी टावर्स, स्प्रिंग रोड
विशाखापत्तनम-५३०००२ (आंध्र प्रदेश)
दूरभाष : ८०१९६९१७८९

दोहे

खुद ही खुद को छल रहे···

● सुरेश 'तन्मय'

अभिलाषाएँ अनगिनत, सपने कई हजार।
भ्रमित मनुज भूला हुआ, कालचक्र की मार॥

दोहरा जीवन जी रहे, सुविधा भोगी लोग।
स्वाँग संत का दिवस में, रैन अनेक भोग॥

पानी पीते छानकर, जब हों बीच समाज।
सूरा पन एकांत में बड़े-बड़ों के राज॥

यदि योगी नहीं बन सकें, अपयोगी बन जाएँ।
दायित्वों के साथ में, परहित कर सुख पाएँ॥

रामलीला में राम के, अभिनय में है खास।
मात-पिता को दे दिया, उसने ही वनवास॥

सभी मुसाफिर हैं यहाँ, जाना है कहीं और।
मंत्री-संत्री-अर्दली, साहूकार या चोर॥

लगा रहे हैं कहकहे, करके वे दातौन।
मटमैली सी देहरी, सकुचाहट में मौन॥

बदल रही हैं बोलियाँ, बदल रहे हैं ढंग।
बौराए से सब लगें, ज्यों खाए हों भंग॥

ठहर गई है जिंदगी, मौन हो गए होंठ।
रुके पाँव उम्मीद के, गुमसुम-गुमसुम चोट॥

जब से मेरे गाँव में, पड़े शहर के पाँव।
भाईचारा प्रेम के, बुझने लगे अलाव॥

लिखते-पढ़ते-सीखते, बढ़े आत्मविश्वास।
मंजिल पर पहुँचे वही, जिसने किए प्रयास॥

कागज के संग कलम का, है अलिखित अनुबंध।
प्रीत-पगी स्याही मिले, रचे मधुरतम छंद॥

बुद्धि-विलास बहुत हुआ, तजें कागजी ज्ञान।
कुछ पल साधें मौन को, हो यथार्थ पर ध्यान॥

खुद ही खुद को छल रहे, बन करके अनजान।
भटक रहे हैं भूलकर, खुद की ही पहचान॥

निश्छल सेवाभाव से, मिले परम संतोष।
मिटे ताप मन के सभी, संचित सारे दोष॥

चमकदार संवेदना, करे चमत्कृत शब्द।
अधुनातन गायन-रुदन, नव तकनीक उपलब्ध॥

शकुनी-से पासे चलें, ये सरकारी लोग।
तब तक खुश होते नहीं, जब तक चढ़े न भोग॥

मोहपाश में है घिरा, अर्जुन सा जनतंत्र।
कौरव दल के बढ़ रहे, मायावी षड्यंत्र॥

साअ
२२६, माँ नर्मदे नगर, बिलेहरी
जबलपुर-४८२०२०

डाकमुंशी

मूल : **फकीर मोहन सेनापति**

अनुवाद : **राजेंद्र प्रसाद मिश्र**

फकीर मोहन का जन्म जनवरी १८४३ ई. को बालेश्वर (ओड़िशा) में हुआ था। वे महान् सहिष्णुता और मानसिक दृढ़ता के कथाकार थे। आधुनिक ओड़िआ गद्य साहित्य की शुरुआत फकीर मोहन से ही मानी जाती है। उनके चार उपन्यास 'छमाण आठगुंठ', 'लछमा', 'मामू और प्रायश्चित्त' एवं 'बौद्धावतार' (काव्य) तथा अनेक कहानियाँ प्रकाशित हैं। १४ जून, १९१८ को उनका निधन हो गया। यहाँ उनकी एक लोकप्रिय कहानी दे रहे हैं।

सरकारी नौकरी में बहाल होने के दिन से हरिसिंह मुफस्सल (नगरेतर) के छोटे-बड़े अनेक पोस्ट-ऑफिसों में काम कर चुके हैं। दस साल से लगातार कटक सदर पोस्ट-ऑफिस में काम कर रहे हैं। अच्छी तरह से काम करने पर प्रमोशन भी मिला है। अब वे हेड पीअन हैं, तनख्वाह महीने में नौ रुपए। कटक शहर में सारी चीजें खरीदनी पड़ती हैं। जरा सी आग के लिए दियासलाई खरीदे बिना काम नहीं चलता। खूब सोच-समझकर चलने पर भी महीने में पाँच रुपए से कम खर्च नहीं होता। किसी भी तरह चार रुपए गाँव न भेजने पर वहाँ परेशानी हो जाती है। गाँव में पत्नी और आठ साल का बेटा गोपाल है। मुफस्सल है। चार रुपए में किसी तरह खींच-खींचकर गुजारा हो जाता है। उसमें यदि एक पैसा भी कम हो जाए तो परेशानी हो जाती है। गोपाल अपर प्राइमरी स्कूल में पढ़ता है। स्कूल की मासिक फीस दो आना। स्कूल की फीस के अलावा आज कोई किताब तो कल स्लेट या कागज, ये चीजें खरीदने में कभी-कभी कुछ ज्यादा खर्च भी हो जाता है। ऐसे ऊपरी खर्च हो जाने पर उस महीने काफी दिक्कत हो जाती है। कभी-कभी बुढ़ऊ को उपासे रह जाना पड़ता है। भले ही उपासे रहना पड़े, मेरा गोपाल पढ़ तो लेगा।

एक दिन पोस्ट-मास्टर ने सर्विस-बुक देखकर कहा, ''हरिसिंह, तुम पचपन साल के हो गए, पेंशन लेना पड़ेगा, अब नौकरी नहीं कर सकते!'' सिंहजी के सिर पर तो बिजली गिर पड़ी। अब क्या करें, गृहस्थी कैसे चलेगी? गृहस्थी की छोड़ो, गोपाल की तो पढ़ाई बंद हो जाएगी। जिस दिन से गोपाल जन्मा, उसी दिन से सिंहजी ने मन में एक ऊँची आशा बाँध रखी है—गोपाल मुफस्सल पोस्ट-ऑफिस में सब-पोस्टमास्टर बनेगा, कछ नहीं तो कम-से-कम विलेज-पोस्टमास्टर बनेगा।

लेकिन थोड़ी-बहुत अंग्रेजी न सीखने पर इतनी बड़ी नौकरी मिलना मुश्किल है। मुफस्सल में सुविधा नहीं है, कटक शहर लाकर अंग्रेजी पढ़ानी होगी। नौकरी चली गई तो इतनी बड़ी आशा पर पानी फिर जाएगा। हमेशा यही सोच-सोचकर उनका बदन काली लकड़ी सा हो गया है। कभी-कभी रात-रात भर नींद नहीं आती, सोचते-सोचते रात बीत जाती है।

सिंहजी पर पोस्टमास्टर साहब बड़े मेहरबान हैं। डेरे पर मुकर्रिर स्थायी नौकर होने पर भी सरकारी काम करने के बाद शाम को सिंहजी साहब के डेरे के दो-चार काम कर आते। शाम को आरामकुरसी पर लेटे हुए जब साहब अंग्रेजी अखबार पढ़ते, तब सिंहजी चिलम में जिस जतन से मीठा तंबाखू बनाकर भरकर लाते, उस तरह और कोई नहीं बना पाता। एक दिन शाम को सिंहजी ने अच्छी तरह तंबाखू बनाकर चिलम में भरकर चिलम को ठीक से फूँक दिया। साहब के मुँह से इंजिन के पाइप से धुआँ निकलने जैसा भक्-भक् धुआँ निकल आया, आँखें कुछ-कुछ बंद होने लगीं। सिंहजी समझ गए, यही सही वक्त है। सिंहजी साहब को साष्टाँग प्रणाम करने के बाद हाथ जोड़कर खूब भक्ति, खूब विनय, खूब धीरे-धीरे, खूब मीठे लहजे में अपना दुःख सुनाते हुए सारी बातें विस्तार से बता गए। गोपाल को लेकर उनकी जो ऊँची आशा है, वह भी बताना नहीं भूले। साहब की आँखें उसी तरह मुँदी हुई थीं; उन्होंने धीर-गंभीर भाव से कहा, ''ठीक है, एक दरखास्त लिख लाओ।'' साहब साहसी थे, क्योंकि पोस्टल इंस्पेक्टर या सुपरिंटेंडेंट साहब जब भी आते हैं, पोस्टमास्टर साहब के डेरे पर ही टिकते हैं। बड़े हाकिमों को खुश करने के लिए खाद्य-पेय की जैसी व्यवस्था होनी चाहिए, उसमें कोई त्रुटि दिखाई नहीं देती। उस रात पोस्टमास्टर साहब 'हरि सिंग', 'हरि सिंग' की ही रट लगाए रहते हैं। हरिसिंह पुराना आदमी है। ढेरों हाकिम-हुक्काम के साथ काम कर चुका है। किसका कैसा मिजाज है, कौन किस तरह खुश होता है, वह जानता है। उस दिन आधी रात तक सिंहजी को साहब के डेरे पर रुकना पड़ा। क्योंकि ओड़िशा की गंदी आबो-हवा से यदि

कोई साहब अचानक पीड़ित होकर उलटी-सुलटी करने लगे तो हरिसिंह सोडा, कागजी नीबू आदि हाजिर करके साहब को सँभाल लेते हैं। साहब लोग आराम से सो जाने के बाद सिंहजी आधी रात को घर लौटकर अपने लिए रसोई बनाते। इसी वजह से सिंहजी ऊँचे पदों पर बैठे बड़े-बड़े हाकिमों से परिचित हैं।

हरिसिंह की दरखास्त पर पोस्टमास्टर साहब ने खूब अच्छी तरह सिफारिश करके शहर भेज दिया। कुछ ही दिनों में एक्सटेंशन का हुक्म आ गया। सिंहजी बहुत खुश थे, यह खुशखबरी गाँव भी लिख दी। इस वक्त सभी लोग सिंहजी की खुशी से खुश या दुःखी हो उठे थे। भविष्य-विधाता उनके लिए क्या विधान कर रहे हैं, उस ओर वे एक भी बार देखना नहीं चाहते। सिंहजी का यह इतना बड़ा आनंद पानी के बुलबुले की तरह फूट गया। गाँव से चिट्ठी आई है, गोपाल की माँ को सन्निपात हो गया है, बचने की आशा नहीं। सिंहजी ने पोस्टमास्टर साहब को वह चिट्ठी दिखाई। साहब बड़े दयालु हैं, तुरंत छुट्टी दे दी। सिंहजी सीधे गाँव के लिए चल पड़े। घर पहुँचकर उन्होंने जो कुछ देखा, उनकी आँखों की ज्योति खो गई। दुनिया मानो अंधकारमय हो। बुढ़िया का समय लगभग पूरा हो चुका था। उसने पति को क्षीण दृष्टि से अच्छी तरह देखा, दोनों हाथ ऊपर उठाकर दंडवत् किया, पति के पैरों की धूल लेने के लिए संकेत किया। क्या वह उस जरा सी धूल के लिए बाट जोह रही थी? सबकुछ खत्म हो गया, सिंहजी का अपना घर टूट गया। उस घर की बची-खुची दो चार चीजें बेचकर बेटे को साथ लेकर कटक लौट आए।

गोपाल माइनर पड़ता है। सिंहजी इन दिनों बहुत कष्ट में हैं, पेंशन हो गई है, गुजारा नहीं होता। घर में जो दो-चार लोटा, बरतन थे, उन्हीं को बेचकर खा रहे हैं। नौकरी में रहते समय बहुत मुश्किल से महीने में दो-चार आने बचाकर सेविंग बैंक में रखा करते थे, गोपाल के पीछे माइनर पढ़ाई में सब खर्च कर चुके हैं। सिंहजी को काफी उम्मीद है कि गोपाल पास हो जाए तो सारे कष्ट दूर हो जाएँगे। गोपाल भी कई बार दिलासा देते हुए कह चुका है, 'मुझे उधार-कर्ज लेकर पढ़ाइए पिताजी, नौकरी करने पर चुका दूँगा।'

हरि सिंह की आर्त प्रार्थना प्रभु दीनबंधु ने सुन ली। गोपाल माइनर पास हो गया। सिंहजी की खुशी की सीमा नहीं। अभी वही पुराने पोस्टमास्टर साहब थे। सिंहजी ने उनसे काफी अनुरोध किया। बड़े हाकिमों की भी कुछ कृपा थी। गोपाल सीधे मुफस्सल मक्रमपुर पोस्ट-ऑफिस का सब-पोस्टमास्टर नियुक्त हो गया। वेतन महीने मैं बीस रुपए। फिलहाल सदर पोस्ट-ऑफिस में चार महीने काम सीखकर मुकस्सल जाएगा।

हरि सिंह की खुशी की कोई सीमा नहीं थी। लगातार भगवान् की ओर ताकते हुए सिर झुकाकर प्रणाम करते और कहते हैं, ''निराली है प्रभु तेरी करुणा, दुखियारे की गुहार सुन ली।'' जिस दिन नौकरी की खबर मिली, उस दिन रात को एकांत में बैठकर सिंहजी खूब रोए। हाय! आज बुढ़िया होती तो कितनी खुश होती। उसके बेटे को हाकिम की नौकरी मिली है, खुशी से लोट-पोट हो जाती। हाय! उसकी किस्मत में नहीं था यह सब देखना। चलो, गोपाल हाकिम तो बना। भगवान् उसकी रक्षा करें।

गोपाल ने पहले महीने की तनख्वाह लाकर बूढ़े की हथेली पर रख दी। बूढ़े की खुशी का ठिकाना नहीं था। पैर जमीन पर पड़ ही नहीं रहे थे। हाकिम बेटा एक ही माह में इतना रुपया ले आया। रुपए चार-पाँच बार गिनने के बाद अंटी में खोंसकर सो गए। दूसरे दिन सुबह सरपट बाजार की ओर भागे। जूता, कुरता, कपड़े—जो भी कुछ चाहिए, खरीदा। गोपाल हाकिम जो हो गया है, भला ऐसे-वैसे कपड़े पहनेगा? भेष देखकर ही भीख मिलती है। उसी तरह की पोशाक चाहिए।

इधर गोपाल बाबू ऑफिस में दूसरे साहबों के साथ बैठकर अंग्रेजी लिखते हैं। हमेशा साहबों के बीच ही काम करना पड़ता है। सभी 'डाकमुंशी बाबू' कहकर बुलाते हैं, पूरा नाम गोपाल चंद्र सिंह। इधर घर पर आकर देखते हैं कि बुढ़ऊ एक मैली-कुचैली धोती पहने काम में जुटा है, ताकि गोपाल को कुछ अच्छी-अच्छी चीजें बना-बनाकर खिला सके—गोपाल नहाने गया, गीले कपड़े अभी तक सूखे नहीं—बेटा काम में बुरी तरह उलझ गया है, बस यही चिंता लगी रहती रात-दिन। पहले बूढ़े सिंहजी कभी-कभी भगवान् का नाम लिया करते थे, कुछ-कुछ धर्म-कर्म भी किया करते थे, अब गोपाल बाबू के कारण सबकुछ भूल चुके हैं। शायद भगवान् वह सब देखकर बुढ़ऊ पर खफा हो गए। धमकी देते हुए बोले, ''अरे निर्बोध, यह सब क्या है रे! ठीक है समझेगा।''

इन दिनों गोपाल बाबू की भावनाएँ कुछ-कुछ बदलने लगी हैं। अब बाप को देखने पर झूठे ही कुछ न कुछ बड़बड़ाने लगते हैं। यह मूर्ख है, अंग्रेजी नहीं जानता, मजदूर है—मैले कपड़े पहनता है, इसे बाप कहकर बुलाऊँ, लोग क्या कहेंगे! उस दिन कुछ शिक्षित महिलाएँ शमीज पहने खड़ी थीं—बूढ़े के बदन पर कुर्ता नहीं था, उनके सामने से गुजर गया। कितने शर्म की बात है! इसे घर से न निकाला तो बेइज्जती हो जाएगी।

एक दिन डाकमुंशी साहब ने बाप से कह दिया, ''देखो, तुमने मुझ पर कोई उपकार नहीं किया है। इच्छा हो तो इस घर में रहो, वरना चले जाओ। और देखो, जब साहब लोग हमारे घर आएँ, तो तुम बाहर मत निकलना।'' गोपाल की बातें सुनकर बूढ़े की कनपटी भाँय-भाँय करने लगी, वह निढाल हो बैठ गया। किसे कहे बेटे की बात? गलत जगह पर हुआ घाव। न देखा जा सकता है, न दिखाया जा सकता है। जिससे मन की बात बताता, वह जा चुकी है। बुढ़िया की याद आ गई, खूब रोया, चारों ओर देखा, कोई धीरज बँधानेवाला नहीं था। बूढ़ा दुःख में बुढ़िया को याद करता है, सुख में याद करता है। उसने आँसू पोंछ लिये,

फिर नहीं रोया। कहीं इससे गोपाल का अमंगल न हो जाए।

कल सुबह गोपाल बाबू मुफस्सल जाएँगे अपने काम की जगह, बुढ़ऊ को नहीं बताया है। सुबह उठे। अवज्ञा भरे भाव से बोले, ''पिताजी, मैं मुफस्सल चला। सारा सामान ले आना। सामान है ही कितना! किंतु खबरदार, कुली-मजदूर मत करना; यदि किया तो तुम्हीं सँभालना, मैं पैसे नहीं दूँगा।'' साहब पोशाक पहनकर बगल में छाता दबाकर छड़ी घुमाते हुए चले गए। बुढ़ऊ क्या करे? सारा सामान समेटकर एक गठरी बाँधकर सिर पर रख लिया। चल नहीं पा रहे थे, शरीर में ताकत नहीं है, बीच-बीच में आँखों से पानी बह जाता है, दस जगह रुकते-ठहरते लगभग शाम को मक्रमपुर पहुँचे। देर से पहुँचने की वजह से साहब ने काफी फजीहत की। बुढ़ऊ निढाल बैठे थकान मिटा रहे थे।

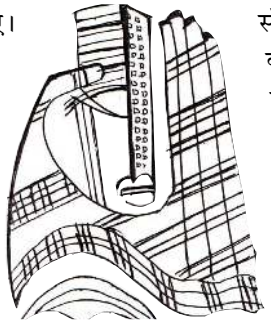

साहब सुबह-शाम ऑफिस जाते हैं, बुढ़ऊ मुँह बंद किए घर के कामकाज में जुटे रहते हैं।

बाप-बेटे दोनों को साथ बैठकर सुख-दुःख की दो बातें करते कभी किसी ने नहीं देखा। डाकमुंशी हुए मुफस्सल के एक हाकिम। तमाम लोग आकर दंडवत् करके जाते हैं, मूर्ख बुड्ढा जानता ही क्या है कि उसके साथ बातें करे?

बूढ़े के बदन में मुफस्सल का पानी नहीं रुच पाया, बुखार आने पर खों-खों करके खाँसते हैं, खाँसी रात में अधिक होती है। साहब को सोने में दिक्कत हुई। उसने पीअन को हुक्म दिया, ''बुड्ढे को केवड़े की झाड़ी में फेंक आओ।'' वह पीअन मूर्ख था, उसने अंग्रेजी नहीं पढ़ी थी, उसके पास एक देसी हृदय है। उसने सोचा, 'क्या इस बूढ़े रोगी को केवड़े की झाड़ी में सुला दूँ?' उस दिन बूढ़े को तेज बुखार था। तीन दिनों से कुछ खाया नहीं, आधी रात थी। अँधेरा था। ठंड से बूढ़े की खाँसी खूब तेज हो गई। साहब खूब खफा हो उठे। बूढ़े के सीने पर दो अंग्रेजी घूँसे जड़ दिए, बिस्तर उठाकर बाहर फेंक दिया। बूढ़ा गाँव चला गया।

निकट रहनेवाले एक अच्छे आदमी से पता चला कि गोपाल बाबू का मन उस दिन से बहुत खुश है। और उधर बुढ़ऊ ने गाँव पहुँचकर अपने दो बीघा जमीन को बँटाई में लगा दिया। घर पर बैठे-बैठे धान मिल जाता है। पेंशन के पैसों से कपड़ा-लत्ता, नमक-तेल का खर्चा चल जाता है। जब से खाँसी शुरू हुई है, बुढ़ऊ थोड़ी-थोड़ी अफीम लेते हैं। पूरा खर्च चल जाता है। घर के चबूतरे पर बैठकर 'हरि' नाम लेते हैं। अब बाप-बेटे दोनों खुश हैं। दूसरों का सुख देखकर पाठक महोदय खुश हों।

सा
अ

रायरंगपुर, मयूरभंज
ओड़ीशा
दूरभाष : ९६५०९९०२४५

कविता

कबीर कहते

● मोहन उपाध्याय

अजब जमाना आया रे!
खादी के कपड़ों के नीचे, है रेशम की छाया रे!
बाहर तो साधु कहलावे, भीतर जाल रचावे रे!
घर में नाज नहीं खाने को, बाहर शान दिखावे रे!
औरों को उपदेश सुनावे, पंडितजी कहलावे रे!
नाम नहीं साईं का लेवे, फिर कैसे सुख पावे रे!
असली की डुग्गी पिटवावे, नकली माल बनावे रे!
लोगों को धोखा देने में, लाज नहीं कुछ आवे रे!
नीति-अनीति नहीं कुछ जाने, नेता भी बन जावे रे!
गरज पड़े तो मीठे बोले, काम नहीं कुछ आवे रे!
औरों के बल माल कमाया, फिर भी सेठ कहावे रे!
भूखों मरते भाई-बंधु, कौड़ी नहीं दिखावे रे!
छोटी चोरी अगर करे तो, चोर उसे बतलावे रे!
और बड़ी चोरी जो कर ले, वह साहू बन जावे रे!
धन-दौलत जो पास अगर है, झुक-झुक शीश नवावे रे!
बगुला-भगत ताक में बैठे, नजर चुका ले जावे रे!

धरम आज धंधा बन बैठा, पैसा दरशन पावे रे!
पाप छिपाने, नाम कमाने, मंदिर भी बनवावे रे!
जीभ चटोरी, जगी कामना, कैसे भूख मिटावे रे!
छप्पन भोग लगाकर फिर तो, नाच-गान करवावे रे!
लाज आ रही श्रम करने में, नौकर जो रखवावे रे!
स्वावलंब और स्वाभिमान बिन, देश दुर्दशा पावे रे!
साईं को सब ही तो प्यारे, फिर क्यों भेद भुलावे रे?
स्वार्थ के बस अंधा हो, क्यों ऊँच-नीच बतलावे रे!
डूब गई आशा-उमंग, क्यों आज निराशा छावे रे?
आतम-बल तेरी रग-रग से, क्यों न उमड़ता आवे रे!
कहे 'कबीर' सुनो रे साधो! क्यों न सँभल अब जावे रे?
लगन लगा अब करम-धरम की, सत् की राह बुलावे रे!

सा
अ

२६/११७, क्रिश्चियनगंज, विकासपुरी,
अजमेर-३०५००१ (राजस्थान)
दूरभाष : ०१४५-२६२९९५९

न्याय की आस लिये एक लोकनृत्य 'नाग-सैला'

• अखिलेश सिंह श्रीवास्तव

लोक संस्कृति, लोकजीवन, लोकनृत्य, लोक साहित्य, ये सभी हमारे मस्तिष्क में आदिकाल के निवासियों की ऐसी छवि अंकित करते हैं, जिनका जीवन प्रकृति के आस-पास, उसके उपादानों के मर्यादित उपयोगों के साथ, आत्मिक अन्विति स्थापित करता है। सदियों से शब्द-शिल्पियों ने अपनी-अपनी विधा में इनके शब्द-बिंब उकेरे हैं। यदा-कदा इन्हें प्रशासनिक सांत्वना भी प्राप्त हो ही जाती है। 'सांत्वना' इसलीए कहा कि यदि परिणामोन्मुखी कार्ययोजनाओं का निष्पक्ष क्रियान्वयन होता तो 'नाग-सैला' जैसे लोकप्रचलित, अद्‌भुत नृत्य पर विलुप्ति की कुदृष्टि नहीं पड़ती। दोष किसे दें? मानव स्वभाव का विहंगावलोकन करें तो पाएँगे कि कभी भी संपन्नों ने विपन्नों के दारिद्र्यहरण के स्थायी प्रयास नहीं किए। तथाकथित नगरीय सभ्यता ने भी ग्रामीण जीवन के उन्नयन के लिए प्रश्नचिह्नित प्रयास ही किए हैं, जो हमारी सामाजिक, सांस्कृतिक, राष्ट्रीय मननशीलता पर गंभीर चिंतन-दायित्व उत्पन्न करता है! यह रिपोर्ताज उन आम जनों की ओर से, जो अपने दैहिक-दैविक-भौतिक दु:खों; अर्थात् 'दु:खत्रय' को भुलाकर इस प्राचीन लोकनृत्य 'नाग-सैला' को जिंदा रखे हुए हैं, इस सुअभिलाषा के साथ 'जनार्पण' है कि इसे समुचित संरक्षण प्राप्त हो!

भाद्रपद-शुक्लपक्ष-पंचमी, अर्थात् 'ऋषि पंचमी'। इस बात का स्मरण मुझे तब हुआ, जब कलेंडर में कुछ आवश्यक कार्य चिह्नित कर रहा था। ऋषि पंचमी ऐसा त्योहार है, जिसमें हम सभ्यता और संस्कृति के पोषक 'सप्तर्षियों' की आराधना करते हैं, जिससे षड्‌रिपुओं से विनिर्मुक्ति तथा सुख-सौभाग्य की प्राप्ति हो। सर्पदंश झाड़नेवालों के लिए तो यह एक अति महत्त्वपूर्ण दिवस है, जो नाग-सैला की पीठिका है। आज मौसम साफ है, इस बात का साक्षात् प्रमाण चमकते नभोमणि के स्पष्ट दर्शन हैं। वैसे भोर की पूर्व वेला में मेघज बूँदों ने मेदनी से आलिंगन कर अपना नाभिनाल संबंध जता दिया है। संभवत: इसीलिए यत्र-तत्र नम धरती की सोंधी सुगंध फैली है। इसके स्वागत में पंछियों का कलरव एक अहम भूमिका निर्वहन कर रहा है। मैं तो इस सोंधी सुगंध को 'प्रकृति प्रदत्त इत्र' की उपमा दूँगा। खेती-किसानी के दृष्टिकोण से यह वक्त बड़ा महत्त्वपूर्ण है, क्योंकि इस समय फसलों को खरपतवार से बचाना होता है। कुछ यों समझें कि जैसे युवा होते बच्चों को उनके पथभ्रष्ट, उद्‌दंड नए मित्रों से बचाना। कह सकते हैं कि कृषि-पालन और संतान-पालन समान महत्त्व के हैं। इन्हीं कार्यों के अवलोकनार्थ मैं अपने कृषि-ग्राम 'टिकारी' के लिए निकला। गाँव के प्रवेश चौक पर भीड़ देखकर प्रथम भाव अशुभ के प्रति गया, पर परमात्मा की कृपा से ऐसा कुछ हुआ नहीं। क्या करें! हमारी सोच परिस्थितिजन्य होती है, जो वर्तमान में बहुत चिंतनीय है। अभी किसी से पूछने जा ही रहा था, तभी सरपंचजी हाथों में धतूरा लिये तेजी से आते दिखे। मैंने परिहास किया, ''क्यों सरपंचजी! ये धतूरे का शौक कब से हो गया, आप तो रगड़ा तंबाकू के कद्रदान हो!'' मुसकराते हुए उन्होंने कहा, ''भैयाजी, ऐसी बात नहीं है, आज नाग-सैला होगा, ये शिवजी के चढ़ावन हैं।'' मेरा मन उत्फुल्ल-प्रसन्न हो गया। लंबे समय से प्रयासरत था; इस मन आह्लादन नृत्य का चक्षु-साक्षी बनने के लिए। धीरे-धीरे जन पारावार बढ़ रहा है, आन-गाँव के लोगों का हुजूम भी पान-गुटखा खाता अपनी उपस्थिति दर्ज करा रहा है।

विशेष संवाददाता एवं मीडिया सलाहकार। विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में आलेख, रिपोर्ताज आदि निरंतर प्रकाशित, कथ्येतर लेखक। 'राष्ट्रीय मयूर' (हिंदी मासिक पत्रिका) का संपादन कार्य। संप्रति वोल्गा वेलफेयर ऑर्गेनाइजेशन के अध्यक्ष तथा प्रबंधकीय कृषक।

हमारे यानी दादू साहब के पारिवारिक देवी मंदिर के सामने बने खिरियान में गाँववालों ने बिना छत की एक नाग-नागिन मढ़िया बनवाई है। इसी मढ़िया में आज नाग-मंत्र का सिद्ध व्यक्ति पुजारी की भूमिका में है। उसके सहयोग के लिए तीन आदमी साथ खडे हैं। ये चारों सामान्य से विरत भाव-भंगिमाओं के साथ सिंदूर, चावल, नीबू, धतूरा, विल्बपत्र, दोना, करेला, दूध, धूप, दीप, घंटे इत्यादि के साथ नागदेव के रूप में पूजित 'बासंग देव' की पूजार्चना कर रहे हैं। उनकी भाषा भी ग्रामीण हिंदी मिश्रित लोकभाषा है, जो बाहरवालों को अटपटी सी प्रतीत हो सकती है। सहसा मैं यह सोचकर रोमांचित हो उठा कि अचानक

ये नागदेव अनुप्राणित हो जाएँ तो क्या दृश्य निर्मित होगा? नाग हमारी धारणाओं में वैज्ञानिक, तकनीकी तर्कों को परास्त कर अलौकिक दृश्य चित्रित करता है। बाल्यकाल से मणिधारी नाग, इच्छाधारी नाग अपने नेत्रों में रिपुछवि को अंकित करनेवाली प्रतिशोधी नागिन और न जाने क्या-क्या सुनते आए हैं। ये मान्यताएँ अखिल भारत में एक रूप से प्रचलित हैं। समीप खड़े युवक शुभम साहू से मैंने उन अन्य तीन युवकों के बारे में पूछा तो उसने बताया, ''ये लोग यादव काका (प्रधान मंत्र साधक) के शिष्य हैं, जो सर्पदंश झाड़ने का मंत्र सिद्ध कर रहे हैं। ये तीनों एक माह से बड़ा संयमित जीवन जी रहे हैं। ये भूमि पर सोते हैं, करेला, कुंदरू, भटा, पान, मिर्च, दूधवाली चाय का सेवन नहीं करते।'' उसके विश्वास के समक्ष मैं अनुरंजित था। तभी समीप खड़े एक वृद्ध बीच में बोल उठे, ''भैयाजी! बीते बरस जिन लोगों को कीड़े काटे के विष को झाड़कर अभिमंत्रित पानी से कलाई में बंधन बाँधे गए थे, आसो पंचमी में उन्हें खोला गया है।'' गाँव में साँप या नाग के संबोधन के लिए 'कीड़े' शब्द का प्रयोग किया जाता है। इनका मानना है कि बखत-बेबखत उसका नाम नहीं लेना चाहिए।

नृत्य ने हमारी सांस्कृतिक भावनाओं पर बड़ा गहरा प्रभाव छोड़ा है। नौ रस भी नृत्य के माध्यम से बेहतर अभिव्यक्त होते हैं। संस्कृति-जनक महादेव शिव एवं योग-योगेश्वर कृष्ण, दोनों ही नृत्य के सनातन देव हैं। भारत जैसे धरोहर-धरणी राष्ट्र में एक से बढ़ के एक लोकनृत्यों का खजाना छिपा है, जिनमें से कइयों को तो सरकारी संरक्षण भी प्राप्त है; जैसे बहुरूपिया, गरबा, बिहू, करमा, पांडव-नृत्य, घूमर, राउत, कालबेलिया, चेरी, अहीरी, गौंडी, भगोरिया, सुआ, सैला इत्यादि। इन सभी नृत्यों की बहुरंगी विविधताओं के बावजूद एक समानता भी है कि ये सभी लोकनृत्य किसी-न-किसी जाति, वर्ग, स्थान अथवा पंथ के लोगों द्वारा किए जाते हैं; परंतु इनके विपरीत 'नाग-सैला' एकमात्र ऐसा नृत्य है, जो सभी पंथ, जाति, समुदाय के लोगों द्वारा किया जाता है। इसमें किसी प्रकार का उपरोक्त उल्लेखित बंधन नहीं है। आज भी यहाँ यादव, चौरसिया, साहू, कुम्हार, नामदेव एवं अन्य बिरादरियों के इच्छुक लोगों द्वारा नृत्य किया जा रहा है। अत: मेरा मानना है कि 'नाग-सैला' नृत्य 'पंथनिरपेक्ष-लोकतंत्रात्मक लोकनृत्य' के रूप में अंगीकार किया जाना न्यायोचित होगा। नाग का आदिकाल से मानव के साथ दैवीय संबंध रहा है, फिर चाहे वह घटनाक्रम समुद्र-मंथन का हो, कृष्णलीला का हो, विष-विद्या का हो अथवा अन्य कोई हो। पौराणिक काल में तो मानव ने अपनी प्रजाति ही नागों के आश्रित कर ली थी, जिसका लघु अंश आज भी 'नाग' उपनाम के रूप में दिखता है। इसी अनुक्रम में आज का वातावरण बहुत कौतूहलपूर्ण है। नीले गगन के तले जनसमूह की हर्ष-लहर इतनी तीव्र है कि घड़ी भर पूर्व जिस मेघगर्जना से गगन गुंजायमान हो गया था, उसे लोगों ने अनसुना कर दिया। पूर्ण संभावना है कि लोगों की इस नजरंदाजगी से रुष्ट हो ये वर्षा मेघ नहीं बरसे, अन्यथा उनके आँचल से जलकण तो खूब छलक रहे थे। सामने टोला पार से कुछ लड़के साइकिल के निकले पुराने टायर को चलाते हुए भारत के भविष्य होने की उपमा के भावों से कोसों दूर इधर ही आ रहे हैं। यह चाक इनकी अल्पवय धींगड़-मस्ती का आपत्तिशून्य साथी है। दूसरी ओर यहाँ इस दुकान की पट्टी पर, जहाँ मैं खड़ा हूँ, मूलत: पान की दुकान है; परंतु संचालक ने व्यापारिक कौशल दिखाते हुए चाय-नाश्ते और जनरल स्टोर को भी समुचित स्थान दिया है। कह सकते हैं कि यह ग्रामीण मल्टी स्टोर है। यहीं से फुटाने खरीदकर रूखे-उलझे बालोंवाली, शालेय गणवेश में ग्राम बालिकाएँ भी नृत्यारंभ की प्रतीक्षा में अप्रतिद्वंद्वी निश्चिंतता से खड़ी हैं। मुझे ऐसा आभासित हुआ कि ये बालिकाएँ उन लोगों को मुँह चिड़ा रही हैं, जो वातानुकूलित कक्ष में बैठकर नारी-विमर्श पर ऊल-जलूल टिप्पणियाँ करते रहते हैं। लीजिए नाग मढ़िया से पूजा पूर्ण करने के पश्चात् अब विधिवत् पाठ प्रारंभ हो रहा है। बीचोबीच सैला-पट मढ़ा है, जिसमें नाग-नागिन एवं शिव का चित्र अंकित है। यहाँ पुन: इनकी पूजा हुई। इसी के साथ शुरू हो रहा है मानव का नाग के प्रतीकात्मक रूप में परिवर्तन का एक अविश्वसनीय, अकल्पित, अद्‌भुत नृत्य 'नाग-सैला'। सभी नर्तक एक के पीछे एक, पंक्तिबद्ध, एक-दूसरे की कमर में बँधे गमछे को पकड़ के खड़े हैं। सबसे आगे एक युवक नागफन के प्रतीक रूप में 'सूपा' पकड़ा है, जबकि सबसे पीछेवाले के हाथ में एक झाड़ू है, जो नाग की पूँछ का प्रतिनिधित्व कर रही है। ऐसा प्रतीत हो रहा है कि सामने एक विशाल नाग फन उठाए खड़ा है। ये लोग नाग को शिव का जनेऊ मानते हैं, इसलिए शिव परिक्रमा के साथ नृत्यारंभ हुआ। बहुश्रुति है कि पटपूजा के साथ सूपे में स्वत: भार आ जाता है। इस नृत्य के नियमों में सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण दो विधान हैं—प्रथम, जहाँ से सूपा निकलेगा, वहीं से सारे लोग निकलेंगे। द्वितीय, जैसे ही सूपा झाड़ू से मिलेगा, नृत्य समाप्त हो जाएगा। लेकिन व्यावहारिक रूप में नृत्यांत में ही दोनों मिलते हैं। सुनिए डुगडुगी की आवाज! इसकी थाप पर इन लोगों के पाँव और धड़ थिरक उठे। देखते-देखते पंद्रह-बीस लोगों की टोली ऐसे झूमने लगी, मानो कोई विशाल नाग यहाँ-वहाँ लहराते हुए दौड़ रहा हो। चित्त को आनंदित करनेवाला दृश्य मेरे सम्मुख है और मैं अपने पाठकों के लिए संजयदृष्टि रखे हुए हूँ। हम सभी इस मानव निर्मित नाग लहरों में खोए थे कि अचानक एक स्त्री को जोर से भाव आ गए, उसके बँधे केश खुल गए, बेसुध-सी वह दो बार गिर भी गई, इसीलिए सुरक्षार्थ अब तीन-चार महिलाएँ उसके साथ चल रही हैं। भाव आस्था मिश्रित आनंद की वह चरम स्थिति है, जिसमें व्यक्ति सुध-विहीन हो जाता है, ऐसा मेरा विश्वास है। मैं इस स्त्री को करीब से देख ही रहा था कि आभास हुआ, कोई मेरे नजदीक से पैर पटकते हुए निकला। मैं चौंक गया, देखा कि सूपा लिये मुँह से फुफकार की आवाज निकालते नाग-सैला टोली बाजू से निकली। मुझे सच स्वीकार है कि घड़ी भर के लिए मैं थोड़ा डर गया था।

ये लोग कभी बैठते-उठते, कभी किसी पत्थर पर चढ़कर उतर जाते। सहसा सूपा थामे व्यक्ति दौड़ता हुआ आया और पास पड़ी एक

खटिया के नीचे से निकल गया, बस देखते-ही-देखते सारे लोग वहीं से निकलने लगे। इस दृश्य से जन-समूह में खासा कोलाहल मच गया। जरा इधर ध्यान दीजिए, जिस डुगडुगी ने अभी तक अकेले वाद्य-ध्वनि का दायित्व वहन किया था, अभी एक ग्रामीण के उत्साहपूर्वक ढोलक बजाने के कारण वह अकेलापन महसूस नहीं कर रही है। अब दो सखियाँ मिल नृत्य को ध्वनि प्रदान कर रही हैं। चारों ओर हर्ष-उल्लास के साथ मिलकर मुदितय वातावरण निर्मित कर रहा है। हर क्षण आनंद से भरा है। संभव है, इन्हीं क्षणों के लिए कन्हयालाल मिश्र 'प्रभाकर' ने 'क्षण बोले, कण मुसकाए' जैसी पुस्तक की रचना की हो। मित्रो! ऊपर नीलगगन को देख ऐसा लग रहा है कि दोपहर विदा की सूचना लेकर साँझ-धूप आई है। मौसमी भंगिमाएँ भी सद्यस्नाता-सी हो रही हैं। आसमान के शुष्क कंठ की प्यास बुझाने के लिए मेघागम की बदली अभी-अभी वरुण देव छिटका गए हैं। हलकी श्यामल बदली के आगमन से अभी तक प्रकाशित मेदनी भी हलकी सी श्यामल हो चली है, मानो अँधियारा अपना स्थान सुरक्षित करना चाहता है। मौसम की इस चंचलता से अनभिज्ञ सभी कलाकार श्रद्धा के साथ नागभंगिमाओं के नृत्य में एक अलग ही लोक में मगन हैं। ये एक गीत भी गुनगुना रहे हैं, लोकभाषा में होने के कारण यह टूटा-फूटा समझ में आया। यथा—

ईश्वर चरावे नाग कौन··
सौ अंडा फोड़ें··
लकड़ी समेटे··
सात अंडा फोड़ें··
एक अंडा फोड़ें·· ''

प्रतीकों के माध्यम से प्रकृति के साथ जुड़ने का सुंदर माध्यम है—'नाग-सैला'। हमारी संस्कृति की एक मूल विशेषता है कि सार्वजनिक आयोजनों में मेला-दर्शन अवश्य होता है। ऐसा यहाँ भी हुआ। एक रिक्त भूखंड में प्लास्टिक की दुकानें, लकड़ी के चर्र-चर्र घूर्णन ध्वनि करनेवाले झूले, हाथठेला में चलित चाय-नाश्ते की दुकानें इत्यादि लग गई हैं। 'नाश्ता-चाय-पान' तो ग्राम्य आयोजनों की शान हैं, इसी भावना के चलते मैंने एक समौसा, दो चाय और दो पान का स्वाद अपनी जिह्वा को लेने का अधिकार दे डाला। यह बात अलग है कि गृह वापसी पर उदर विकार मुक्ति चूर्ण के शरणागत होना पड़ा।

इन आनंददायी क्षणों के मध्य अचानक एक व्यक्ति के आगमन से लोगों का ध्यान बँटा। लखनादौन परिक्षेत्र से एक सपेरा आया, जिसने कहा कि वह इस गाँव के सारे सर्पों को एक स्थान में बुला सकता है। पर ग्रामवासियों द्वारा उसके दावे की सत्यता परीक्षण किए बिना ही यथोचित सम्मान दे विदा किया। शायद यह सही निर्णय था। लेकिन लोगों के मन से उसे विदा न कर सके, क्योंकि उसके जाने के देर बाद तक लोगों में चर्चाएँ होती रहीं। देखिए न, मैं खुद आप से उसी की बात कर रहा हूँ। कर्यक्रम अपनी गति से संपूर्णता की ओर अग्रसर है। लोक-नयन, लोक-चित्त में लोकनृत्य के अलौकिक बिंब सुरक्षित कर रहे हैं। भरनी से शुरू हुआ नृत्य नाग-सैला गान की समाप्ति के साथ पूर्ण हुआ। इसी समय सूपा-फन झाड़ू-पूँछ से जा मिला और नाग-सैला नृत्य का विधिवत् समापन हुआ। ठीक इसी समय जलकण समेटे समीर ने जोरदार दौड़ लगा दी। भाद्रपद की इस नैसर्गिक क्रिया को भी लोक आस्था ने दैवीय कृत्य से जोड़ लिया। ठीक ही तो है, इन विश्वासों से आस्था-दीप भी प्रज्वलित रहता है। भीड़ धीरे-धीरे छँटने लगी और पीछे छोड़ गई केवल यादें। नम मिट्टी में उछले लोगों के पैरों के निशान, फेंके हुए फूल-पत्ते, पैकेट्स, अबीर, इत्यादि। यहाँ एक गीत के बोल समाचीन जान पड़ते हैं—'याद-याद-याद, बस याद रह जाती है।'

इन्हीं यादों को शाब्दिक चित्र प्रदान करने के उद्देश्य के साथ मैंने प्रधान मंत्र साधक 'लखन लाल यादव' को अपने बाड़े में आमंत्रित किया। मेरे द्वारा पूछे गए बहूदेशीय प्रश्नों के उत्तर इन्होंने बहुत लघु रूप में देकर बात समाप्त करनी चाही। कारण पूछने पर वही जवाब आया, ''भैयाजी ऊ की बात, बेबखत करना, ऊ को बुलाना है।'' अत: मैंने यही सोचकर संतुष्टि कर ली कि लेखकीय-सिसृक्षा के लिए दो शब्द भी बहुत होते हैं। यह मेरी संतुष्टि की अनिवार्यता है; अन्यथा प्रश्न तो अभी बहुत शेष हैं। राजस्थान में कालबेलिया नृत्य, सपेरनों द्वारा काले घेरदार वस्त्र पहनकर गोल-गोल घूमकर किया जाता है। इसे सरकार द्वरा संरक्षण प्रदान किया गया है, ऐसा मेरे ज्ञान में है। लेकिन इसके विपरीत 'नाग-सैला' एक ऐसी गुम होती अद्भुत नृत्य-शैली है, जिसमें वेशभूषा, भाषा-शैली किसी प्रकार का कोई कठोर बंधन नहीं है। यह पूरी तरह नाग के जीवन-वृत्त का प्रतीकात्मक प्रस्तुतीकरण है। इसे हर हाल में न केवल संरक्षण, अपितु धरोहरस्वरूप की स्वीकरोक्ति मिलनी चाहिए। हमारी विडंबना तो देखो कि भारतीय राजनीति धर्म, जाति, पंथ पर आश्रित है, जबकि यह पूर्णत: नागरिकों का व्यक्तिगत मामला है, न कि राजनैतिक। अपवादों को छोड़ दें तो आज जनप्रतिनिधि लोकतंत्र के मंदिर में अल्प-शिक्षित रूप से अशुद्ध उच्चारणों एवं भाषा के साथ संकल्पविहीन निज उत्थान के लालच में दंभ से भरे सलाम साधकों से घिरे भाग्य द्वारा प्रदत्त कुरसी का संकीर्ण भाव से भोग मात्र करते प्रतीत होते हैं। परिणामत: नाग-सैला जैसी लोककलाएँ अश्रुधार बहाने के लिए विवश हैं।

गृह-वापसी के समय मैंने दो पल के लिए आँखें बंद कीं तो स्मृतिपटल में आज का पूरा दिवस-चित्र घूम गया। सत्य है, 'मानव स्मृतिजीवी प्राणी है।' हमे मुंसिफ मिजाज के साथ चिंतन करना होगा कि हम 'नाग-सैला' लोकनृत्य के साथ न्याय करें या धृतराष्ट्र की अन्याय सभा के पाषाणी हृदयवाले मूक-कुसदस्य बनें पर स्मरण रहे, सर्वशक्तिमान आश्चर्यों के जनक 'समय' द्वारा अवश्य ही न्याय किया जाएगा और उस समय हम निरुत्तर, नि:शब्द, शर्मिंदा, निर्जीव से खड़े होंगे। वंदे!

दादू मोहल्ला-संजय वार्ड,
सिवनी-४८०६६१ (म.प्र.)
दूरभाष : ९४२५१७५८६१

अरेंज मैरिज

● जतिंदर कौर

आषाढ़ का महीना है। हलकी-हलकी बारिश हो रही है। हर संध्या की तरह आज भी मैं अपनी छत पर टहल रही हूँ। एकाएक पड़ोसी की टीन की छत पर पड़ रही वर्षा की बूँदों के मधुर संगीत को धुँधली सी बैंड बाजे की आवाज ने ढक लिया। दूर किसी घर में शादी थी। मुझे एकदम रोशनी का खयाल आ गया। वह ह्यूमैनिटी की छात्रा थी। ऊँची कद-काठी और गंभीर स्वभाव की लड़की के संबंधों का दायरा भी सीमित था। सदा किताबों से चिपकी रहनेवाली उस लड़की को अकसर उसकी सहेलियाँ चिढ़ातीं, 'कितनी बोरिंग और अनरोमांटिक है! देखना, एक दिन किसी भोंदू से लड़के से इसकी अरेंज मैरिज हो जाएगी।' वह अपनी रोमानी आँखों से मुसकरा देती। बी.एड. पूरी होते ही उसे ऐडड स्कूल में नौकरी मिल गई।

अपनी छोटी बहन रीमा से एक दिन उसे पता चला कि घर में उसकी शादी की बातें शुरू हो गई हैं। रोशनी अपनी सोच पर किसी का पहरा नहीं लगने देती। बेखौफ सी, बेफिक्र सी बस अपनी कल्पना की उड़ानें भरती, हर रोज नई उद्‌भावना। किसी धारावाहिक कथा की तरह वे पात्र उसके इर्द-गिर्द घूमते रहते। उस दिन उसे माँ से पता चला कि किसी से मिलना है तुम्हें मौसी के यहाँ।

आज मौसी के यहाँ बड़ी रौनक थी। रोशनी का इससे पहले ऐसा स्वागत मौसी के घर में नहीं हुआ था। उनके ड्राइंग रूम में पहले से ही कुछ मेहमान बैठे हुए थे। उनके बीच आगामी परिस्थिति से अनजान लड़की को बड़े आदर-सम्मान के साथ बिठाया गया। वे लोग अपनी बातचीत में व्यस्त थे। तभी माँ ने धीरे से उसके कान में फुसफुसाया—''वह लड़का देखो, तुम्हें उससे शादी करनी है। पसंद आया तो ठीक है नहीं तो···।'' कानों ने वह वाक्य जैसे सुनने से साफ इनकार कर दिया। मस्तिष्क ने इस बात का विरोध किया और दिल ने भावनाओं के सौदे की बात ठुकरा दी।

फिर भी उसने एक बार माँ के मुसकराते हुए चेहरे की तरफ देखा। मौसी के दूसरी बार अंदर आते ही मुख्य आगंतुकों का परिचय कराया—''यह है रोशनी, रचना की बड़ी बेटी और यह है मानव ए.बी.सी. मिल मालिक का इकलौता वारिस।'' रीमा चाय ले आई। मौसी ने दोनों की

नवोदित लेखिक। विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में लेख, कहानी प्रकाशित। सिख नेशनल कॉलेज बंगा, शहीद भगत सिंह नगर, पंजाब में हिंदी की सहायक प्रोफेसर।

तरफ देखा और सीढ़ियों की तरफ इंगित करते हुए कहा, ''आप दोनों की चाय छत पर है।'' मानव को पहले उठने का इशारा मिला।

छत पर पहुँचते ही रोशनी ने सुरमई शाम के आकाश पर नजर दौड़ाई। तीव्र गति से उड़ती हुई गौरैया इस तरह पृथ्वी की तरफ आ रही थी कि अनुमान लगाना मुश्किल था कि वह आजाद थी या गुलाम गुरुत्वाकर्षण की।

''हैलो, मैं मानव! मौसी ने···''

''जी'', रोशनी ने बात काटते हुए कहा।

थोड़ा रुककर मानव ने पूछा, ''आपके क्या-क्या शौक हैं?''

''खाना पकाना और बस खाना पकाना। और आपके?''

''समाज-सेवा और बस समाज-सेवा।''

''आगे क्या करना चाहती हो?''

''वही काम, जिसे आज की पढ़ी-लिखी औरत अपना अधिकार समझती है।''

''खाना कौन पकाएगा?''

''समाज-सेवक कभी अपनी भूख का खयाल नहीं करता।'' रोशनी ने व्यंग्यमयी इरादे से कहा। चाय के ऊपर आ चुकी मलाई से साफ पता चल रहा था कि चाय का ताप ठंडा होकर शांत हो चुका था।

मानव ने रोशनी के मन को और टटोलने के लिए पूछा, ''मैं संयुक्त परिवार में विश्वास नहीं रखता, पर अपने पैरेंट्स से बहुत प्यार करता हूँ। आपका क्या खयाल है?''

''मैं अपनी आजादी से बहुत प्यार करती हूँ। मनुस्मृति में मनु ने कहा है कि स्त्री को कभी भी अकेले नहीं रहने देना चाहिए। बचपन में उसे पिता के अधीन और युवावस्था में पति के

अधिकार में रहना चाहिए।''

अपने उत्तर से रोशनी ने अपनी पराधीनता का खंडन किया।

''कभी-कभी रिश्तों से समझौता करना पड़ता है।'' मानव ने कहा।

''जी मैं समझौते से अधिक बदलाव में विश्वास करती हूँ।''

मानव एकटक रोशनी की ओर देखता रहा।

आँगन में खड़ी माँ ने उत्तेजित स्वर में रोशनी से पूछा, ''कैसा लगा?'' रोशनी चुप खड़ी रही। माँ उसकी चुप्पी भाँपते हुए बोली, ''कुछ खामियाँ तो सबमें होती हैं।''

''मुझे संपूर्णता पसंद है।'' रोशनी ने आधिकारिक लहजे में कहा।

''तुम बहुत जिद्दी हो···।''

''मुझे अपनी जिद पर भरोसा है।'' माँ ने रोशनी से नजर हटाते हुए रीमा पर दृष्टि डाली। वह मंद-मंद मुसकरा रही थी।

अब उसकी कल्पना में मात्र एक ही पात्रा रह गई, जो अकसर यही पुकारती—

''मुझे वर चाहिए! मुझे वर चाहिए, मुझे वर चाहिए!''

आज मानो वह आकाश में विचरते पक्षियों के झुंड की कतारों में खुद को ढूँढ़ रही हो। जैसे क्षितिज का अपना कोई अस्तित्व नहीं होता, उसी प्रकार यह उड़ान भी उसे आज बहुत बनावटी लग रही थी।

कई दिनों के बाद आज फिर उसे अरेंज मैरिज के लिए तैयार किया जा रहा था।

असिस्टेंट प्रोफेसर (हिंदी विभाग)
सिख नेशनल कॉलेज बंगा,
जिला—शहीद भगत सिंह नगर (पंजाब)
दूरभाष : ९८८८२७७८१७

क्या कहेंगे आप?

कविता

● प्रेमशंकर भट्ट

प्रतीक्षा

एक लंबे अंतराल के बाद
परदेश से आनंद घर लौटा
सबसे मिलने का था मन में आनंद
पहुँचकर किया प्रणाम सभी को
बैठा ही था कि भाई ने पूछा, 'कितना कमाया?'
बोला नहीं कुछ, बस थोड़ा सा मुसकराया
तभी पिता ने पूछा, कमाया तो ठीक,
पर बचाया कितना?'
फिर भी आनंद बोला नहीं, बस मुसकराया
तभी दौड़कर बेटा आया
कूदकर गोदी में बैठा
और पूछा, 'मेरे लिए क्या लाए?'
ओसारा में खाट पर बैठी माँ,
हर्ष भरे आँसू थे आँखों में
और देख रही थीं,
फिर काँपती आवाज में बोलीं—
'कितना दुबला हो गया है,
परदेश में कुछ खाया की नहीं!'
आनंद देख रहा था माँ को
पर बोला नहीं, बस थोड़ा मुसकराया
और आँख की एक कोर पर आ गया आँसू
दृष्टि गई लो उधर दरवाजे की चौखट के अंदर
खड़ी थी वह लिये प्रतीक्षा आँखों में
आँसू से भीगी थीं आँखें और कपोल
उल्लास भरा था अंग-अंग में
हाथों में लिये गिलास पानी का
मर्मरी उँगलियों से पकड़कर गिलास
बहुत आहिस्ते से बोली—
'आए, पर बहुत देर से आए।'

हूक

मेरे पास सबकुछ है
पिता की दिलाई सुंदर पत्नी
और पत्नी से प्राप्त दो सुंदर बच्चे
पत्नी वह सब करती है
जो मैं कहता हूँ, नहीं कहता हूँ
अन्न-पानी और कभी-कभी दो शब्द
वह मेरे वस्त्र और उपवस्त्र भी धो देती है
और बच्चे दोनों ही गर्व करने के योग्य हैं
बेटी ने दी एक नातिन
बेटे ने रहने को मकान
घूमने को गाड़ी दी है
और दिया एक दौहित्री
और एक क्रेडिट कार्ड
क्या कहेंगे आप?
कौन होगा मुझसे ज्यादा सुखी
इन सब सुख के बीच
एक दु:ख आ बैठा है
सबकुछ है पर नहीं है
एक कंधा, जिसपर मैं अपना सिर
टिका सकूँ दो क्षण
नहीं है कोई ऐसा
जो बैठे सटकर और ले ले
मेरा हाथ अपने हाथ में
एक स्पर्श जो सबकुछ कह दे
चाहिए एक हूक, एक स्पर्श
शायद मेरी ही नहीं
आज के आदमी की, हर आदमी की
चाहत है बस इतनी!

जी-५०४ संगाथ सिल्वर, डी मार्ट के पीछे,
चाँदखेड़ा, विसत गांधी नगर रोड
अहमदाबाद-३८२४२४

श्री घोड़ीवाला का चुनाव अभियान

● पूरन सरमा

श्री घोड़ीवाला का विधायक का चुनाव हारने का घाव अभी पूरी तरह भरा भी नहीं था कि मैंने उन्हें नगरपालिका का चुनाव लड़ने की फूँक मारकर मैदान में खड़ा कर दिया। पहले तो घोड़ीवाला इस चुनाव के लिए तैयार ही नहीं हुए। उनका कहना था कि एक आदमी जो एम.एल.ए. का चुनाव हार चुका है, वह अब पंचायत और नगरपालिका का चुनाव लड़े, यह भयंकर तौहीन की बात है। पर मैंने उन्हें समझाया कि देखिए, आप अपना कॅरियर यहीं से शुरू कीजिए। आगे आपका राजनीतिक जीवन सफल और उज्ज्वल होगा।

मैंने उनसे कहा कि मुझे ही देखिए। पहले जब मैंने लिखना-पढ़ना शुरू ही किया था, बड़े-बड़े पत्रों में रचनाएँ भेजता था। सारी रचनाएँ संपादक सखेद, अभिवादन सहित लौटा देते थे। उस समय मुझे कम पीड़ा नहीं थी। एक बुजुर्ग ने मेरा दर्दे दिल जाना और राय दी कि लल्लू छोटे-छोटे साप्ताहिक, दैनिक पत्रों में लिखो-पढ़ो। रेडियो पर फरमाइश भेजो। सफलता आपके चरण चूमेगी। सच मानिए, वही सीख मैंने मानी। आज स्थिति यह है कि मैं सब जगह छपता हूँ। वे बुजुर्ग तो दिवंगत हो गए, लेकिन आज उनकी वह बात ज्यों-की-त्यों जीवित है। जानते हो, आज मैं कितना बड़ा लेखक हूँ!

मेरी यह बात सुनकर उन्होंने मुझे आँकना चाहा। लेकिन जिस सोदाहरण वार्त्ता से मैंने उन्हें बात समझाई और बताई, वह पूरी तरह उनके गले उतर गई तथा इस प्रकार वे चुनाव लड़ने को तैयार हो गए। श्री घोड़ीवाला का चुनाव हारने का इतिहास बताने से पूर्व उनका नाम घोड़ीवाला कैसे पड़ा, यह भी जान लेने में कोई बुराई नहीं है। श्री घोड़ीवाला पिछले चार आम चुनाव में खड़े होकर हारते रहे हैं। इन चुनावों में जो सबसे महत्त्वपूर्ण करतब वे दिखाते हैं, वह यह कि चुनाव प्रचार अपनी पिद्द घोड़ी पर चढ़कर करते हैं।

घोड़ी पर सवार होकर वे प्रत्येक घर के सामने जाकर अपने हाथ की चाबुक से मकान का दरवाजा बजाते हैं। उस आवाज से जो भी स्त्री-पुरुष उनके सामने उपस्थित होता है, वे उसे आदेश देते हैं कि अबकी बार वोट उनको ही देना है। सब लोग उन्हें वोट देने का पक्का वचन देते हैं। घोड़ी पर बैठे-बैठे ही वे लोगों से बातचीत करते हैं।

सुपरिचित व्यंग्यकार। अब तक चौदह व्यंग्य-संग्रह, एक उपन्यास 'समय का सच' एवं बाल साहित्य की करीब बीस पुस्तकों का प्रकाशन; 'कन्हैयालाल सहल पुरस्कार' के साथ-साथ अनेक संस्थाओं द्वारा पुरस्कृत-सम्मानित।

एक दिन मैंने उनसे पूछा भी कि यह तो बताइए, श्री घोड़ीवाला, कि आप घोड़ी पर बैठे-बैठे ही चुनाव प्रचार का काम क्यों निबटाते हैं। यह शिष्टता के खिलाफ है। इस पर उनका उत्तर था कि क्या मात्र ऐसा मैं ही करता हूँ? अपने एम.पी. साहब को नहीं देखे हैं, जब देखो कार में। चुनाव प्रचार कार में, लोगों से बातचीत कार में। इतना कहकर घोड़ीवाला अपना मुँह मेरे कान के पास लाकर बोले, 'सच! चुनाव जीतकर सत्ता में आ जाऊँगा तो मैं यह घोड़ी बेचकर कार खरीद लूँगा। इससे मुझे बहुत शर्म आती है।' उनकी यह बात सुनकर मुझे घोड़ी पर दया उमड़ आई। मैं बोला, 'श्री घोड़ीवाला सुनिए, आप कार जरूर खरीद लेना, लेकिन घोड़ी मत बेचना।'

'घोड़ी तो मैं हर हाल में बेच दूँगा। इस स्याली ने बहुत जलील किया है मुझे। कभी भी तो नहीं जिताया मुझे इसने। वह तो कार नहीं है मेरे पास, वरना मैं इसे सूँघता तक नहीं।' श्री घोड़ीवाला की वितृष्णा इतनी गहरी थी कि मेरे नयन उनके परास्त होने की बात पर सजल हो गए। मैंने उन्हें धीरज दिया और कहा, 'अबकी बार आप ही जीतेंगे, घोड़ीवाला।'

खैर, घोड़ीवाला चुनाव के दिनों में ऐसे हिनहिनाते फिरे, जैसे गाय ऋतुकाल में रँभाती है। परीक्षाफल निकला तो घोड़ीवाला गिरते-गिरते बचे। वह तो अच्छा हुआ कि वे इस समय घोड़ी पर बैठे थे। मैं दुखी मन से घोड़ीवाला के पास हिम्मत करके पहुँचा और घोड़ी की लगाम पकड़ उनके घर की ओर मोड़ते हुए बोला, 'चलो घोड़ीवाला, तुम्हारे नसीब में सत्ता की घोड़ी नहीं है।'

मेरी बात सुनकर घोड़ीवाला ने हाथ का चाबुक हवा में लहराया। मैं डर गया। मुझे लगा, जैसे सनसनाता चाबुक मेरी कनपटियों पर पड़ेगा

और मैं वहीं ढेर हो जाऊँगा। पर घोड़ीवाला का चाबुक घोड़ी पर ही पड़ा और घोड़ी रेंकने लगी। थोड़ी देर के मौन के बाद घोड़ीवाला बोले, 'मैंने तुमसे कहा नहीं था, जादूगर। यह घोड़ी मुझे कभी नहीं जीतने देगी। मालूम है, मेरे विरोधी के पास कार थी!' यह कहकर घोड़ीवाला ने पाँच-सात चाबुक गुस्से में घोड़ी पर मार दिए। घोड़ीवाला को उनके घर में धकेलकर मैं अपने घर लौट आया। मुझे याद आया कि अपनी पहचान वाले प्रेस से मैंने उनके पोस्टर छपवाए थे। उसका पेमेंट अभी तक नहीं हुआ है। माइकवाला भी पैसा लेगा।

मुझे सारी रात नींद नहीं आई। लग रहा था कि प्रेस तथा माइकवाला पैसा माँगकर मेरा जीना दूभर कर देगा। सुबह जल्दी उठकर सीधा घोड़ीवाला के मकान पर पहुँचा। उस समय घोड़ीवाला पिछवाड़े में खड़ा घोड़ी से ही बातें कर रहा था। चुनाव में हारने का सारा दोष वह उसके सिर मढ़ रहा था। बेचारी घोड़ी निरुत्तर खड़ी उसकी बातें सुन रही थी। उसके हाथ में चाबुक था। बीच-बीच में वह घोड़ी पर चाबुक इतनी जोर से मारता था कि मरियल घोड़ी कब दम तोड़ देगी, कहना मुश्किल था। मैंने छूटते ही कहा, 'श्री घोड़ीवाला, आप घोड़ी कब बेच रहे हैं?'

'अजी, ऐसी घोड़ी को बेचने से क्या? जो घोड़ी मुझे निहाल नहीं कर सकी, यह भला और किसे निहाल करेगी?' घोड़ीवाला दु:खी स्वर में बोला। 'मेरे विचार से अब घोड़ी को बेचकर प्रेसवाले और माइकवाले का हिसाब चुकता कर लेना चाहिए।'

मेरी यह बात सुनकर घोड़ीवाला लपककर घोड़ी पर जा चढ़ा। लगाम पकड़ते हुए बोला, 'अभी कैसा हिसाब-किताब! अभी तो मैं इस पर चढ़कर एक चुनाव और लड़ूँगा।' इतना कहकर उसने चाबुक घोड़ी की पीठ पर जमाया और सरपट बाहर दौड़ने लगा। मैंने रोकना चाहा तो मुझे चाबुक दिखाकर चुप रहने को कहा।

मैंने उसी दिन अगले चुनाव में घोड़ीवाला का प्रचार व समर्थन न करने की कसम खाई। लेकिन आज भी मेरी सहानुभूति घोड़ी के प्रति ज्यों-की-त्यों है। पता नहीं बेचारी घोड़ी को इस राजनीति से कब मुक्ति मिलेगी?

साअ

१२४/६१-६२, अग्रवाल फार्म,
मानसरोवर, जयपुर-३०२०२०
(राजस्थान)
दूरभाष : ०९८२८०२४५००

समय की कर लें प्रतीक्षा

कविता

• इंदिरा मोहन

द्वार सारे खोलना है

बहस लंबी हो गई है
हल नहीं कुछ मिल रहा है,
व्यर्थ अब कुछ बोलना है
स्वयं को ही तौलता है।

घोंसलों से उड़ रही हैं
मूक-मैना-सकपकाए,
अहं ने तोड़ी सदा ही
सत्य की संस्थापनाएँ।

प्यास कुरसी की बढ़ी है
अब नहीं कुछ तोड़ना है,
सूत्र को ही जोड़ना है।

शब्द का उत्पात अब तक
योग की भाषा न समझा,
एक धागे में पिरोए
पुष्प की आशा न समझा।

बीज-मंगल बो दिए हैं
भूमि को बस गोड़ना है,
सृजन को ही मोड़ना है।

वेदना-सद्भाव चाहे
रेशमी डोरी है ऐंठी,
समय की कर लें प्रतीक्षा
खिड़कियों पर गंध बैठी।

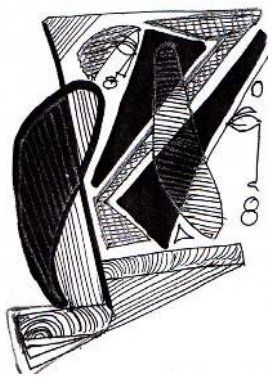

सहज हों संबंध सारे
उग्रता को टोकना है,
हिंस्र-पथ को रोकना है।

गूँज अंबर तक पहुँचकर
तृप्ति को संवाद देगी,
शमित होगी वर्जनाएँ,
प्रीति को उल्लास देगी।

प्रहर थककर सो गए हैं
सत्य को ही खोजना है,
द्वार सारे खोलना है।

दिवस देता आश्वासन

अंतहीन क्षितिजों की आभा
खोल रही है दरवाजे,
दिवस दे रहा है आश्वासन
खुशियों की बस्ती जागे।

सीढ़ी-सीढ़ी चढ़ना ऊपर
खुली हवा छत पर चलती,
सही व्यवस्थाएँ हैं करनी
खिड़की को आँधी छलती।

'दादा' के अनुभव अनगिन हैं
पीढ़ी लिखती पृष्ठ कई,
मौसम एक नहीं रहता है
फागुन हो या मास मई।

ताने-बाने बुने समझकर
दृढ़ संकल्पों के धागे।

विविध मुखी छवियाँ बौराईं
दूर-दूर ठहराव नहीं,
प्रचुर उदार हुए संसाधन
मंजिल में भटकाव नहीं।

बाट जोहती सुख की घड़ियाँ
सारी कड़ियाँ जुड़ें सहज,
रेखाएँ अभाव की पोंछें
पते-ठिकाने मिले सहज।

चहल-पहल इतनी हो घर-घर
रामू छोड़ नहीं भागे।

साअ

६०९ बी मैगनोलिया
डी.एल.एफ. फेज-५
गुरुग्राम-१२२००९
दूरभाष : ०९८११५०४३६४

ककड़ी प्रदेश में शिशु-जन्म

मूल : **बोरिस गरबातोव**

अनुवाद : **सुशीला गुप्ता**

ककड़ी प्रदेश में एक मुसीबत आ खड़ी हुई। ककड़ी प्रदेश आर्कटिक सागर में स्थित एक दूरवर्ती सुनसान उपद्वीप है। इस उपद्वीप की खोज कुछ ही दिनों पूर्व हुई है। खोजी दल के प्रमुख में नव अन्वेषित उपद्वीप का सर्वेक्षण करते हुए अपनी रिपोर्ट में लिखा कि यह उपद्वीप ककड़ी की आकृति का है। बस बेतार-चालकों ने आर्कटिक द्वीप-समूह के इस नए उपद्वीप का नाम 'ककड़ी प्रदेश' रख दिया।

ककड़ी प्रदेश धीरे-धीरे बसाया जाने लगा। उसकी अछूती भूमि पर मानव पद-चिह्नों की आकृतियाँ उभरने लगीं। मकान बनाए जाने लगे। बर्फ के टीलों पर जिंदगी प्रारंभ हुई। वहाँ के लोगों का दैनिक जीवन व्यवस्थित होने लगा। वे अपने ताँबे के बरतनों में कॉफी बनाते, खुशियाँ बटोरते, शाम को मनोरंजन के नाम पर शतरंज खेलते, पर इस समय वे मुसीबत में थे। बात यह थी कि एक औरत बड़ी ही मर्मभेदी आवाज में चीख रही थी और एक उदास मोटा आदमी उसके समीप खड़ा था। उसके हाथ बुरी तरह काँप रहे थे और उसके माथे पर पसीने की बड़ी-बड़ी बूँदें झलक रही थीं।

आम लोगों की यह धारणा कि सोवियत क्षेत्र के निवासी अपने निकट के प्रतिवासियों से अनभिज्ञ दूरवर्ती प्रायद्वीपों में अलग-थलग रहते हैं, निराधार है। यह सच है कि एक प्रायद्वीप से दूसरे प्रायद्वीप की दूरी कहीं-कहीं हजारों किलोमीटर है, लेकिन वहाँ बेतार चालक है। गनीमत है कि संपूर्ण ध्रुवीय क्षेत्र इस बात से अवगत था कि दूरवर्ती ककड़ी प्रदेश में प्रसव-पीड़ा से विह्वल एक स्त्री नए नागरिक को जन्म दे रही है। समस्त आर्कटिक निवासी साँस रोके नवजात शिशु के आगमन की प्रतीक्षा कर रहे थे।

सभी ध्रुवीय स्टेशनों से लोगों की जिज्ञासा जारी थी—'प्रसूता कैसी है? अब कैसी है वह? उसकी हालत ठीक तो है? बच तो जाएगी न?'

लेकिन प्रसूता चीख रही थी, उसकी चीख समस्त आर्कटिक क्षेत्र में सुनी जा सकती थी। उसका पति बुरी तरह रो रहा था और डॉक्टर परेशान था। वह बेचारा प्रसूति-विशेषज्ञ नहीं था और मरीज की हालत चिंताजनक थी।

उस दिन रेडियो-केंद्र पर ककड़ी प्रदेश से एक निराशाजनक संदेश प्राप्त हुआ, जो प्रसूता के पति ने प्रसारित किया, ''सहायता कीजिए! सहायता कीजिए! माता और शिशु की जीवन-रक्षा कीजिए!''

बेतार-संचालक घबराया। उसने अपना ईयरफोन निकालकर रखा और सीधे अपने उच्चाधिकारी के पास जाकर सूचना दी—''देखिए न! एक औरत···एक बच्चा··· ।''

उच्चाधिकारी और पार्टी-सचिव चिंतित हो उठे कि प्रसूता की सहायता कैसे की जाए? ध्रुवीय क्षेत्र की जाड़े की रात थी। वहाँ तक किसी भी हालत में पहुँचना असंभव था। पार्टी-सचिव अस्पताल में डॉक्टर सिरगियेव मातवियेइच के पास गए।

मातवियेइच एक साधारण डॉक्टर थे, जिनके शरीर से सदैव कारबोलिक और दवाइयों की बू आती थी। दरअसल वे शोध-डॉक्टर थे। उनकी खासियत यह थी कि वे स्वार्थी नहीं थे। उनके मरीज, मरीजों का दु:ख-दर्द और उनका अस्पताल ही उनकी दुनिया थी। इसी कारण वे आर्कटिक उपद्वीप में किसी शोधकार्य के लिए समय नहीं निकाल पाते थे।

एक चुंबकशास्त्री, जिसका नाम भोदोरोव था, एक दिन डॉक्टर मातवियेइच के पास आया और मुसकराते हुए उसने कहा, ''मैं आपको समझता हूँ तथा हम ध्रुवीय प्रदेश के वासियों के प्रति आपके रुख को भी। आप हमें बेशक 'गिनी-पिग' समझिए। आप हमारा अध्ययन करेंगे, ठीक है न? आपातकाल में हमारी नब्ज टटोलेंगे, हमारे हृदय की धड़कन सुनेंगे और तब एक वैज्ञानिक प्रपत्र तैयार करेंगे। क्या ऐसा नहीं है? मुझे खुशी है डॉक्टर, कि मैं आपके लिए एक गिनी-पिग हूँ?''

डॉक्टर ने उसकी ओर भयभीत दृष्टि से देखा। वे विचलित हुए और कहा कि हाँ, इस तरह का कुछ इरादा तो है मेरा, लेकिन उन्होंने इतनी अनिश्चितता दिखाई कि कालांतर में किसी ने भी उनसे उनके

वैज्ञानिक प्रपत्र के बारे में नहीं पूछा। ऐसा लगा कि वे केवल एक ही उद्देश्य से यहाँ आए हैं और वह उद्देश्य है—बीमार लोगों का इलाज करना, औरतों की प्रसूति कराना, दाँत निकालना और अपेंडिक्स की शल्य-क्रिया करना। इस कार्य के लिए वहाँ के निवासियों ने एक छोटा सा पाँच बिस्तर वाला अस्पताल बनवा दिया।

एक बार चुंबकशास्त्री ने डॉक्टर से पूछा, ''आप आर्कटिक क्यों आए?'' उन्होंने कहा, ''लोग आर्कटिक के बारे में बात करते थे। मैंने सोचा, मैं क्यों न वहाँ जाऊँ? यहाँ पैसा भी अच्छा है। दो शीतऋतु यहाँ बिता लूँ तो अच्छा पैसा जमा हो जाएगा। मैं सोचता हूँ कि मॉस्को में एक मकान खरीदूँगा, उसमें एक बगीचा होगा, एक झूला होगा, फूलों की क्यारी होगी। मुझे जलकुंभी का बड़ा शौक है और खिड़कियों के नीचे फलोद्यान भी।

लोग सोचने लगे कि डॉक्टर नीरस और उबाऊ है, लेकिन उस क्षेत्र में और कोई डॉक्टर नहीं था, जो ककड़ी प्रदेश में प्रसूता की सहायता कर सकता था।

पार्टी-सचिव अस्पताल में डॉक्टर मालवियेइच के पास गए और प्रसूता की हालत कह सुनाई। उन्होंने सारी बातें ध्यान से सुनीं। फिर उन्होंने कहा, ''आप कहते हैं कि मैं प्रसूता की सहायता करूँ। आप मरीज को यहाँ ले आइए। मैं उस औरत की प्रसूति कैसे करवा सकता हूँ, जो एक तरह से आकाश में है।''

''हमें उसकी सहायता करनी ही होगी।''

''ओह! आश्चर्य है।'' डॉक्टर को हँसी आ गई, ''आप मुझे एक हजार किलोमीटर लंबा हाथ दीजिए, जिससे मैं..., मुझे ऐसी दूरबीनी आँखें दीजिए, जिससे मैं हजार किलोमीटर दूर देख सकूँ। फिर मैं तैयार हूँ।''

''डॉक्टर! हम आपको ऐसे हाथ और ऐसी आँखें देंगे।''

''मैं समझा नहीं। कैसे हाथ? कैसी आँखें?''

''बेतार के तार। आपको प्रसूता और गर्भस्थ शिशु की हालत बताई जाएगी और आप निर्देश देंगे।''

डॉक्टर मालवियेइच पार्टी सचिव की बातें सुनकर स्तब्ध रह गए। वे बोले, ''क्या सचमुच आप ऐसा कह रहे हैं?''

''जी हाँ! और कोई उपाय नहीं है।''

सिरगियेव मालवियेइच उठे। उन्होंने अपना कोट पहना और सधे हुए कदमों से आगे बढ़े।

''आइए, मरीज के पास चलें।'' तभी वे रुके...कोट की क्या आवश्यकता! कोई बात नहीं। दुनिया में ऐसी विचित्र बातें भी होती हैं। इतनी दूरी से प्रसूति कराने का मेरा यह पहला अनुभव होगा...बेतार-संदेश द्वारा प्रसूति! मेरे साथियों को इससे कितना आश्चर्य होगा, इसकी मैं कल्पना कर सकता हूँ...''कोई बात नहीं। आइए चलें।''

ककड़ी प्रदेश से संपर्क स्थापित किया गया। बेतार-संचालक ने सभी ध्रुवीय स्टेशनों को सूचित किया कि जब तक शिशु का जन्म नहीं हो जाता, बेतार-यंत्र का संपर्क केवल ककड़ी प्रदेश से ही रहेगा। उस समय तक अन्य स्टेशनों के साथ संचार-व्यवस्था बंद रहेगी।

डॉक्टर ने तैयारी शुरू की। वे पूछने ही जा रहे थे, ''अच्छा अब कैसी हो?'' तभी ध्यान आया कि वास्तव में उनके सामने कोई मरीज है ही नहीं...है केवल शून्य!

निस्संदेह वे बेचैन थे। उनके सामने वह वातावरण नहीं था, जिसमें वे काम करने के अभ्यस्त थे। सामने प्रसूता का होना, उसकी कराह सुनना, उसका घिघियाना, उसकी पीड़ा में सहानुभूति व्यक्त करना, बेसिन में खून देखना, गर्भस्थ शिशु को टटोलना और बच्चे का नन्हा-चिकना शरीर।

वहाँ ऐसा कुछ भी नहीं था। रेडियो स्टेशन पर वे समुद्र-किनारे पड़े हुए श्वेत ह्वेल की भाँति थे। लैंप जल रहे थे, जिनसे पर्याप्त प्रकाश फैल रहा था। लाउडस्पीकर में चरचराहट होती और फिर निस्तब्धता! कोई मरीज नहीं, कोई चीत्कार नहीं, कोई छटपटाहट नहीं।

वहाँ कोई छटपटाहट नहीं थी, लेकिन प्रसूता वहाँ से दूर छटपटा रही थी और मदद के लिए इंतजार कर रही थी। क्या और लोग इंतजार कर रहे थे। ''अच्छा डॉक्टर सिरगियेव मालवियेइच, अब आगे?''

वे बेतार-चालक की ओर झुके और उन्होंने कहा—डॉक्टर से पूछा कि गर्भस्थ शिशु किस दशा में है।

कुछ ही मिनटों में उत्तर आया। सिरगियेव मातवियेइच ने उसे पढ़ा। गर्भस्थ शिशु टेढ़ा है। उनकी भौंहें टेढ़ी हुईं। ओफ! उन्होंने बेतार चालक से कहा, ''मेरे साथी से पूछो कि क्या वह 'ब्रॉक्स्टन हिक्स' तरीके से गर्भस्थ शिशु को सीधा करने का तरीका जानता है?''

उत्तर आया, ''केवल सुना भर है, लेकिन मेरे सामने सशरीर उपस्थित न होने पर भी कृपया मुझे आवश्यक निर्देश दीजिए।''

''अपने हाथ अल्कोहल और आयोडीन से अच्छी तरह साफ कर लो।''

ककड़ी प्रदेश के डॉक्टर ने सूचित किया कि उसने अपने हाथ साफ कर लिये।

डॉक्टर ने संतोषपूर्वक अपना सिर हिलाया, ''बहुत अच्छा।'' उन्होंने बेतार-चालक को कागज पर विस्तृत निर्देश लिखकर दिए। बेतार-चालक स्थिति की गंभीरता को अच्छी तरह समझता था। उसने सारी बातें शब्दशः प्रसारित कीं।

डॉक्टर ने कहा, ''अब अंदरूनी जाँच करो!''

निर्णायक घड़ी आ रही थी।

डॉक्टर को चिंता हुई, यदि कोई गड़बड़ी हुई तो...!''भले आदमी, जो कुछ मैं देख नहीं सकता, उसकी जिम्मेदारी कैसे ले सकता हूँ?'' कहते हुए वे खिड़की के निकट आए और बाहर सड़क की ओर देखने लगे, जहाँ केवल बर्फ थी, दूर-दूर तक बर्फ के अलावा कुछ भी दिखाई नहीं दे रहा था।

ककड़ी प्रदेश से सूचना आई। डॉक्टर ने पढ़ा, वे मुसकराए। ''अच्छा मेरे प्यारे! अब 'ब्रॉक्स्टन हिक्स' तरीके से गर्भस्थ शिशु को सीधा करेंगे।''

डॉक्टर बेतार-यंत्र के पास गए। किसी ने फुरती से उनके सामने कुरसी खिसका दी। सब लोग समझ गए कि निर्णायक क्षण आ गया है। बेतार-चालक घबराया हुआ था। सभी डॉक्टर की ओर उम्मीद भरी नजरों से देख रहे थे। डॉक्टर के मन में बिजली सी कौंधी, ''मुझे यह साहस कहाँ से मिला। मैं यहाँ से आदेश दे रहा हूँ और वह वहाँ उसका पालन कर रहा है'''संभवत: सब ठीक हो जाएगा।''

उन्होंने अगला आदेश कागज पर लिखकर दिया, जो प्रसारित हुआ। वातावरण में खट्'''खट्'''खट्'''खट्खट'''की आवाज गूँजती रही। डॉक्टर अपने आसपास की सभी वस्तुओं से बेखबर बहुत दूर पहुँच गए थे। उन्होंने स्पष्ट देखा, प्रसूता उनके सामने है। उसकी चीख उनके कानों से टकराई, नहीं-नहीं वे हार नहीं मानेंगे'''सहसा उन्होंने महसूस किया कि मासूम शिशु का पैर उनकी उँगलियों में आया'''!

वे चिल्लाए, ''ध्यान रहे, गलती न होने पाए, हाथ को पैर मत समझ लेना, एड़ी देखो, एड़ी, नहीं तो तुम हाथ पकड़ लोगे'''ऐसा अकसर हो जाता है।''

डॉक्टर मातवियेइच के पास संदेश पहुँचा, ''पैर मिल गया।''

''आहा! पैर उसकी पकड़ में आ गया, शाबाश!''

कमरे में खुशी की लहर दौड़ गई। सभी एक-दूसरे को बधाई देने को तत्पर, लेकिन डॉक्टर का चेहरा आतंकित था। सब चुप हो गए। सन्नाटा छा गया।

''बहुत खूब। अब पैर को घुमा दो और अपने हाथ से बाहर की ओर'''।''

डॉक्टर मातवियेइच की नजरों के सामने की दूरी एकदम मिट गई थी। वे प्रसूता के पलंग के पास खड़े थे और उनका सहयोगी उनके निर्देश का पालन कर रहा था।

कुछ ही मिनट बीते थे, परंतु वह समय बड़ा लंबा प्रतीत हुआ।

डॉक्टर बेतार-यंत्र की ओर एकटक देख रहे थे, मानो उन्हें उत्तर सुनाई देगा। शीघ्र ही उन्होंने खट्'''खट्'''खट् की ध्वनि सुनी, जो उनके लिए ग्रीक तुल्य थी। बेतार-चालक ने संदेश लिखा—''अच्छी तरह सीधा कर लिया?''

''अच्छी तरह सीधा कर लिया।'' संचालक चिल्ला उठा।

'अच्छी तरह'''अच्छी तरह' की एक तरंग सी फैल गई। डॉक्टर मातवियेइच ने कमाल कर दिया।

डॉक्टर गुस्से से चिल्लाए, ''चुप।'' उन्होंने बेतार-चालक की ओर देखते हुए कहा, ''शिशु के दिल की धड़कन सुनो।'' उसने खट्-खट् की ध्वनि के मार्फत संदेश भेजा। कमरे में बैठे सभी लोगों को डॉक्टर ने बताया कि अभी शिशु ने जन्म नहीं लिया है। सब लोग फिर शांत हो गए।

बेतार-चालक को बोलते हुए उन्होंने सुना, ''दिल की धड़कन स्पष्ट सुनाई दे रही है।'' नहीं, ये चालक के शब्द नहीं थे। डॉक्टर मातवियेइच ने स्वयं गर्भस्थ शिशु के हृदय की धड़कन सुनी। वह एक हृदय था, जो धरती पर आने से पहले धड़क रहा था। अभी एक इनसान प्रकट होगा, जो चीख-चीखकर अपने अधिकारों का ऐलान करेगा। उसका हृदय होगा कैसा? उसका हृदय होगा एक ऐसे इनसान का, जो अपनी पितृभूमि के प्रति समर्पित होगा। वह कृतज्ञ होगा बेतार-चालकों के प्रति, पार्टी सचिव के प्रति, अपने डॉक्टर के प्रति और डॉक्टर मातवियेइच के प्रति। डॉक्टर को हँसी आई, परंतु वह हँसी विजय की नहीं थी, गर्व की नहीं थी, संतोष की भी नहीं थी! वह ऐसी हँसी थी, जिसे वे स्वयं भी नहीं समझ सके।

प्रसूता की पीड़ा सहनशक्ति पार कर रही थी। बेतार-संदेश जल्दी-जल्दी आने लगे। डॉक्टर मातवियेइच लगातार तीन घंटे तक बेतार-यंत्र के पास बैठे रहे। उन्हें लगा कि वे बुरी तरह थक गए हैं। क्या यह असाधारण प्रसूति-प्रक्रिया पूरी भी होगी!

और अचानक उन्होंने संचालक को खुशी से चिल्लाते हुए सुना, ''बेटा हुआ! बेटा हुआ! अरे देखा, बेटा हुआ! उसने सूचना डॉक्टर मातवियेइच के हाथ में पकड़ा दी। नवजात शिशु के पिता का संदेश था, ''प्यारे डॉक्टर, साथियो और मेरे मित्रो! मेरे बेटा पैदा हुआ, बेटा! बहुत-बहुत शुक्रिया सिरगियेव मातवियेइच! शुक्रिया! मेरे परम प्यारे दोस्त, मैं किन शब्दों में आपका शुक्रिया अदा करूँ!''

डॉक्टर मातवियेइच की ओर अनेक हाथ बढ़े। मैत्रीपूर्ण हाथ'''उन्होंने बधाई दी, धन्यवाद दिए। पार्टी सचिव ने बहुत देत तक डॉक्टर से हाथ मिलाया और वे बार-बार दुहराते रहे, ''आह मातवियेइच! आप कितने महान् हैं, कितने चमत्कारी! बधाई! बधाई! बधाई!

और डॉक्टर मातवियेइच बैठ गए—थके-हारे संज्ञाशून्य। इतनी सारी बधाइयों की बौछार से अस्थिर हो उठे, किंकर्तव्यविमूढ़।

और सहसा उनके सामने एक नई रोशनी चमक उठी, जिसके उजाले में वे देख रहे थे अपनी जिंदगी, अपने विद्यार्थी जीवन के सुहाने सपने, अपना अतीत, अपना वर्तमान, अपना भविष्य।

और वे सोच रहे थे कि क्या वे वही व्यक्ति हैं, जो कल शाम तक अपने भावी जीवन के सपने बुना करते थे कि वे मॉस्को में एक सुंदर सा मकान बनवाएँगे और शांति से उनका बुढ़ापा कटेगा।

साअ

३/१४९ नवयुग नगर
फोरजेट हिल रोड
मुंबई-४०००३६
दूरभाष : ९८७०७६३८७८

उधार

● लवलेश दत्त

''ड्रा इंग रूम में कौन है?''

''अ···अक्षतजी हैं!''

''ओह, तुम्हारे बेस्ट फ्रेंड···आज फिर···।''

''हाँ, तो क्या हुआ?''

''होगा क्या, कुछ नहीं।'' संदीप के स्वर में चिड़चिड़ाहट थी, ''कब से बैठे हैं?''

''अ···अभी दस मिनट पहले ही आए हैं।'' पूजा ने कुछ रुकते हुए कहा।

''और दस मिनट में चाय-नाश्ता भी हो गया।'' संदीप खीझ उठा, ''तुम कितना झूठ बोलती हो? सीधे से क्यों नहीं बताती कि दो-तीन घंटे से बैठे हैं।''

''हाँ, बैठे हैं, पर आप···अच्छा छोड़िए, चाय लाती हूँ, तब तक आप उनके पास···'' कहते हुए पूजा रसोई की तरफ मुड़ी।

''जी नहीं, मुझे कोई इंट्रेस्ट नहीं, मैं थका हुआ हूँ, आप उन्हें ही चाय पिलाएँ और उनसे बातें करें।'' संदीप अपने कपड़े बदलते हुए बोला।

''प्लीज, आप ऐसे मत बोलिए, अभी चले जाएँगे वे।'' पूजा ने संदीप का हाथ पकड़ लिया।

''लीव मी!'' वह हाथ छुड़ाकर बोला। ''पता है, चले जाएँगे, पिछली बार रात के बारह बजे गए थे, वह भी जब मैंने···खैर, छोड़ो।''

''वे बहुत परेशान हैं, बहुत सारी प्रॉब्लम्स से घिरे हैं, ऐसे में अगर···'' पूजा ने कहा।

''यार प्लीज, तुम उनकी वकालत मत करो, आई डोंट लाइक कि वे रोज-रोज यहाँ आएँ।'' पलंग पर लेटते हुए उसने कहा, ''और प्रॉब्लम्स किसकी लाइफ में नहीं होतीं, तो क्या औरों के घर डेरा जमाया जाता है! अजीब आदमी है, शादी के पहले से लेकर अभी तक चैन नहीं है।''

''देखिए, आप बात को कहीं और ले जा रहे हैं। आपको पता है कि शादी के पहले से ही उनका हमारे घर आना-जाना था। मैंने तो आपको सब बता दिया था। तब तो आपने कुछ नहीं कहा, फिर अब क्यों आप ऐसी बातें···'' पूजा ने पास बैठते हुए कहा।

''व्हाट नॉनसेंस···शादी से पहले तुम्हारा उनके साथ कुछ भी रहा हो, मुझे मतलब नहीं था। इसलिए मैंने तुमसे कुछ नहीं कहा, लेकिन अब तुम मेरी पत्नी हो, तुम पर मेरा पूरा अधिकार है। तुम ही बताओ कि कौन पति चाहेगा कि उसकी पत्नी का पुराना आशिक···'' संदीप अपनी बात पूरी नहीं कह पाया।

सुपरिचित कवि-कहानीकार। अब तक 'भावत्रयी', 'तमन्ना', 'सपना', 'श्यामा' (कहानी-संग्रह) तथा विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में रचनाएँ प्रकाशित। आकाशवाणी रामपुर से कहानी वाचन एवं प्रसारण। लखनऊ में 'बोल्ट अवार्ड', 'विद्यासागर सम्मान', 'साहित्यश्री सम्मान'।

''क्या है, सोच-समझकर बोलिए! वे मेरे फ्रेंड हैं बस!'' पूजा ने बीच में ही टोक दिया।

''इसका मतलब यह नहीं कि वे रोज-रोज यहाँ आएँ और हमारी मैरिड लाइफ को डिस्टर्ब करें।'' संदीप ने थोड़ा जोर से कहा।

''प्लीज धीरे बोलिए, वे सुन लेंगे।'' पूजा गिड़गिड़ाते हुए बोली।

''सुन लेंगे तो सुन लें, कुछ तो शर्म आए उन्हें भी। यह तरीका है क्या किसी शरीफ आदमी का कि घर में अकेली औरत के पास रोज आए, चार लोग बातें बनाना शुरू कर देंगे तो···'' संदीप का स्वर तीव्र हो चुका था, ''हर दिन का यही ड्रामा है—कभी बीमारी का बहाना, कभी परेशानी का तो कभी कुछ और, हद हो गई है। मेरा घर न हुआ···क्या हमने उससे कोई उधार लिया है, जो तकादा करने के लिए रोज चला आता है या उसने हमपर कोई एहसान कर दिया है।''

''चुप रहिए, फालतू की बातें मत कीजिए! मैं कह दूँगी उनसे कि रोज-रोज न आया करें। बस खुश!'' पूजा ने भी खीझते हुए कहा।

वह कहना तो बहुत कुछ चाहती थी, लेकिन वे सारी बातें उसके मन में ही रह गईं। वह कहना चाहती थी कि आज पापा के जिस बिजनेस को तुम चला रहे हो, उसके लिए उन्हीं ने पापा को पैसे दिए थे। वह कहना चाहती थी कि मेरी जिंदगी, मेरा प्यार और मेरे सपने, जो आज तुम्हारे घर को रोशन कर रहे हैं, उन्हीं ने सँवारे हैं। वह कहना चाहती थी कि उन्होंने मुझसे प्यार माँगा था, कुछ दिन का साथ माँगा था, वह भी उधार में। और उस उधार को उन्होंने ऐसा चुकाया कि मेरे सपनों को हकीकत में बदलने के लिए अपने सपनों को किरच-किरच कर डाला। मेरी खुशियों के लिए अपनी खुशियों की चिता अपने हाथों से जलाई। मेरी जिंदगी में आनेवाले दर्द को अपनी छाती में हँसते-हँसते हमेशा के लिए बसा लिया। मेरी अच्छी सेहत के लिए अपनी सेहत को इतना खराब कर लिया कि आज वे मौत के मुहाने पर खड़े हैं। वे जिंदा हैं तो बस इसलिए कि उन्हें लगता है कि एक-न-एक दिन मैं उनसे

कहूँगी कि मैं तुम्हें प्यार करती हूँ अक्षत···।''

वह कहना चाहती थी कि आज तुम जिस आदमी को बुरा-भला बक रहे हो। उसने अपने उधार को चुकाने में हम पर कितना उधार चढ़ा दिया। उसका उधार तो क्या, ब्याज भी हम नहीं चुका पाएँगे। लेकिन वह कुछ न कह पाई, बस चुप होकर रह गई।

''क्यों···कह दोगी? फिर तुम्हारा मन कैसे लगेगा? बुला लिया करो अपने आशिक···'' संदीप ने फिर बात अधूरी छोड़ दी।

''यह क्या आशिक-आशिक लगा रखा है आपने? उनका कुछ नाम भी है···और वे कोई ड्रामा नहीं करते, सचमुच बीमार और परेशान हैं!'' पूजा ने कहा।

''तो तुम उनकी बीमारी और परेशानी दूर कर दो, फिर एक दिन···चाहो तो आज रात ही···मैं चला जाऊँ घर से?'' संदीप गुस्से में था।

''दिमाग खराब हो गया है आपका। सिर्फ बात कर लेती हूँ उनसे और आप हैं कि···'' पूजा रुआँसी हो गई। उसका मन बुरी तरह पिघलने लगा। वह सोचने लगी कि समय और इनसान कैसे बदल जाता है? शादी से पहले संदीप ने मेरे और अक्षत के रिश्ते को सबकुछ जानते हुए भी कभी मना नहीं किया। हमेशा कहा कि मुझे तुम दोनों के रिश्ते से कोई प्रॉब्लम नहीं है। तुम अपनी दोस्ती शादी के बाद भी रख सकती हो, वह आज इतना कैसे बदल सकता है? मुझे उनके साथ जाने-घूमने की आजादी दी। और आज···।

''हाँ, दिमाग खराब हो गया है मेरा, मुझे नहीं पसंद उसका आना। आई जस्ट हेट हिम···'' संदीप ने गुस्से में आकर जोर से कहा, ''एक तो वैसे ही बिजनेस में घाटा हो रहा है। दुकान में नया माल लगाना है और उसे खरीदने के लिए पैसे नहीं हैं···कंपनी को भी पूरा पैसा एडवांस चाहिए, तब माल भेजेगी। जेब में फूटी कौड़ी नहीं है और ऊपर से यह आदमी रोज आकर यहाँ मनहूसियत फैलाता है।''

अब पूजा को संदीप की खिसियाहट का अंदाजा होने लगा था, ''तो अपनी दुकान की झल्लाहट आप उन पर क्यों उतार रहे हैं? उन्होंने कौन सी मनहूसियत फैलाई।'' पूजा की आँखें डबडबा रही थीं, ''वे तो कुछ भी नहीं कहते।''

''जस्ट शटअप···बहुत फेवर ले रही हो उसका, ऐसी क्या घुट्टी पिलाई उसने? कभी-कभी तो मुझे शक होता है कि तुम दोनों में रिलेशन···''

''चुप रहिए···आप···प्लीज···'' कहकर वह रोने लगी और संदीप की बात को मन-ही-मन पूरा भी करने लगी, ''हाँ, है रिलेशन हम दोनों में। सच तो यह है संदीप, कि उनके स्पर्श से मेरा तन ही नहीं मन भी सोना बन गया। आज जिस जिस्म को अपनी बाँहों में भरकर तुम सोने जैसा कहते हो, उसे बार-बार चूमते हो, उसे निहारते हुए नहीं थकते। वह उसी पारस पत्थर की देन है, जिसके छूने से मेरा रोम-रोम सोने का हो गया। मुझे आज भी वह रात याद है, जब उसने मुझसे मेरे प्यार की एक रात अपने लिए उधार माँगी थी। और उस उधार की रात उसने मुझे अपना कर्जदार बना लिया। मैंने उनकी प्यास बुझाई, मुझे नहीं मालूम, लेकिन मेरे जन्म-जन्मांतर की प्यास बुझानेवाला बादल वही है। संदीप, यह सच है कि मैं तुम्हारे लिए अपना प्यार समर्पित करना चाहती थी। इसलिए उनके प्यार को स्वीकार तो किया, लेकिन उसका जवाब कभी नहीं दिया। मैंने उनसे कभी नहीं कहा, लेकिन मैं जानती हूँ कि मैं उनसे प्यार करती हूँ। संदीप, मैं अपना सबकुछ तुम्हारे ही चरणों में अर्पित करने का प्रण लिये बैठी थी। और वो···उन्होंने कोई प्रण नहीं लिया। उन्होंने तो खुद को मेरे चरणों में अर्पित कर दिया। अब तुम्हीं बताओ संदीप, कैसे मैं उन्हें ठोकर मार देती? वे मेरे चरणों में नतमस्तक थे। अपने प्रेम के जल से मेरा अभिषेक करना चाह रहे थे। मेरी आराधना करना चाह रहे थे, तो क्या मुझे उन्हें गले नहीं लगाना चाहिए था। मुझे अपनी पूजा करवाने का लालच नहीं था, बस मैं उनकी तपस्या का फल देना चाहती थी। मैं तुम्हारी अपराधिनी हूँ तो मुझे दंड दो, लेकिन उन्हें कुछ मत कहो, प्लीज। वे निर्दोष हैं।''

''हाँ, अभी भी उसी रास्कल के बारे में सोच रही हो न?'' संदीप उठकर बैठ गया।

''आपको क्या मालूम कि मैं क्या सोच रही हूँ?'' वह रोते हुए बोली।

''क्यों, तुम्हारी सोच पर किसी का वश थोड़े ही है···आफटर ऑल यू आर वर्किंग वूमेन···स्वतंत्र स्त्री हो···अपने सपने साकार करने का प्रण जो लिया है तुमने, तभी जैसे शादी से पहले उसके साथ घूमती थीं वैसे ही अब भी···'' संदीप तैश में था।

''आपको सब पता है, जब-जब और जहाँ-जहाँ उनके साथ गई, आपको बताया था मैंने, फिर अब आप क्यों···'' वह रोते-रोते ''संदीप को जवाब दे रही थी, लेकिन उसका मन कुछ और कह रहा था, संदीप, मेरे सपने···मेरे सपने ही क्या थे? खोखले सपने थे। उन्होंने मेरे सपनों को केवल पंख ही नहीं दिए, उनमें उड़ान भरी, तभी तो आज मैं इस स्थिति में पहुँच पाई। न जाने कितने स्कूलों और कॉलेजों में मेरे रिज्यूम्स दिए। मेरी अच्छी जॉब के लिए न जाने किस-किस से बात की? किस-किस के आगे निवेदन किया? सिर्फ इसलिए कि मुझे एक अच्छी स्थिति दे पाएँ। उन्होंने मेरे अस्तित्व के लिए अपना अस्तित्व ही मिटा दिया, संदीप।''

''वाह, तुम तो आरग्यूमेंट करने लगी···उसके लिए अपने पति से बहस करने लगी। हाँ, भई टीचर जो हो, बहस तो करोगी ही!'' संदीप ने व्यंग्य किया।

''नहीं, मैं आरग्यूमेंट नहीं कर रही हूँ। मैं आपको वही बता रही

हूँ, जो आप जानते हैं। '' पूजा ने सिसकते हुए कहा, लेकिन उसके मन की आवाज कुछ और ही थी, 'पति···हो संदीप, तुम मेरे पति हो। इस तन के पति हो! संदीप, तुम्हें नहीं पता कि वे मुझसे शादी करना चाहते थे। और जब उन्होंने प्रस्ताव रखा तो मैंने कहा था कि रिश्ते मन से होते हैं। बस, उसी दिन से उन्होंने मुझे अपनी पत्नी मान लिया और कहा था कि आज से मेरा मन तुम्हें अपनी पत्नी स्वीकार करता है। तन का क्या है, उसे तो एक दिन भस्म होना ही है।'

''अगर पहले मेरा वश चलता तो मैं उसे तुम्हारे घर ही न आने देता। पर तुम्हारे मम्मी-पापा को तो वह जैसे देवता लगता था। उसके खिलाफ कुछ सुन ही नहीं सकते थे। तुम लोग ब्लडी···'' संदीप ने खुद को रोक लिया।

''कह लीजिए जो कहना है, लेकिन···'' कहकर वह तो रुक गई, पर मन कहता रहा, 'उन्होंने उस समय हमें सँभाला, जब हमारी गृहस्थी की नौका डूबनेवाली थी। उन्होंने केवल मुझे सहारा दिया हो, ऐसा नहीं है संदीप, उन्होंने तो हमारे परिवार की नब्ज पर हाथ रखा और उस दयनीय स्थिति से निकाला। आज जिस दुकान को तुम सँभाले हुए हो, उसे जमाने में उन्होंने मेरे पापा का तन-मन-धन से साथ दिया। और उसके लिए उन्होंने अपना तन और मन ही नहीं सुखाया, बल्कि भारी आर्थिक परेशानियों को भी झेला। मैं जानती थी कि वह सिर्फ मेरे लिए था। लेकिन वे चाहते तो केवल मुझसे ही मतलब रख सकते थे, पर नहीं संदीप, वे मेरे परिवार में खुशबू की तरह फैल गए और हर एक को महकाने लगे। संदीप, वे देवता नहीं हैं, क्योंकि देवता भी अपने लिए हविष्य माँगता है, उन्होंने तो केवल प्यार माँगा था, वह भी उधार में।'

''मैं अभी जाकर उसे घर से बाहर निकालता हूँ, यह तुम्हारे पापा का नहीं, मेरा घर है।'' कहकर संदीप उठकर ड्राइंग रूम की ओर चल दिया। पूजा उसे पकड़ने के लिए भागी, ''अरे, सुनिए, क्या कर रहे हैं आप···रुकिए!''

संदीप अब तक ड्राइंग रूम में आ चुका था, लेकिन वहाँ कोई नहीं था। झगड़ा होने की आवाज सुनकर अक्षत वहाँ से जा चुका था। ''शायद उन्होंने सब सुन लिया और वे चले गए, ओह गॉड!'' पूजा ने कहा।

''वाह, बहुत तड़प रही हो उसके लिए, अब आया तो बताऊँगा··· ।'' कहकर संदीप वापस अपने कमरे में आकर चुपचाप लेट गया। पूजा सुबकते हुए रसोई में जाकर काम करने लगी।

सुबह बहुत बुझी-बुझी सी और उदास थी। ग्यारह बज चुके थे। संदीप दुकान जाने के लिए तैयार था। पूजा नाश्ता तैयार कर रही थी कि तभी कॉलबेल बजी। संदीप ने दरवाजा खोला तो एक लड़के ने कुछ कागज और लिफाफा संदीप के हाथों में थमा दिया। संदीप ने कागज देखे तो पता चला कि एक बिल्टी है, जिसमें उसकी दुकान के लिए खरीदे गए नए माल का ब्योरा है, और उसे माल से भरा ट्रक जल्दी जाकर छुड़ाना है। वह खुशी और आश्चर्य से उछल पड़ा। उसने लिफाफा वहीं रख दिया और बिना नाश्ता किए ही अपनी मोटरसाइकिल उठाकर चला गया।

डायनिंग टेबल पर बड़ा-सा लिफाफा था। पूजा ने उसपर हलकी सी नजर डाली, लेकिन जानी-पहचानी लिखावट में अपना नाम देखकर तुरंत उसे खोल लिया। 'यह क्या!' वह चौंकी, 'प्रॉपर्टी के कागज···तो क्या अक्षत ने ही यह सब···ओह नो··· ।'

उन्हीं कागजों में एक छोटा सा कागज भी था, जिस पर लिखे वाक्य को पढ़ते हुए पूजा की आँखें धुँधला गईं—'मैं तुम्हारा उधार कभी नहीं चुका पाऊँगा।'

शिवछाँह, १६५-ब, बुखारपुरा,
पुराना शहर, बरेली-२४३००५ (उ.प्र.)
दूरभाष : ९४१२३४५६७९

लघुकथा

ध्वनि प्रदूषण

• विनोद शंकर गुप्त

मार्च के महीने में बच्चों की परीक्षा चल रही थी। हमारी कॉलोनी में एक सज्जन शर्माजी देवी जागरण करा रहे थे। वहाँ लाउड स्पीकर पर दुर्गा देवी के भजन और कथा का शोर हो रहा था, बच्चों की पढ़ाई में विघ्न पड़ रहा था। बच्चों ने शर्माजी से कहा, ''अंकल, हमारी परीक्षा चल रही है, कृपया लाउड स्पीकर का प्रयोग न करें।'' परंतु शर्माजी ने लाउड स्पीकर बंद नहीं किया। बच्चे क्या करते?

कुछ समय बाद परीक्षाएँ समाप्त हो गईं। जो विद्यार्थी विपुल पड़ोसी शर्माजी से लाउड स्पीकर को बंद करने के लिए कहने गया था, उसके जन्मदिन पर उसके मित्रो डी.जे. पर खूब नाच-गाने बजाकर आनंद ले रहे थे। पड़ोसी शर्माजी की माँ बीमार थीं, उन्होंने बच्चों से कहा, ''बेटा, मेरी माँ बीमार है, तुम लोग डी.जे. को बंद कर दो या आवाज कम कर दो।'' बच्चों ने कहा, ''जब हमारी परीक्षाएँ थीं, तब आपने लाउड स्पीकर बंद नहीं किया था, परंतु हम अब डी.जे. को बंद कर देते हैं, ताकि आपकी माँ सो सकें, हम जानते हैं कि वे बुजुर्ग हैं। माँ माँ होती है!''

ए-३, ओल्ड स्टाफ कॉलोनी,
जिंदल स्टेनलैस लि.
ओ.पी. जिंदल मार्ग, हिसार
दूरभाषः ९४१६९९५४२२

आनंद का उद्‌गम अमरकंटक

● विनय शर्मा

'ऊधौ! मन नाही दस-बीस।
एक हुतो सो गयौ श्याम संग को आराधे ईश।'

हे उद्धव! हमारे पास एक ही मन था, जिसे हमने कृष्ण को दे दिया। दस-बीस मन होते तो एक-दो तुम्हारे निर्गुण ब्रह्म की उपासना में लगा देतीं। अब हम विवश हैं। हमारे पास मन ही नहीं है।

बंधुओ, जब मैं अमरकंटक से घर लौटा तो मेरी स्थिति भी सूरदासजी की इन गोपियों जैसी हो गई। तन तो मेरा घर तक जरूर आ गया, लेकिन मन वहीं नर्मदा-तट पर ही रह गया। अब यहाँ आराधने के लिए वहाँ की स्मृति के अतिरिक्त कुछ नहीं है।

नर्मदा का सौंदर्य बार-बार आँखों में झिलमिला उठता है। कल-कल बहता स्वच्छ निर्मल जल सहसा भाव-विभोर कर देता है। मैंने जब पहली बार छोटे-से एक कुंड में नर्मदा का उद्‌गम स्थल देखा तो विश्वास ही नहीं हुआ कि यह इतनी पतली-सी जलधारा आगे जाकर कैसे इतना विराट् रूप धारण कर लेती है? कहते हैं कि यहाँ नर्मदा का बचपन है। वैसे अमरकंटक में ही थोड़ा आगे चलकर नर्मदा नटखट, अल्हड़ और चंचल भी हो जाती है।

मैं अपने पिताजी और मित्र पुष्पेंद्र चौरे के साथ अमरकंटक आया हूँ। पिताजी ने बताया कि धर्मशास्त्रों में नर्मदा को इतना पवित्र माना गया है कि इसके दर्शनमात्र से मनुष्य के समस्त पापों का नाश हो जाता है। और तो और यह गंगा से भी पवित्र नदी है। यही कारण है कि वर्ष में एक बार गंगा नदी स्वयं काली गाय का रूप धारण कर रात में नर्मदा में स्नान करने आती है और सुबह सफेद गाय बनकर जाती है।

सच में नर्मदा की पवित्रता निर्विवाद है। यह अपने संपर्क में आनेवाले प्रत्येक मनुष्य, जीव-जंतु और प्रकृति को आनंदित कर देती है। इसका प्रमाण हमें जगह-जगह देखने को मिला।

बात टैक्सी ड्राइवर से ही शुरू करें। पेंड्रा रोड से अमरकंटक तक के ३५ किमी. के सफर में उसकी मीठी वाणी और मृदु व्यवहार ने हमारा मन मोह लिया। उसने कई महत्त्वपूर्ण जानकारियाँ भी हमें दीं। वह अपने आपको गौरवान्वित महसूस करते हुए हमसे बार-बार यह कहता रहा कि नर्मदा के सम्मान और उसकी पवित्रता बनाए रखने के लिए वह कुछ भी कर गुजरने को तत्पर है। उसी टैक्सी में एक साधुबाबा भी विराजमान हैं और वे भी टैक्सी ड्राइवर की बातों से सहमत होकर किसी

मूलतः व्यंग्य लेखन में रुचि। प्रतिवर्ष लंबी यात्रा करना और उसे कागज पर उकेरना निबंध या यात्रावृत्त के रूप में। विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में लघुकथा, व्यंग्य, यात्रावृत्त तथा लेखों का प्रकाशन। संप्रति गुजराती वाणिज्य महाविद्यालय में स. प्राध्यापक।

हाल में नर्मदा का किनारा छोड़ने को तैयार नहीं हैं। वे अपने परिवार सहित विभिन्न प्रकार से नर्मदा की सेवा में जुटे हैं। सस्नेह भोजन के लिए आमंत्रित करते हुए हमसे कहने लगे कि आप लोग माँ का प्रसाद (भोजन) लेने सुबह मेरे घर जरूर आइए। टैक्सी ड्राइवर ने भी निवेदन किया कि वापस जाने पर मुझे अवश्य याद करें। निश्चित रूप से दोनों की आँखों में निश्छल प्रेम ही हमें दिखाई दिया। समयाभाव के कारण साधुबाबा के घर हम नहीं जा सके, इसका हमें दुःख रहा। उन्होंने हमारी प्रतीक्षा की होगी। क्षमा करें!

नर्मदा उद्‌गम स्थल पर कई छोटे-छोटे मंदिर बने हुए हैं। वहाँ जब मैं एक मंदिर में दर्शन कर रहा था तो मेरे और भगवान् की प्रतिमा के बीच आसन लगाए बैठे पंडितजी बार-बार आँखों से एक थाली की ओर संकेत कर मुझसे कुछ कहना चाह रहे थे। मैं उनका मंतव्य समझ गया और थाली में कुछ पैसे डाल दिए। बस फिर क्या था, उन्होंने जोर-जोर से मंत्र पढ़ना शुरू कर दिया। वे मेरा हाथ पकड़कर लाल डोरा बाँधने और सिर पर तिलक लगाने का उपक्रम करने लगे। मैंने उन्हें ऐसा करने से मना किया तो वे चिंतित हो गए और मत्र पढ़ते-पढ़ते ही भौंहें उचकाकर कारण जानना चाहा, पर मैं चुप ही रहा। वे देर तक मुझे देखते रहे और मैं उन्हें। मैं कर्मकांड का घोर विरोधी हूँ, इसलिए मुझे यह सब पसंद नहीं है। भाई कर्म ही करना है तो अपना पुरुषार्थ कब काम आएगा? मुझे मंदिर से बाहर निकलते देख उन्होंने फटाफट एक चुनरी में नारियल लपेटकर मेरे हाथ में थमा दिया। जब नारियल और चुनरी लेकर मैं पिताजी और मित्र के पास पहुँचा तो उनके आश्चर्य का ठिकाना न रहा।

''अरे! तुम्हें नारियल और चुनरी दी। हम दोनों को तो बेरंग लौटा दिया पंडितजी ने। तुम तो किस्मतवाले हो भाई!''

मैंने कहा, ''ऐसी कोई बात नहीं है। मैंने थाली में सौ रुपए चढ़ाए

थे और आप दोनों ने १०-१० रुपए, बस!''

मैंने वह नारियल और चुनरी भी पिताजी और मित्र में बाँट दी। वे प्रसन्न हो गए। माथे से लगाकर सामान झोले में रख लिया। सबकी अपनी-अपनी आस्था है। कहाँ मैं पंडितजी से जान छुड़ाकर भाग रहा था और कहाँ ये लोग उनका दिया हुआ सामान सिर-माथे से लगा रहे हैं।

यहाँ मंदिर परिसर के बाहर छोटी-छोटी दुकानें हैं, जिनमें प्रसाद और कई सजावटी सामान के अलावा नर्मदा-किनारे के जंगल में उपलब्ध जड़ी-बूटियाँ मिलती हैं। ऐसी ही टेंटनुमा एक दुकान में जड़ी-बूटियाँ सजाकर ३०-३५ वर्षीय दुबली और साँवली-सी महिला बैठी थी। वह अपने नवजात शिशु को दूध पिला रही थी। मैंने उससे बूटियों की ओर देखते हुए यों ही पूछ लिया कि यह क्या है? उसने नॉनस्टॉप बोलते हुए सभी जड़ी-बूटियों के नाम, उनके गुण-धर्म और विभिन्न बीमारियों में उनकी भूमिका सविस्तार बता दी। एक जड़ी की ओर संकेत करती हुई वह कहने लगी कि इसे घर में रखने से बाहरी बाधाएँ घर में नहीं घुसती हैं। मैंने उससे कहा कि जिस दिन मेरी शादी हुई थी, उसी दिन से बाहरी बाधा मेरे घर में घुसी हुई है। वह झट से बोली, ''तो फिर दे दूँ साहब?'' मेरी खुशकिस्मती रही कि वह मेरा मजाक समझी नहीं, वरना महिला आत्मसम्मान पर एक निबंध सुनने को मिलता। मैंने बहाना बनाकर इनकार में सिर हिला दिया। वह हँसती हुई फिर अपने बच्चे की ओर मुखातिब हो गई। मैं कायल हो गया। मित्रो, ऐसी सादगी सिर्फ नर्मदा किनारे ही मिल सकती है।

उस दिन हम बहुत घूमे। इतने कि प्यास से व्याकुल हो गए। कंठ सूख गया। पानी तलाशे, पर नहीं मिला। मन-ही-मन सोचते रहे कि हे प्रभु! नर्मदा-किनारे प्यासे? तभी हमें एक व्यक्ति कुएँ से पानी खींचता हुआ दिखा। हम दौड़ पड़े। हमने खुद कुएँ से पानी खींचा और पीया। कुआँ क्या, एक सँकरी कुइयाँ थी, पर थी बहुत गहरी। शीतल व अमृत समान जल पीकर आत्मा तृप्त हुई। तभी मित्र ने पूछा, ''क्या यह पानी भी नर्मदा का है?'' उसने बड़ा सुंदर उत्तर दिया, ''यहाँ तो कण-कण में माँ की ममता है।'' मेरी दृष्टि में तो नर्मदा के प्रति अगाध श्रद्धा का यह भव्य स्वरूप है।

घूमते-घामते सुस्ताने के इरादे से हम चाय की दुकान पर जा बैठे। वहाँ हमने देखा कि दो छोटी बच्चियाँ चाकू न होने के बावजूद कटोरी की धार से पत्तागोभी काट रही थीं। उनमें गजब की फुरती थी। मशीन की तरह उनके हाथ फटाफट चल रहे थे।

पिताजी उनसे पूछ बैठे कि तुम दोनों स्कूल जाती हो? वे बिना बोले हँसते हुए अपना काम करती रहीं। पीछे से उनकी माँ बोली, ''हाँ, जाती हैं, उधरवाली छठी में है और इधरवाली सातवीं में है।'' मैंने मजाकिया अंदाज में पूछा, ''उधरवाली का क्या नाम है और इधरवाली का क्या नाम है?'' माँ भी हँसते हुए बोली, ''उधरवाली का नाम नर्मदा है और इधरवाली का नाम सोना है।''

दरअसल बात यह है कि अमरकंटक में नर्मदा के अतिरिक्त सोन नदी का उद्गम भी हुआ है। हालाँकि दोनों नदियों की दिशाएँ अलग-अलग हैं। कहते हैं कि दोनों बहनों नर्मदा और सोन में किसी बात पर झगड़ा हो गया था, इसलिए दोनों ने अपनी-अपनी दिशाएँ बदल लीं। सोन तो अपने उद्गम स्थल से ही एक गहरी खाई में कूद पड़ी। फिर नजर नहीं आई। नर्मदा ने भी अपनी दूसरी राह पकड़ी। ऐसा भी क्या रूठना?

खैर, रास्ते में हमें कुछ नर्मदा परिक्रमावासी भी दिखे। मुझे तो हर परिक्रमावासी में श्री अमृतलाल वेगड़ ही दिखाई देते हैं। हजारों-लाखों लोग नर्मदा परिक्रमा कर चुके हैं, लेकिन श्री वेगड़ न होते तो हमें इन परिक्रमावासियों का दुःख, प्रसन्नता और कष्टप्रद यात्रा का अनुभव नहीं हो पाता। धीरे-धीरे और सबसे पीछे चल रहे एक परिक्रमावासी ने सफेद, किंतु मटमैला कुरता-पायजामा और नायलोन के फटे जूते पहन रखे थे। इन्हें देखकर मुझे प्रेमचंद के फटे जूते याद आ गए। दुबली काया के बावजूद उन्होंने पीठ पर काफी बोझा लाद रखा था। दिसंबर की कड़कड़ाती ठंड और लंबा-कठिन यात्रा-पथ। यह सब सोचकर मैंने उनसे सहर्ष पूछ लिया कि मैं आपकी क्या सहायता कर सकता हूँ? मैं आर्थिक मदद के लिए तत्पर था, किंतु उन्होंने बस इतना कहा, ''प्रसन्न रहो!'' मैं हक्का-बक्का रह गया। दूसरों की प्रसन्नता के अलावा इन्हें कुछ नहीं चाहिए! प्रणाम भगवन्। वस्तुतः हमारी आँखों पर जिस रंग का चश्मा चढ़ा हो, उसी से हम दुनिया को देखते हैं, जबकि दुनिया तो बहुरंगी है।

जंगल से गुजरती इठलाती सड़क पर हम चले जा रहे हैं। वैसे जंगल से गुजरना बड़ा हिम्मत का काम है, लेकिन सड़क हमें यह आश्वासन जरूर दे देती है कि यहाँ मनुष्य की आमद बनी हुई है, इसलिए घबराने की जरूरत नहीं है। यह आश्वासन पगडंडी पर थोड़ा कम हो जाता है और पगडंडी खत्म होते ही जंगल अट्टहास कर उठता है। एक चेतावनी मिल जाती है कि आ बेटा! अब मेरे पास; देखता हूँ तुझे! खैर, हमारे साथ ऐसा कुछ नहीं हुआ, क्योंकि हमने तो वह इठलाती सड़क छोड़ी ही नहीं। हम जा रहे हैं—कपिलधारा और दूधधारा।

अमरकंटक कई ऋषि-मुनियों की तपस्या स्थली रही है। कपिलधारा भी एक ऐसा ही स्थान है। दूर से ही हमें नदी के बहने की धीमी-धीमी आवाज सुनाई दे रही है। ऐसा लग रहा है, मानो किसी

संगीतकार ने कोई मधुर तान छेड़ रखी हो। नर्मदा का जल पीकर उसके सम्मान में अदब से हाथ बाँधे चुपचाप खड़े साल के वृक्ष, कभी-कभी हवा चलने पर झूम उठते हैं, लेकिन फिर गंभीरता से खड़े हो जाते हैं। अनुशासन कोई इनसे सीखे। स्थानीय लोग भी इनकी प्रशंसा करते नहीं थकते। उनका कहना है कि इसकी लकड़ी इतनी मजबूत होती है कि 'सौ साल खड़ा या सौ साल पड़ा, बात बराबर।' यानी पेड़ सौ साल तक खड़ा रहे या सौ साल तक जमीन पर पड़ा रहे तो भी लकड़ी की मजबूती बरकरार रहेगी। यह सब नर्मदा का ही प्रताप है। इन वृक्षों के बीच से ही बहकर नर्मदा ने यहाँ दूधधारा में प्रपात के रूप में छलाँग लगाकर रफ्तार पकड़ी है। विंध्याचल और सतपुड़ा पर्वतमाला को सिंचित करती हुई नर्मदा अपना रास्ता स्वयं बनाती हुई चलती है।

यहाँ बंदरों की बहुतायत है। भोले बंदर! परेशान तो बिल्कुल नहीं करते। बस, सब मिलकर पर्यटकों को घेर लेते हैं। एकता की मिसाल हैं। हाँ, जब खाने को कुछ मिल जाए तो फिर एकता गई भाड़ में, झगड़ा होना सौ प्रतिशत तय है—'एक अनार सौ बीमार।' अब किस परिवार में लड़ाई नहीं होती, फिर ये तो वानर हैं। हालाँकि इनमें समझ बहुत है। ये स्थानीय लोगों को बखूबी पहचानते हैं और उनसे डरते भी हैं। कल की ही बात है, नर्मदा उद्‌गम स्थल पर एक सयाना बंदर बैठा सुबह की धूप का आनंद ले रहा था, तभी एक व्यक्ति ने उसे देखकर उसकी ओर धनुष-बाण चलाने का अभिनय किया तो वह बंदर सतर्क हो गया और एक पेड़ की आड़ में छिप गया। थोड़ी देर बाद उस बंदर ने झाँककर देखा तो उस व्यक्ति ने फिर धनुष-बाण चलाने का अभिनय किया, वह फिर छिप गया। लुकाछिपी का यह खेल देर तक चलता रहा। आखिरकार उस सयाने बंदर ने हार मान ली। वह एक हाथ सिर पर और एक हाथ पेट पर रखकर आत्मसमर्पण की मुद्रा में सामने आकर खड़ा हो गया। उस व्यक्ति ने उसे हाथ से ही जाने का इशारा किया तो वह चला गया। मैं दूर खड़ा यह घटनाक्रम देख रहा था। मैंने पूछा, ''भाई, यह माजरा क्या है? तुम यह धनुष-बाण चलाने का अभिनय क्यों कर रहे थे?'' वह बोला कि मैं धनुष-बाण चलाने का अभिनय नहीं कर रहा था, मैं तो गुलेल चलाने का अभिनय कर रहा था। हम लोग इन्हें भगाने के लिए गुलेल का प्रयोग करते हैं। मार लगने के कारण ये डरे हुए हैं और गुलेल चलाने का अभिनय करने पर ये डरकर भाग जाते हैं। मैंने पलटवार किया, ''तो आप ऐसा क्यों करते हो?'' वह बोला, ''आप तो देख ही रहे हो कि मेरी प्रसादी की दुकान है। यदि ध्यान न दो तो ये बंदर दस मिनट में दुकान खाली कर दें।'' सच है कि इनसान के सामने आखिर कौन ठहर सका है!

न जाने कितने पशु-पक्षियों के आवास का गवाह यह जंगल सूर्य की पहली किरण के साथ ही चहक उठता है। सोनमुड़ा के पहाड़ों के बीच से निकला लाल गोला सबसे ऊँचे पेड़ की सबसे ऊँची शाखा को सुनहरी करते हुए धीरे-धीरे पूरे पेड़ को और फिर सब पेड़ों को सुनहरा कर देता है, मानो किसी ने पेड़ों से पारस पत्थर को छुआ दिया हो। यही सुनहरापन देखनेवालों के मन पर भी छा जाता है। मुझे तो यहाँ आकर ऐसा लगा, मानो अमरकंटक सिर्फ नर्मदा और सोन का ही उद्‌गम नहीं है, बल्कि यह आनंद का भी उद्‌गम क्षेत्र है। यहाँ आकर ही अनुभव हुआ कि मन में आनंद की अनेक नदियाँ बह निकली हैं, जो शायद आजीवन बहती ही रहेंगी हमारी नर्मदा की तरह।

प.म.ब. गुजराती कॉमर्स कॉलेज, इंदौर (म.प्र.)
दूरभाष : ९८२६०३७१०६

राजा का चुनाव

लघुकथा

● मीरा जैन

निर्णायक मंडल के पंच तोतों ने जैसे ही राजा तोते के नाम की घोषणा की, अन्य सभी प्रतियोगी तोतों में असंतोष फैल गया, वे सब एक साथ टैं-टैं करने लगे, 'ये तो अन्याय है, नियम के मुताबिक जो तोता निश्चित उड़ान भरकर पहले आएगा, वह राजा तोता होगा; लेकिन आप लोगों ने सबसे आखिर में आनेवाले मन्नू को राजा घोषित कर दिया, यह सरासर नाइनसाफी है!'

इस पर पंच तोतों ने सभी को शांत करते हुए कहा, 'मेरे प्यारे बच्चो! आप लोगों का नाराज होना अपनी जगह सही है, आप लोगों को यह तो ज्ञात ही है कि इस पद के लिए पूरे बारह तोतों ने उड़ान भरी थी, लेकिन लौटकर ग्यारह ही आए, बारहवाँ तोता पिन्नू कहाँ है, यह किसी ने जानने की कोशिश नहीं की?'

तब अन्य तोतों को ध्यान आया कि पिन्नू नहीं है। पंच तोतों के अध्यक्ष ने पुन: कहना प्रारंभ किया—

'मैं बताता हूँ, पिन्नू कहाँ है, उड़ान के दौरान उसकी तबीयत खराब हो गई, वह बेहोश होकर नीचे गिरता, उससे पहले ही मन्नू ने उसे अपनी पीठ पर बिठाकर सुरक्षित स्थान पर छोड़ दिया, इसके बाद फिर से उड़ान भरी, इसीलिए वह पिछड़ गया। यदि पिन्नू को समय पर मन्नू की सहायता नहीं मिलती तो उसकी मौत निश्चित थी। जो प्राणी दूसरों की सहायता करने के लिए हमेशा तैयार रहता है, उससे बड़ा विजेता इस जग में भला दूसरा कौन हो सकता है।'

पंचों का स्पष्टीकरण सुन सभी तोतों ने मन्नू के स्वागत में खूब तालियाँ बजाईं और सहर्ष उसे राजगद्‌दी पर विराजित किया।

५१६ साईंनाथ कॉलोनी, सेठी नगर
उज्जैन-४५६०१० (म.प्र.)
दूरभाष : ०९४२५९१८११६

लोककंठ से निकली बरखा की फुहार

• सुधा तैलंग

काले-कजरारे बादलों को देखते ही मन-मयूर नाच उठता है। बारिश की नन्हीं-नन्हीं, इठलाती-लहराती बूँदें तपती धरा को शीतल और तृप्त कर देती हैं। चौमासे की दस्तक मानव के साथ पशु-पक्षी, प्रकृति सभी को पुलकित-पल्लवित और हर्षित कर देती है। बरखा की ऋतु संतृप्त विरही प्रेमी-हृदय को अपने प्रेमी की याद ताजा कर देती है। तब ही तो मेघों को विरही यक्ष के माध्यम से अपनी प्रियतमा को प्रेमासिक्त संदेश भेजने की कल्पना को लेकर महाकवि कालिदास ने 'मेघदूतम्' काव्य की रचना कर डाली।

आसाढस्य प्रथम दिवसे, मेघामाष्लिष्ट वप्र क्रीडा।
परिणत गज प्रेक्षणीय, ददर्ष मेघदूतम्।

लोकगीतों में यों तो सभी ऋतुओं का वर्णन मिलता है, पर पावस ऋतु की सुंदरता को देखकर लोककंठ, कविहृदय भला कैसे मौन-मूक रह सकता है। लोकगीत माटी की सौंधी महक के साथ समूचे परिवेश को भाव-विभोर कर जाते हैं। बुंदेली लोकसंस्कृति की तो बात ही निराली है। बुंदेली लोककंठ से निकली बरखा की फुहार लोकमानस को हर्षित, पुलकित, आनंदित और पल्लवित कर देती है।

मोरी दई भई सराबोर, रस की बूँदें परी।

चौमासे की खबर आते ही गौरैया भी घूरे में लोट-पोट कर अपनी खुशी को अभिव्यक्त करती है। बुंदेली लोकगीतों में कितना सहज चित्रण है—

खबरें चौमासे के आवन की आई।
गौरैया घूरा में भई लोट-पोट।

प्रकृति का अपार, अपूर्व सौंदर्य, शृंगार मानवमन के साथ पशु-पक्षियों को भी हर्षित कर देता है। चहुँओर हरे-भरे पेड़, बारिश की नन्हीं-नन्हीं बूँदों का स्पर्श, मंद, सुगंधित, शीतल बयार के झोंकों से सराबोर बरखा ऋतु में मन-मयूर नृत्य करने से कैसे रुक सकता है।

उठी-उठी रे घटा घनघोर, चमचम चमके बिजुरिया।
वन नाच रहे जोड़ा मोर, छनक उठी पायलिया रे।

मेघों के गर्जन से और बारिश की बूँदों से हर्षित मोर अपने पंखों को फैलाकर नाच उठता है—

रिमझिम-रिमझिम मेऊ बरसे, छाई घटा घनघोर।
चहुँ दिस चमके, चारू चंचला शोर मचावे मोर।

सुपरिचित लेखिका। देश के प्रतिष्ठित समाचार-पत्र व पत्रिकाओं में कहानी, लेख, साक्षात्कार आदि लगभग ३०० से अधिक रचनाएँ प्रकाशित। उत्कृष्ट शिक्षक पुरस्कार से सम्मानित। संप्रति मध्य प्रदेश स्कूल शिक्षा विभाग में संस्कृत की शिक्षक।

वहीं सावन की झड़ी लगते ही परदेश गए प्रियतम को संदेश भेजती हुई नारी के हृदय को पपीहा की पीहू-पीहू बोली भी ठेस पहुँचाती है—

सावन की लागी झड़ी, पिया गए परदेश रे!
पीहू-पीहू बोले पपीहा, मोरे हियरा को लागी ठेस रे!

बरखा की फुहारों से प्रकृति ने नव शृंगार कर लिया है। बरखा की बूँदें जहाँ एक ओर प्रेमीजन-मन को पुलकित करती हैं, वहीं विरही मन को और भी संतृप्त कर जाती हैं। बिजली की चमक बादल की गरज से भयभीत हुई नायिका अपने प्रीतम से जल्दी ही घर लौटने की मनुहार करती हुई कहती है—

बदरा रे रए, चमके-चमके बिजुरिया छलके है,
नैंका करोए, जल्दी घरे लौट आओ।

रिमझिम बरखा की ऋतु में बिजली कड़कने से भयभीत होकर नायिका प्रियतम को याद करके अपने विरही मन की भावनाओं को अभिव्यक्त करती है—

बरसत घहरात गगन बिच,
चपला चमके न्यारी।
मैं अति डरती भवन के भीतर,
प्रियतम बिन बूँद कटारी।

आकाश में कारी बदरिया के छाते ही गाँव की युवतियाँ मदमस्त सुहानी रुत में पानी भरने पनघट की ओर चल देती हैं—

ऊपर बादर घहराएँ,
गोरी घना पनियाँ को निकरी।

कजरी-गीतों, राछरें, सैरों गीतों में भी चौमासे की रुत का मनमोहक वर्णन हुआ है। बुंदेलखंड अंचल में वर्षा ऋतु में सैरों-गीतों का विशेष प्रचलन है। सैरों-गीतों में भाई-बहन के स्नेहपूर्ण संबंध, पति-पत्नी के उलाहने, खेती में बढ़िया उपज होने की खुशी की अभिव्यक्ति कितनी

सहज लगती हैं।

बरखा की रुत तीज-त्योहारों को अपने साथ लाती है। कजरी तीज, हरियाली तीज, सावन तीज, राखी, साँझी और मामुलिया पर्व के आने का बेसब्री से इंतजार करती ससुराल में नव विवाहित बेटियाँ अपने भाई के आने की बाट जोहती स्नेह से पगे शब्दों में कह उठती हैं—

असड़ा तो लागे रे।
असड़ा तो लागे,
अरे मोरे प्यारे,
दूब-लुबौआ नई आय,
धरै चुनरी, धरी रँगाय।

चुनरी को रँगाकर बहनें अपने भाइयों के आने का इंतजार कर रही हैं कि कब वे आएँ और उन्हें ले जाएँ। नारी मन की कोमल भावनाएँ छिपी हैं इस लोकगीत में। वहीं सावन की रिमझिम झड़ी के बीच झूलागीत मन में भक्ति-भाव को भर देता है—

झूला डारो कदम की डार।
झूलत नंद किशोर जमुना के तीरे।

सावन के आते ही ब्रज में कृष्ण के संग राधा झूला झूल रही हैं। कितना सुंदर चित्रण है—

झूला झूल रही ब्रज बाला,
झूलो लाला नवल बाला।
गावे राग-मलार एक संग,
हेर-हेरी एक ओर।

शादी-ब्याह में गाए जानेवाले गारी-गीतों में भी वर्षा अपना प्रभाव जमाए बिना भला कैसे रह सकती है—

किवरियाँ खोल दो मोरे राजा
रस की बूँदें परी,
पैलऊँ आँधी बैहर आई, तीजे कठिन अँधेरी छाई।

ऐसी सुहावनी रुत में सुंदरियों के पैर भी थिरक उठते हैं। ऐसे में पायल की आवाज लोकगीतों की मधुर सुर-लहरियों के साथ कानों में अमृत रस की बौछार करने लगती है। पावस की पहली फुहार प्रस्फुटित होते अंकुर, पल्लवित होते पत्ते, खिलती हुई बेला-जूही की कलियाँ नायिका के केशों का शृंगार करने को लालायित हो उठती हैं।

बेला फूलो, आधी रात, गजरा पिब गरे डारौ।

सावन के महीने में नव विवाहिताएँ अपने मायके जाती हैं। मायके जाकर वे अपनी सहेलियों से मिलती हैं, सोलह शृंगार कर झूला झूलती हैं। और अपनी भावनाओं को अभिव्यक्त करते हुए गाती हैं—

एक चना दो, देउली माई
सउन आए।
कौना सी बिटिया, सासरे गई
माई साउन आए।
गौरा सी बिटिया सासरे, माई साउन आए।
को जौं लुआउन जाय री, माई साउन आए।

प्रस्तुत लोकगीत में बेटी का भी अपने भाई की तरह ही मैके पर हक है, इसका मार्मिक चित्रण किया गया है। एक ही चना के दो हिस्से यानी दाल कहकर यह प्रगट किया गया है कि बेटा-बेटी एक ही समान होते हैं। अतएव दोनों का एक समान ही हक होता है। गौरा किसी विवाहित बेटी के प्रतीक में और सूरजमल भाई के प्रतीक के रूप में प्रस्तुत किया गया है।

नारी की सुंदरता, संपूर्णता उसके माँ बनने पर ही होती है। बुंदेली लोकगीत मन को छू लेता है—

साऊन सुहानी मुरली बजै, भादों सुहानी मोर।
तिरिया सुहानी जबाई लगै, बारों खेले पीर के दौर।

सावन के महीने में मुरली की धुन सुनने में प्रिय लगती है, भादों के माह में मोर का नृत्य। लेकिन नारी तभी अच्छी लगती है, जब उसके घर के आगे बच्चा खेल रहा हो।

वर्षा का सैरों-गीत व नृत्य से अटूट नाता है। सैरों छोटे-छोटे गीत होते हैं, जिनमें बहिन-भाई-स्नेह, प्रेमी-प्रेमिका की मनुहार, कृषि एवं पावस ऋतु के संग पोखर, कुएँ, नदी, तालाबों के भरने का वर्णन होता है—

चौरेई नौनिया तोरे दिन कड़ गए,
कनकनउआ लहरिया लेय।
ठाड़ो घूमा अरे विनती करै,
टोर फुदरया लेय।

वहीं कारे-कजरारे बादलों को देखकर इंद्रदेव को प्रसन्न करने कृषकों के होंठों से बोल फूट पड़ते हैं—

दूर गरजी नजीक, बरसो रे इंदर राज।
धरती अबोलो क्यों लियो जी हमार राज।

रसिया गीतों में भी पुरबाई चलते ही बदरी के आकाश में छा जाने पर सहज प्रकृति से जुड़ी भावनाओं की अभिव्यक्ति देखने को मिलती है—

गाड़ी बारे मसक दे बैल, पुरवइया के बादर नए।
गाड़ी बारे मसक दे बैल, कौन बरस नए मेऊ।

ऋतु गीतों के अलावा सैरों-नृत्य भी बुंदेलखंड में वर्षा से संबंधित हैं। कजलियों के मेलों में साउन तीज के मौके पर, अच्छी फसल होने की आशा में किसान बुवाई के बाद नाच-गाकर अपनी खुशियाँ अभिव्यक्त करते हैं। सैरों-नृत्य सामूहिक नृत्य है। खेती से जुड़े सभी लोग वर्षा का स्वागत ढोलक की थाप, मंजीरे की खनखनाहट व लाठी-डंडों की ठक-ठक ध्वनि के साथ

गोल घेरा बनाकर करते हैं। दोनों तरफ डंडों से आपस में चोट की जाती है। घेरे के बीच प्रमुख गायक होता है, जो गीत गाता है और नाचते हुए लोग पूरे जोश से गीत दुहराते हैं। नर्तक नाचते हुए कारी बदरिया को प्रसन्न करते हुए बरसने का अनुरोध कर रहे हैं—

घाय घरिल्ला रे डूबो, न मोरो परदेसी प्यासो जाय।
कारी बदरिया री तोही सुमरो पुरवाई परो तिहारे पाँय॥

सैरों-नृत्य बुंदेलखंड की संस्कृति को सहज ही अभिव्यक्त करता है।

सैरों के अलावा राजा अमान सिंह के राछरे गीत भी बुंदेलखंड में विशेष लोकप्रिय हैं। राछरे गीतो में महिलाएँ प्रश्नोत्तर संवाद-शैली में प्रलंब-गीत गाती हैं। ये प्रलंब-गीत पन्ना के राजा अमान सिंह के समय से प्रचलित हैं।

पन्ना के राजकुमार अमान सिंह की बहिन की शादी जालौन के एक गाँव में हुई थी। बहनोई प्रान सिंह धँधेरे से एक बार अमान सिंह की लड़ाई हो गई और बहनोई मारा गया। वर्षा ऋतु आई। सावन के झूले पड़े। विवाहित बेटियाँ मायके आईं। ऐसे में अमान सिंह की माँ को अपनी बेटी की याद आई। उसने अमान सिंह से अपनी बहिन को लाने की बात कही।

तोरईया सदा न फूलें, सदा न सावन होय।
सदा न राजा रनचढ़ै सदा न जीवें कोय।

राजमाता ने कहा, ''तुरइयाँ सदा नहीं फूलतीं, सदैव सावन नहीं रहता, राजा भी सदा युद्ध नहीं करता और यौवन भी सदा नहीं रहता।''

जनजीवन और लोकसंस्कृति, प्रकृति व परंपरा से जुड़े लोकगीतों में चौमासे के आगमन से जुड़े लोकगीतों में चौमासे के आगमन का स्वागत मधुर सुर लहरियों के संग किया जाता है। जीवन के मूल्यों, रीति-रिवाजों, तीज-त्योहारों प्रकृति और ऋतुओं से जुड़े लोकगीत हमारे अंतर्मन को छूते हुए मधुर रिश्ते बनाते हैं।

बुंदेली संस्कृति में माटी की सौंधी सुगंध के साथ लोक से जुड़ीं परंपराएँ एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी को हस्तांतरित होती रहती हैं।

सा.अ.

सिमरन अपार्टमेंट,
ई-८ त्रिलंगा, भोपाल (म.प्र.)
दूरभाष : ९३०१४६८५७८

साहित्य अमृत

भारत सरकार (गृह मंत्रालय) के राजभाषा विभाग के
पत्रांक ११०१४/८/९६-रा.भा. (प) द्वारा
केंद्रीय सरकार के मंत्रालयों/विभागों/कार्यालयों/
सार्वजनिक उपक्रमों/बैंकों/स्वायत्त निकायों/संस्थाओं आदि के लिए
एक विशिष्ट मासिक साहित्यिक पत्रिका के रूप में अनुशंसित एवं अनुमोदित।
एक प्रति का शुल्क : तीस रुपए
एक वर्ष का शुल्क : चार सौ रुपए
शुल्क मनीऑर्डर अथवा बैंक-ड्राफ्ट द्वारा 'साहित्य अमृत' के नाम
४/१९ आसफ अली रोड, नई दिल्ली-११०००२ के पते पर भेजा जा सकता है।
राजभाषा हिंदी तथा सत्साहित्य के प्रचार-प्रसार के लिए
संस्थाओं का सहयोग अपेक्षित है।

रहस्यमयी पुस्तक चोर

● रेनू सैनी

''अरे, मेरी गणित की किताब कहाँ गई?'' यशवी अपनी किताब को मेज पर न पाकर चीखते हुए बोली। गेम्स के पीरियड में जाते समय वह गणित की किताब को मेज पर ही छोड़ गई थी। अगला पीरियड गणित का ही था। गणित की कॉपी अपनी जगह पर थी, लेकिन केवल किताब वहाँ नहीं थी। कुछ ही देर में गणित की आयत मैडम हाथ में कॉपियाँ लिये हुए आईं। आज उन्हें छठी कक्षा का टेस्ट लेना था, इसलिए वे आठवीं कक्षा की गणित की कॉपियों को भी यहीं ले आई थीं कि बच्चों को टेस्ट पेपर देकर वे कुछ कॉपी जाँच लेंगी। आते ही शोरगुल सुनकर आयत मैडम बोलीं, ''ये क्या, तुम सबको तो शांति से गणित की तैयारी करनी चाहिए और तुम सब शोर मचा रहे हो!'' इस पर प्रतीक बोला, ''मैडम, किसी ने यशवी की गणित की पुस्तक चुरा ली है।'' कक्षा में चोरी की बात सुनकर आयत मैडम चौंक गईं। अभी तक चोरी जैसी घटना इस कक्षा में नहीं हुई थी। यशवी अपनी किताब के खो जाने से रो रही थी। आयत मैडम ने यशवी को चुप कराया और क्लास मॉनीटर अवनि से सबके स्कूल बैग चैक करने को कहा। अवनि ने मैडम की सहायता से सभी बच्चों के स्कूल बैग चैक किए, लेकिन कहीं भी गणित की पुस्तक नजर नहीं आई।

उस दिन टेस्ट नहीं हो पाया और पीरियड की घंटी बज गई। आयत मैडम बोलीं, ''अब मैं कल क्लास टेस्ट लूँगी। हाँ, इसी बीच आप सभी बच्चों से मेरा निवेदन है कि यदि किसी ने यशवी की पुस्तक ली हो तो वह उसे वापिस कर दे या मुझे लौटा दे। मैं प्रॉमिस करती हूँ कि उस बच्चे को कोई सजा नहीं मिलेगी।'' पर कक्षा के बच्चों के पास पुस्तक होती, तब तो मिलती।

अगले दिन आयत मैडम आठवीं कक्षा में पहुँची तो वहाँ पर भी खलबली मची हुई थी। आज किसी ने आठवीं कक्षा के धैर्य की अंग्रेजी की पुस्तक चुरा ली थी। उस दिन भी पूरी कक्षा में पुस्तक ढूँढ़ी गई, लेकिन कहीं कोई पुस्तक नहीं मिली।

इसके बाद पाँचवीं कक्षा से भी साइंस एवं हिंदी की पुस्तकें गायब हुईं। यह बात प्रिंसीपल मैडम तक भी पहुँची। सभी बच्चों के पास अपनी-अपनी पुस्तकें थीं। ऐसे में आखिर कौन था चोर, जो केवल पुस्तकें चुराता था?

हर कक्षा की मैडम ने गुप्त तरीके से चोर को पकड़ने के प्रयास किए, लेकिन सफलता नहीं मिल पाई। कई कक्षाओं के बच्चों ने जासूसी

सुपरिचित साहित्यकार। 'दिशा देती कथाएँ' एवं 'बचपन का सफर'। हिंदी अकादमी, दिल्ली द्वारा चार बार नवोदित लेखन एवं अनेक बार आशुलेखन में पुरस्कृत, 'भारतेंदु हरिश्चंद्र पुरस्कार', राष्ट्रीय स्तर की पत्र-पत्रिकाओं, समाचार-पत्रों एवं आकाशवाणी से समय-समय पर रचनाओं का प्रकाशन व प्रसारण।

नीति को अपनाते हुए स्वयं को कक्षा में इस तरह छिपा लिया कि कोई उन्हें देख न पाए, लेकिन तब भी चोर पकड़ में नहीं आया। एक दिन छठी कक्षा में जब आयत मैडम पहुँचीं तो फिर शोरगुल सुनकर बोलीं, ''क्या हुआ? अब कौन सी पुस्तक चोरी हुई?'' इस पर सब बच्चे एक साथ चिल्लाकर बोले, ''मैडम, इस बार तो कमाल हो गया, पुस्तक चोरी नहीं हुई, बल्कि यशवी की पुस्तक आज उसी की टेबल पर रखी हुई मिल गई। यह कक्षा के साथ-साथ आयत मैडम के लिए भी हैरानी की बात थी। आखिर चोर को जब पुस्तक लौटानी ही थी तो फिर उसने चुराई क्यों? यदि लौटानी ही थी तो माँगकर भी ली जा सकती थी, फिर अन्य कक्षाओं में भी ऐसा ही हुआ। जिन-जिन की जो पुस्तकें चोरी हुई थीं, वे उनकी जगह पर मिलती गईं। आखिर यह कैसा चोर था, जो पुस्तकें चुराता है और फिर उन्हें वापस भी लौटा देता है।

एक दिन लाइब्रेरियन नमिता पाहूजा मैडम टेबल पर कुछ अंग्रेजी एवं हिंदी की नई पुस्तकों को रखकर प्रिंसीपल मैडम के पास कोई अनिवार्य जानकारी देने के लिए गईं। जब वे वापस लौटीं तो टेबल से तीन पुस्तकें गायब थीं। इनमें एक हिंदी का उपन्यास और दो अंग्रेजी की कहानियों की पुस्तक थी। आखिर पुस्तकें कहाँ चली गईं। वे भी समझ गईं कि पुस्तकों को पुस्तक चोर ही चुरा ले गया है। प्रिंसीपल मैडम तक यह सूचना पहुँची तो वे परेशान होकर बोलीं, ''अब बहुत हो गया। ऐसे नहीं चलेगा। हमें उस चोर को ढूँढ़ना ही होगा। पी.टी.एम. में माता-पिता इस बात की शिकायत कर चुके हैं कि बच्चे की पुस्तक चोरी हो जाती है और जब हम उसे दूसरी दिला देते हैं तो वह मिल जाती हैं। यह क्या चक्कर है? उन्होंने चोर की तलाश करने के लिए एक जासूस मीरा पंडित से बात की। मीरा पंडित पच्चीस साल की नवयुवती थी और वह इसी स्कूल की विद्यार्थी थी। मीरा को जब यह जानकारी ज्ञात हुई तो वह प्रिंसीपल से बोली, ''मैडम, आप चिंता मत कीजिए। अब उस चोर को ढूँढ़कर आप तक पहुँचाना मेरी जिम्मेदारी है।''

मीरा चोर की तलाश में लग गई। उसने हर उस कक्षा की छानबीन की, जहाँ से पुस्तकें चोरी हुई थीं। लाइब्रेरी की पुस्तकें अभी तक नहीं मिल पाई थीं। जाँच-पड़ताल और छानबीन से मीरा इस तह तक तो पहुँच चुकी थी कि यह काम किसी स्कूल के बच्चे का नहीं, बल्कि बाहर के बच्चे का है और वह भी किसी किशोर वय के लड़के का। सब बातों तक पहुँचते-पहुँचते मीरा प्रिंसीपल से बोली, ''यह चोर अलग तरह का है। यह पूरी तरह चोर नहीं लगता। मुझे ऐसा लगता है कि इस चोर को पुस्तकें पढ़ने का शौक है। इसे पुस्तकें नहीं मिल पातीं, इसलिए वह इस स्कूल के बच्चों और लाइब्रेरी की पुस्तकें चुराकर पढ़ता है और जब इन्हें पढ़ लेता है तो वह वापस उनके स्थान पर छोड़ जाता है।'' मीरा की इन बातों से प्रिंसीपल ने भी सहमति जताई। मीरा बोली, ''मैडम, बस एक सप्ताह के अंदर चोर पकड़ लिया जाएगा।'' मीरा को कुछ और भी काम थे। वह वहाँ से निकलकर अपने अन्य कामों को करने के लिए चल पड़ी। एक-दो जगह पर उसे ऐसा महसूस हुआ, जैसे कोई उसका पीछा कर रहा हो, लेकिन जब भी वह पलटकर देखती तो वहाँ पर किसी की छाया तक नजर न आती।

मीरा अब अपने घर लौट रही थी, वह अभी एक किराए के घर में अकेली ही रहती थी। जब उसने अपने घर का ताला खोला तो उसे फिर ऐसा महसूस हुआ कि एक जोड़ी नजरे उसका पीछा कर रही है। मीरा ने सतर्कता से इधर-उधर देखा, लेकिन किसी को न पाकर वह चुपचाप अपने घर में घुस गई। उसने जान-बूझकर घर की कुंडी बंद नहीं की और होशियारी से दो मिनट तक वहीं खड़ी रही। तभी एक पंद्रह सोलह साल की लड़की ने वहाँ प्रवेश किया। लड़की दुबली-पतली लग रही थी। मीरा को देखते ही वह रोते हुए उसके पैरों पर गिर पड़ी और बोली, ''मैडम, वह पुस्तक चोर मैं ही हूँ। आप मुझे सजा दे दीजिए, लेकिन मुझे प्रिंसीपल मैडम के पास मत लेकर जाइएगा। मेरे माता-पिता वहाँ पर मजदूरी करते हैं और स्कूल के पीछे के ग्राउंड में हम तिरपाल की झोंपड़ी बनाकर रहते हैं। मुझे पढ़ने-लिखने का बहुत शौक है। किताबें मुझे बहुत अच्छी लगती हैं। मैं स्कूल जाना चाहती हूँ, लेकिन स्कूल जाने के लिए स्कूलवाले घर का पता पूछते हैं। हमारा तो कोई ठिकाना ही नहीं है। ऐसे में मेरे माता-पिता यदि किसी सरकारी स्कूल में मुझे भरती करा भी देते हैं तो वे घर का पता कहाँ का देंगे? काम की तलाश में हमें इधर-से-उधर घूमना पड़ता है। मुझे अपने माता-पिता का घर-घर मजदूरी करना बिल्कुल पसंद नहीं। मैं चाहती हूँ कि मैं पढ़-लिखकर एक अच्छे पद पर जाऊँ और अपने माता-पिता की मजदूरी करना छुड़वा दूँ। मेरे पिता टी.बी. रोग के भी शिकार हो गए हैं। अगर उन्हें यह बात पता चलेगी तो वे बुरी तरह टूट जाएँगे। प्लीज, अब आप ही मेरी सहायता कर सकती हैं। मैंने आज तक किसी भी पुस्तक की चोरी नहीं की। मैं उन्हें पढ़ने के बाद वापस लौटा देती हूँ।'' इसके बाद उसने लाइब्रेरी की पुस्तकों को मीरा के सामने निकालकर रख दिया। रोते-रोते रुँधे गले से वह इतना सब बोल गई। सारी बात जानकर मीरा ने उसका नाम पूछा तो वह बोली, ''मेरा नाम पूजा है।'' यह सुनकर मीरा ने एक लंबी साँस ली और बोली, ''नाम पूजा और काम ऐसा। पर तुम्हें यह कैसे पता चला कि मैं चोर को ढूँढ़ रही हूँ?''

''मैडम, स्कूल और कक्षा में घूमते देखकर और आपकी व प्रिंसीपल मैडम की बातें सुनकर मैं समझ गई थी कि आप जल्दी ही मुझे ढूँढ़ लेंगी। प्लीज मैं आगे से किसी भी बच्चे की कोई पुस्तक चोरी नहीं करूँगी।'' मीरा के सामने यह अनोखा केस आया था और इसे उसने कुशलता से सुलझाना था। उसने चतुराई से पूजा से ढेर सारी बातें कीं। बातें करते-करते वह उसके गणित, अंग्रेजी और साइंस के ज्ञान से बेहद प्रभावित हुई। वाकई पूजा ने स्कूल न जाते हुए भी स्कूल जानेवाले बच्चों को ज्ञान और बुद्धि में केवल स्वयं पुस्तकें पढ़कर पीछे छोड़ दिया था। उसकी बुद्धिमत्ता से मीरा बेहद प्रभावित हुई। उन्होंने उसे आश्वासन दिया कि उसके माता-पिता को स्कूल के काम से नहीं निकाला जाएगा। फिर वह पूजा से बोली, ''तुम हर जगह मेरा पीछा कर रही थी न। अब तुम घर कैसे जाओगी? यहाँ से स्कूल दूर है।'' पूजा ने माफी माँगते हुए कहा, ''इसके सिवा मेरे पास कोई रास्ता भी नहीं था।'' उसकी सारी बातें सुनकर मीरा उसे स्कूल पहुँचाकर आई।

अगले दिन मीरा ने प्रिंसीपल के सामने लाइब्रेरी की पुस्तकों को रखते हुए उन्हें ये सारी बातें बताईं तो वे दंग रह गईं। पूजा को वहाँ बुलाया गया। प्रिंसीपल ने पहले उसे चोरी करने के लिए बहुत डाँटा। पूजा ने अपनी गलती पर पश्चात्ताप करते हुए हृदय से माफी माँगी। कुछ देर बाद प्रिंसीपल ने उससे कुछ सामान्य ज्ञान और गणित के प्रश्न किए। सबके जवाब पूजा ने सही बता दिए। एक मजदूर की बेटी, जो स्कूल न जा पाई थी, उसके कठिन जवाबों को सुनकर प्रिंसीपल भी उससे प्रभावित हुए बिना न रह सकीं। इसके बाद प्रिंसीपल बोलीं, ''अब मैं तुम्हें सजा सुनाती हूँ।'' यह सुनकर पूजा नीचे मुँह करके खड़ी रही। प्रिंसीपल बोलीं, ''तुम कल से इसी स्कूल की विद्यार्थी बनकर स्कूल आओगी। तुम्हारे ज्ञान को देखते हुए मैंने तुम्हें आठवीं कक्षा में भरती करने का निश्चय किया है। स्कूल के कंस्ट्रक्शन का काम खत्म होने के बाद तुम्हारी माँ को मैं अपने घर काम पर रख लूँगी और रहने के लिए तुम्हें एक छोटा सा घर भी दे दिया जाएगा।''

पूजा को प्रिंसीपल की बातों पर विश्वास ही नहीं हुआ। उसका रोआँ-रोआँ रोमांच से काँप रहा था। वह आँखों में आँसू लिये प्रिंसीपल के कदमों में झुक गई और बोली, ''मैडम! आप मेरे लिए भगवान् हैं, जिन्होंने एक चोर को सजा न देकर जीवन का सर्वोत्तम उपहार दिया है।'' प्रिंसीपल ने पूजा को गले लगा लिया। मीरा की आँखें भी नम थीं, लेकिन वह आज बहुत खुश थी, क्योंकि प्रिंसीपल मैडम ने आज पूजा को आसमान में उड़ने के लिए पंख दे दिए थे।

३, डी.डी.ए. फ्लैट्स, खिड़की गाँव, मालवीय नगर
नई दिल्ली-११००१७
दूरभाष : ०९९७११२५८५८

गाते थे गीत सुरीले

• शांति सुमन

सुपरिचित कवयित्री। अब तक चौदह गीत-संग्रह, दो कविता-संग्रह, 'जल झुका हिरन' (उपन्यास) प्रकाशित। बिहार राष्ट्रभाषा परिषद् पटना से साहित्य-सेवा सम्मान सहित छोटे-बड़े कई सम्मानों से सम्मानित।

हवाओं की आँखें

ऐसे ही दिन थे
रंग जब मौसम के बदले

गायब रहती धूप और
कलियाँ खिलने को आकुल

होते सुबह हवाओं की
आँखें भी हैं जाती खुल

नदियों के जल थे
मिले कभी न इतने उजले,

नए दौर की चिड़ियों को
एक नई चहक मालूम

तब तो खिड़की से बागों
तक मची हैं उनकी धूम,

फूलों को डर थे
कौन खिलना चाहे पहले

अपनी जिद की उमस बढ़े
यह भी कितना हुआ कठिन

हवा आजकल इसीलिए
तो रहती है गिनती दिन,

उसके सपने थे
सतह पर आँखों की बिछले।

रेशम सी कोमल

मौसम को नहीं देखती चिड़िया
रखती उड़ान पर अपनी आँखें

कितना भी हो पतझड़ उदास
फूलों का रुका नहीं खिलना
आँधी हो, ओले हों सबसे
होता है दूबों का मिलना

जाते ही उन झंझावातों के
हैं तन जाती सीधी ये शाखें
गाली देते हुए समय को
हम अपनी पहचान मिटाते
खुद के किए और में रखकर
औखें अपनी रहे बचाते

दिख जातीं भीतर से नीड़ों के
रेशम-रेशम सी कोमल पाँखें

नदी किनारों से बँधकर है
पूरी उमर नेह से जीती
मन की कोमलता लहरों पर
लिखती हुई कथाएँ बीतीं

लगावों को बंद करें इनके
वे नहीं बनी हैं अभी सलाखें।

बरस रहे बादल से

लगते राजे-महाराजे थे
पर मामूली थे हम

आधा पेट खाकर भी तो
गाते थे गीत सुरीले,
गड़ते काँटे कभी नहीं
जितने भी मिले नुकीले,

हँसकर बरस रहे बादल से
तब हाथ मिलाते हम।

चुनते जाकर खेतों में
कटती हुई पतंगों को,
धार-धार बहते सुख थे
पाकर उन सब तमगों को,

केले के पत्तों के छाते
ओढ़कर नाचते हम।

मछली बसती कीचड़ में
मछली में ढेरों खुशियाँ,
खुशियों के चँदोवे में
बसती थी अपनी दुनिया,
मिट्टी के वे घर गलियों में
नहीं छोड़ पाए हम।

खोई हवा कहाँ

भीतर हलचल मन बेचैन रहा इतना
चीजों की पहचान लगी खोने।

है थोड़ी सनसनी हवा में
नहीं दीखती चमक बया में,
बेशुमार होतीं घटनाएँ
अफवाहें हैं भरी फिजाँ में,

नहीं पता इतने दिन खोई हवा कहाँ
बातें देतीं नहीं हमें सोने।

होंठों पर मुसकान लिये जो
आते-जाते कभी न दिखते,
जोर-जोर से हँसते हैं वे
दुहरी चरित कथाएँ लिखते,

सरहद पर कहते हैं जो चाहे जितना
छिपी रोशनी छोटी किस कोने।

करते हैं बातें वे डर की
जो जितना पहले डरते हैं,
और दूसरे की आँखों में
सूनापन को तब भरते हैं,

उमंग-प्यार बाँट भी दो सबको उतना
जाय हौसला नया बीज बोने।

२ कैजर बंगलो, कपाली रोड,
(कदमा सोनारी लिंक)
कदम, जमशेदपुर-८३१००५ (झारखंड)
दूरभाष : ०९४३०९१७३५६

पाठकों की प्रतिक्रियाएँ

'साहित्य अमृत' जून २०१८ का अंक पढ़ा। प्रभाकर माचवेजी का निबंध 'एक कुत्ते की डायरी' रोचक डायरी है। बालकवि बैरागीजी का आलेख 'भगवान् श्रीबदरीनाथ जी की आरती' पढ़कर पहली बार ज्ञात हुआ कि श्रीबदरीनाथ की आरती श्री फखरुद्दीनजी ने १८ वर्ष की आयु में इतनी अच्छी लिखी, जबकि वे मुसलमान थे। श्री लक्ष्मीनिवास झुंझुनवालाजी का आलेख 'भारतीय दर्शन में आनंद' बहुत ज्ञानवर्धक है। आलेख 'क्या मृत्यु का पूर्वाभास संभव है' में आयुर्वेद और ज्योतिष विज्ञान से उदाहरण दिए हैं। श्री राजशेखर व्यास ने अपने पूज्य पिताजी पर संस्मरण उनकी पुण्यतिथि पर दिया है 'विक्रम के पराक्रम का सूर्य'। बहुत जानकारियाँ मिलीं 'विक्रम' पत्रिका के संपादन के विषय में। श्री प्रेमपाल शर्मा ने अपने संस्मरण 'विश्व प्रसिद्ध जंतु विज्ञानी डॉ. रामेश बेदी : कुछ संस्मरण' में डॉ. रामेश बेदी के व्यक्तित्व और कृतित्व पर प्रकाश डाला है। पढ़कर अच्छा लगा। डॉ. मालती शर्मा की कविता 'गड़े मुरदे मत उखाड़ो···' बहुत शिक्षाप्रद है 'इन्हें इसने नहीं उसने···नहीं-नहीं, उन्होंने बनाया था', इस व्यर्थ खोज-बहस में वक्त और शक्ति की बरबादी क्यों? मदन मोहन वर्मा की कहानी 'तलाक, तलाक, तलाक' रमजान के अवसर पर छपी है और अंत में अशरफ मियाँ और रुबिया बेगम की सुलह हो जाती है। कहानी 'छुटकारा' में दलित बिरादरी की लड़की लक्ष्मी ने दरोगा की कुल्हाड़ी से हत्या कर दी, जो उस पर बुरी नीयत रखता था। कहानी 'कसक' भी बहुत अच्छी है। शिल्पा की सास प्रेमादेवी बहू को बहुत भला-बुरा कहती थी, परंतु शिल्पा फिर भी अपने पति विक्रम को अलग रहने के लिए मना करती है। अंत में प्रेमादेवी के विचार बदल जाते हैं और बहू का स्वागत करती हैं। अन्य कहानियाँ भी अच्छी हैं। संपादकीय बहुत बड़ा है और राजनीति के समाचार अधिक हैं। अच्छा होता यदि साहित्य पर कुछ चर्चा होती।

—विनोद शंकर गुप्त, हिसार (हरियाणा)

जून २०१८ का अंक मिला। 'साहित्य अमृत' का प्रत्येक अंक विरल होता है। संपादकीय वास्तव में विश्लेषणात्मक, सारगर्भित, समसामयिक एवं ज्ञानवर्धक है। प्रभाकर माचवे की 'एक कुत्ते की डायरी' ने बहुत मनोरंजन किया, साथ में व्यंग्य भी। श्री लक्ष्मीनिवास झुंझुनवाला का 'भारतीय दर्शन में आनंद' आलेख अत्यंत सराहनीय है, जो हमें सच्चाइयों से रूबरू करवाता है। 'लघुता में एक महामानव' बालकवि बैरागी को स्मरण करते हुए अशोक चक्रधर ने एक महाकवि की याद ताजा कर दी। वे वास्तव में एक महामानव थे। मेरे भी उनके साथ आत्मीय संबंध रहे, मेरी भी शब्दांजलि उन्हें अर्पित। राजशेखर व्यास का 'विक्रम के पराक्रम का सूर्य' भी पंडित सूर्यनारायण व्यास के बारे में विस्तृत जानकारी देकर हमें कृतार्थ किया। रेखा लोढ़ा 'स्मित' की कहानी 'कसक' ने प्रभावित किया। संस्मरण में प्रेमपाल शर्मा का 'विश्वप्रसिद्ध जंतुविज्ञानी डॉ. रामेश बेदी : कुछ संस्मरण' भी बहुत पसंद आया। रीता सिंह की कविता 'जिसका जग में तोल नहीं' ने भी मन को छुआ। ऐसे सुंदर अंक हेतु मेरी ढेरों बधाइयाँ!

—माणक तुलसीराम गौड़, बेंगलुरु

साहित्य अमृत का जून अंक प्राप्त हुआ। सभी रचनाएँ स्तरीय लगीं। संपादकीय के अंतर्गत भारतीय राष्ट्रीयता संकलन के संदर्भ में आपने विस्तृत चर्चा की है। प्रभाकर माचवे का 'प्रतिस्मृति' के अंतर्गत लेख बहुत सामयिक लगा। सफल साहित्यकार उसी को माना जाता है, जिसके कथन में भविष्य में होनेवाली समस्याओं का भी जिक्र हो—समाधान हो। माचवेजी का यह आलेख वास्तव में सराहनीय है। मालती शर्माजी की कविताएँ मर्मस्पर्शी लगीं, 'कोई हो, कोई तो हो' हर व्यक्ति की जरूरत रहती है, लेकिन खुद के जीवन में किस-किसका और कब-कब कोई बना है, यह एक यक्ष प्रश्न है। मालतीजी ने एक ऐसा खाका पेश किया है कि पाठक अपने से ही प्रश्न करने का उपक्रम करने लगता है।

—बी.डी. बजाज, दिल्ली

'साहित्य अमृत' अपने नाम के अनुरूप साहित्य रसिकों के लिए अमृत तुल्य है। सदैव की तरह इस अंक ने भी मन मोह लिया। आकर्षक पीताभ मुखपृष्ठ के साथ-साथ दोहे, कहानियाँ व कविताएँ सभी कुछ बेहद शानदार। विशेष रूप से पुरु मालव के दोहे दिल छूनेवाले हैं। राहुल सांकृत्यायन की कहानी छापकर आपने उपकार किया है। कृपया प्रसाद, चतुरसेन शास्त्री, वृंदावनलाल वर्मा, रांगेय राघव आदि की ऐतिहासिक कहानियों का आस्वाद भी कराएँ। वर्ग पहेली सदैव पसीने लानेवाली होती है, पर इस पसीने में भी सुख है। ईश्वर करे 'साहित्य अमृत' इसी प्रकार अपनी मिठास से पाठकों को आनंद देता रहे।

—इंदिरा मोहन, गुरुग्राम (हरि.)

'साहित्य अमृत' का जून अंक मिला, बहुत-बहुत धन्यवाद। संपादकीय कर्नाटक विधानसभा चुनाव समय के सच का बीजभाव है। स्व. बालकवि बैरागीजी का स्मरण किया जाना अच्छा लगा। वे अपने समय के एक साहित्यिक निकष थे, इसके साथ ही एक अच्छे मनुष्य। मुझे इस बात की प्रसन्नता है कि 'साहित्य अमृत' आज हिंदी पत्रिकाओं में शिखर पर है, बहुत-बहुत बधाई।

—प्रो. त्रिभुवन नाथ शुक्ल, जबलपुर (म.प्र.)

'साहित्य अमृत' का जून, २०१८ अंक मिल गया है। आभार। इस बार पद्यांश, गद्यांश से बराबरी की टक्कर हो रहा है। कई बार वह न्यून रह जाता है। श्री अशोक चक्रधर ने बालकवि बैरागीजी पर संस्मरण बहुत मन से लिखा है। स्वयं श्री बैरागीजी का लेख 'भगवान बदरीनाथ की आरती' सूचनाप्रद और पठनीय है। श्री राजकुमार कुंभज का लेख वैज्ञानिक तथ्यों से भरा हुआ, सोनेवालों को जगाता हुआ और डराता हुआ भी है। अश्विनी कुमार दुबे का व्यंग्य 'पुस्तक प्रेमी' मारक है। अधिकांश रचनाएँ पठनीय, मननीय हैं।

—चंद्रसेन विराट, इंदौर

'साहित्य अमृत' जून, २०१८ अंक में मीरजापुर के प्रमोद कुमार सुमन की कहानी 'छुटकारा' छपी है। अच्छी लगी। कहानी में कई मोड़ हैं। अंत तक कहानी का अंत पता नहीं लगता। इसमें अंतरजातीय विवाह, गरीबी की समस्या, नारी सशक्तीकरण आदि अनेक ज्वलंत मुद्दे उजागर हुए हैं। राजेंद्र परदेसी की कहानी भी काफी सुंदर है। मैंने इसकी चर्चा अपने कई साहित्यिक मित्रों से की है। अगले अंक की प्रतीक्षा है।

—केदारनाथ 'सविता', मीरजापुर

वर्ग पहेली (१५४)

अगस्त २००५ अंक से हमने '**वर्ग पहेली**' प्रारंभ की, जिसे सुप्रसिद्ध शिक्षाविद् एवं ज्ञान-विज्ञान की अनेक पुस्तकों के लेखक **श्री विजय खंडूरी** तैयार कर रहे हैं। हमें विश्वास है, यह पाठकों को रुचिकर लगेगी; इससे उनका हिंदी ज्ञान बढ़ेगा और पूर्व की भाँति वे इसमें भाग लेकर अपना ज्ञान परखेंगे तथा पुरस्कार में रोचक पुस्तकें प्राप्त कर सकेंगे। भाग लेनेवालों को निम्नलिखित नियमों का पालन करना होगा—

१. प्रविष्टियाँ छपे कूपन पर ही स्वीकार्य होंगी।
२. कितनी भी प्रविष्टियाँ भेजी जा सकती हैं।
३. प्रविष्टियाँ ३१ जुलाई, २०१८ तक हमें मिल जानी चाहिए।
४. पूर्णतया शुद्ध उत्तरवाले पत्रों में से ड्रॉ द्वारा दो विजेताओं का चयन करके उन्हें दो सौ रुपए मूल्य की पुस्तकें पुरस्कारस्वरूप भेजी जाएँगी।
५. पुरस्कार विजेताओं के नाम-पते सितंबर २०१८ अंक में छापे जाएँगे।
६. निर्णायक मंडल का निर्णय अंतिम तथा सर्वमान्य होगा।
७. अपने उत्तर '**वर्ग पहेली', साहित्य अमृत, ४/१९, आसफ अली रोड, नई दिल्ली-२** के पते पर भेजें।

वर्ग पहेली (१५२) का शुद्ध हल

१ म	हा	२ दे	३ व	■	४ हा	५ नि	क	६ र
क	■	७ ह	र्ष	८ का	र	क	■	ण
९ ब	१० द	ली	■	वे	■	११ ट	१२ ह	नी
१३ रा	म	■	१४ ता	री	१५ ख	■	१६ म	ति
■	१७ सू	च	क	■	१८ प	ड़ा	व	■
१९ रा	ख	■	२० त	२१ प	ना	■	२२ त	२३ ट
२४ ई	ना	२५ म	■	ना	■	२६ स	न	क
भ	■	२७ द	२८ स	ह	२९ जा	र	■	सा
३० र	फा	द	फा	■	३१ ली	ला	स्थ	ल

★ पुरस्कार विजेता ★

१. **पं. राधारमण त्रिपाठी**
साहू धर्मशाला के सामने
भँवर कॉलोनी, राजगढ़ (ब्यावरा)
मध्य प्रदेश
दूरभाष : ९३००६९५०६९

२. **श्री तिलक राज शास्त्री**
गाँव-कैहरवी, पो.-धरबलोह
तहसील-भोरज,
जिला-हमीरपुर-१७७००१ (हि.प्र.)

पुरस्कार विजेताओं को हार्दिक बधाई।

वर्ग-पहेली १५२ के अन्य शुद्ध उत्तरदाता हैं— सर्वश्री फिरदोस जहाँ (दरभंगा), वाई.के. श्रीवास्तव (जबलपुर), मोहन जगदाले (उज्जैन), अपर्णा गर्ग (लश्कर), शिवशरण दुबे (कटनी), सुनीता वर्मा (दुर्ग), विष्णुकांत झा (वैशाली), रुक्मणी संगल (पटियाला), प्रभात कुमार गुप्ता (मोहाली), फकीर चंद ढुल (कैथल), सी.आर नाहड़िया (महेंद्रगढ़), मोहन उपाध्याय (अजमेर), रामकिशन पंवार (हनुमानगढ़), रजनीश कुमार त्रिवेदी (बरेली), शोभा दाणी (नोएडा), शिवानंद सिंह 'सहयोगी' (मेरठ), संतोष शर्मा (गाजियाबाद), विनीता सहल (मुंबई), कुसुम गोयनका, शिखा जैन, प्रेमलता डोगरा, बी.डी. बजाज, सुभाष शर्मा, पुखराज वार्ष्णेय (दिल्ली), मधुरानी (बेंगलुरु)।

वर्ग पहेली (१५४)

बाएँ से दाएँ—

१. विनयपूर्ण आग्रह (४)
४. ···करना, जबरदस्ती करना (४)
७. ईख (२)
८. केशों के दो भागों में विभक्त करके बीच में बनाई जानेवाली रेखा (२)
९. एक संकेतवाची शब्द (२)
११. नौकर; देवता आदि का भक्त (३)
१२. भूखा रहने की अवस्था (२)
१३. सालगिरह (४)
१५. माँ का मायका (४)
१७. नवीनता, अनोखापन (४)
२०. बिना देखे ही (४)
२३. गौरव (२)
२४. नि:संदेह (३)
२५. संदेह (२)
२६. हमेशा (२)
२७. आफत (२)
२९. बलराम (४)
३०. अभिनेता (४)

ऊपर से नीचे—

१. अंश, हिस्सा (४)
२. बीमारी (२)
३. बेहद अमीर (२,२)
४. हद या सरहद निश्चित करना (४)
५. बड़ा और फनवाला साँप (२)
६. हिंदी-साहित्य का उत्तर-मध्य काल (२-२)
१०. प्रसन्नता (२)
१२. दवा आदि लगा रुई का छोटा टुकड़ा (२)
१४. गंधर्व संबंधी (३)
१६. चिह्न (३)
१७. किसी मान्य अतिथि का स्वागत करने के लिए आगे पहुँचना (४)
१८. विगत (२)
१९. आज्ञाकारी, मातहत (४)
२०. निरर्थक बात (४)
२१. राष्ट्र (२)
२२. धूल में मिला हुआ, विनम्र (४)
२६. सारे लोग, कुल व्यक्ति (२)
२८. व्यापारियों के लिए आदरपूर्ण संबोधन (२)

१		२	३	■	४	५		६
	■	७		■	८		■	
९	१०	■	११			■	१२	
१३		१४		■	१५	१६		
■	■		■	■	■		■	■
१७	१८		१९	■	२०		२१	२२
२३		■	२४			■	२५	
	■	२६		■	२७	२८	■	
२९				■	३०			

प्रेषक का नाम : .....

पता : .....

.....

.....

दूरभाष : .....

वर्ग पहेली (१५३) का हल अगले अंक में।

'अप्रतिम भारत' कृति विमोचित

१७ जून को मुंबई में श्री भागवत परिवार के सौजन्य से प्रभात प्रकाशन, दिल्ली द्वारा प्रकाशित 'अप्रतिम भारत' ग्रंथ का विमोचन रेलवे बोर्ड के अध्यक्ष श्री अश्वनी लोहानी की उपस्थिति में किया गया। इस अवसर पर विशिष्ट अतिथि श्री अच्युता सामंता, ग्रंथ के संपादक मंडल के सदस्य डॉ. करुणाशंकर उपाध्याय तथा सर्वश्री वीरेंद्र याज्ञिक, विश्वनाथ सचदेव, सुरेश चतुर्वेदी, सुरेश खंडेलिया ने अपने विचार व्यक्त किए। संचालन श्री सुरेंद्र विकल ने किया तथा आभार श्री एस.पी. गोयल ने व्यक्त किया। □

'एवरी चाइल्ड मैटर्स' कृति लोकार्पित

१ जून को नई दिल्ली के कॉन्स्टीट्यूशन क्लब में नोबेल शांति पुरस्कार से सम्मानित समाजधर्मी श्री कैलाश सत्यार्थी की प्रभात प्रकाशन द्वारा सद्य:प्रकाशित अंग्रेजी पुस्तक 'एवरी चाइल्ड मैटर्स' का लोकार्पण उच्चतम न्यायालय के माननीय न्यायमूर्ति श्री रंजन गोगोई के करकमलों से संपन्न हुआ। इस अवसर पर प्रख्यात पत्रकार श्री शेखर गुप्ता एवं श्री कैलाश सत्यार्थी के बीच संवाद भी हुआ। □

दो पुस्तकें लोकार्पित

६ जून को नई दिल्ली के कॉन्स्टीट्यूशन क्लब में भारत माँ के वीर सपूत अमर शहीद भगत सिंह रचित एवं प्रभात प्रकाशन द्वारा सद्य:प्रकाशित पुस्तकों 'भगत सिंह जेल डायरी' एवं 'Bhagat Singh Jail Diary' का लोकार्पण केंद्रीय कानून और न्याय तथा सूचना एवं प्रौद्योगिकी मंत्री मान. श्री रविशंकर प्रसाद के करकमलों से हुआ। लोकसभा सांसद राव उदय प्रताप सिंह विशिष्ट अतिथि थे। इन जेल डायरियों की प्रस्तुति शहीद भगतसिंह के पौत्र श्री यादविंदर सिंह संधु ने की है। □

कृति लोकार्पित

७ जून को नई दिल्ली के कॉन्स्टीट्यूशन क्लब में दिल्ली विधानसभा के पूर्व सचिव श्री एस.के. शर्मा की प्रभात प्रकाशन द्वारा सद्य:प्रकाशित पुस्तक 'दिल्ली सरकार के संसदीय सचिवों का सच' का लोकार्पण केंद्रीय विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी और पृथ्वी विज्ञान मंत्री मान. डॉ. हर्षवर्धन के करकमलों से प्रसिद्ध संविधानविद् डॉ. सुभाष कश्यप की अध्यक्षता में दिल्ली की पूर्व मुख्यमंत्री मान. श्रीमती शीला दीक्षित के विशिष्ट आतिथ्य में किया गया। □

'छोटे बच्चे गोल-मटोल' बाल-कविता संग्रह लोकार्पित

विगत दिनों उदयपुर के नगर निगम सभागार में डॉ. गोपाल राजगोपाल की बाल-कविताओं की कृति 'छोटे बच्चे गोल-मटोल' का लोकार्पण राजस्थान के गृहमंत्री श्री गुलाब चंद कटारिया के मुख्य आतिथ्य में संपन्न हुआ। इस अवसर पर प्राचार्य एवं नियंत्रक डॉ. डी.पी. सिंह, अधीक्षक डॉ. विनय जोशी, डॉ. सुनील चुघ एवं डॉ. आनंद गुप्ता सहित कई गण्यमान्य अतिथि एवं महाविद्यालय के छात्र उपस्थित थे। □

लोकार्पण कार्यक्रम संपन्न

५ जून को नई दिल्ली के परिवहन भवन के सभागार में केंद्रीय मंत्री श्री नितिन गडकरी द्वारा प्रसिद्ध समाजसेवी, विचारक, अधिवक्ता, राम-चरितामृत ग्रंथ के लेखक स्वतंत्रता सेनानी स्व. श्री रमानाथ खेरा विधायक की पुस्तक 'जीवन मृत्यु कालचक्र' का लोकार्पण किया गया। □

'सेतु के आर-पार' नाटक लोकार्पित

१-८ जून को रूस की राजधानी मॉस्को में आयोजित अंतरराष्ट्रीय हिंदी सम्मेलन के उद्घाटन सत्र में श्री संतोष खन्ना की नव-प्रकाशित पुस्तक 'सेतु के आर-पार' (नाटक) का दिल्ली और देश के कई साहित्यकारों के करकमलों द्वारा लोकार्पण किया गया। □

'गोलकोंडा दर्पण' लोकार्पित

१४ जून को गोलकोंडा दर्पण विचार मंच, हैदराबाद के तत्त्वावधान में कवि श्री गोविंद अक्षय के संपादन में दक्षिण से प्रकाशित होनेवाली कविता-प्रधान साहित्यिक मासिक पत्रिका 'गोलकोंडा दर्पण' के नवीनतम अंक-१६७ का लोकार्पण हैदराबाद के वरिष्ठ हिंदी सेवी श्री गजानन पांडेय के करकमलों द्वारा संपन्न हुआ। पत्रिका के परामर्शदाता वरिष्ठ कवि श्री नेहपाल सिंह वर्मा ने कार्यक्रम की अध्यक्षता की। कवयित्री श्रीमती रत्नकला मिश्रा ने धन्यवाद व्यक्त किया। □

'चंदन माटी' कृति लोकार्पित

विगत दिनों आदित्यपुर स्थित आदित्य इंस्टीट्यूट ऑफ टेक्नॉलोजी में जमशेदपुर शहर की वरिष्ठ लेखिका श्रीमती पद्मा मिश्रा के पहले उपन्यास 'चंदन माटी' का लोकार्पण किया गया। इस अवसर पर मुख्य अतिथि डॉ. मुदिता चंद्रा, विशिष्ट अतिथि श्री अखिलेश्वर पांडेय एवं डॉ. जूही समर्पिता ने अपने विचार व्यक्त किए। द्वितीय सत्र में शहर के कवियों द्वारा ग्राम्य-जगत् पर आधारित स्व-रचित कविताएँ प्रस्तुत की गईं। संचालन डॉ. मनोज 'आजिज' ने किया तथा धन्यवाद सुश्री मीरा झा ने ज्ञापित किया। □

'योगतत्त्व चिंतन' कृति लोकार्पित

१२ जून को कादीपुर (सुलतानपुर) में योग ऋषि स्वामी रामदेव ने डॉ. सुशील कुमार पांडेय साहित्येंदु द्वारा रचित ग्रंथ 'योगतत्त्व चिंतन' का लोकार्पण किया। स्वामी रामदेव ने इस ग्रंथ को योग विद्या के प्रचार-प्रसार में विशेष उपयोगी बताया। □

लोकार्पण कार्यक्रम संपन्न

२० मई को कानपुर के वी.एन.एस.डी. इंटर कॉलेज में डॉ. ओमप्रकाश शुक्ल 'अमिय' की ब्रजभाषा अवधी की कृति 'ऊधौ चुपाय रहौ' का लोकार्पण कार्यक्रम संपन्न हुआ। डॉ. दिनेश शर्मा

उत्तर प्रदेश के उपमुख्यमंत्री ने लोकार्पण वक्तव्य में कृति की सराहना की। बीज वक्तव्य डॉ. दया दीक्षित ने किया। सर्वश्री नीलिमा गुप्ता व डॉ. श्यामबाबू गुप्त ने अपने विचार व्यक्त किए। संचालन कु. मुदिता मिश्रा ने किया। ☐

'माँ से प्यारा नाम नहीं' कृति विमोचित

भीलवाड़ा में श्री टीकम बोहरा 'अनजाना' की काव्य कृति 'माँ से प्यारा नाम नहीं' के विमोचन समारोह में जिला कलेक्टर श्रीमती शुचि त्यागी मुख्य अतिथि थीं। अध्यक्षता पुलिस अधीक्षक श्री प्रदीप मोहन शर्मा ने की। विशिष्ट अतिथि और जिला साहित्यकार परिषद के अध्यक्ष श्री दयाराम मेठानी ने पुस्तक की विस्तृत रूप से विवेचना और समीक्षा प्रस्तुत की। इस अवसर पर जिला साहित्यकार परिषद् की ओर से श्री टीकम बोहरा का अभिनंदन भी किया गया। सर्वश्री दयाराम मेठानी, राधेश्याम शर्मा, दिनेश दीवाना व गुलाब मीरचंदानी ने उन्हें साहित्य सृजक की उपाधि से अलंकृत करते हुए प्रशस्ति-पत्र, मेवाड़ी पगड़ी, शॉल ओढ़ाकर स्वागत किया। सामयिकी के श्री वंशीलाल पारस व श्यामसुंदर सुमन ने स्वागत व अभिनंदन किया।☐

'अखिल भारतीय गीत सम्मान' प्रदत्त

विगत दिनों मंडला में हिंदुस्तानी भाषा अकादमी, दिल्ली ने अखिल भारतीय स्तर पर गीत प्रतियोगिता आयोजित करके देश के श्रेष्ठ गीतकारों का चयन कर उनका 'गीत संकलन' प्रकाशित किया तथा चयनित गीतकारों को 'गीतोत्सव-२०१८' में दिल्ली के गांधी शांति प्रतिष्ठान में 'अखिल भारतीय गीतकार सम्मान' से भव्यता व गरिमापूर्वक सम्मानित किया। सर्वश्री धनंजय सिंह, लक्ष्मीशंकर वाजपेयी, सविता चड्ढा जैसे स्वनामधन्य गीतकारों ने सम्मान दिए। आयोजन में देश के चुनिंदा गीतकारों ने गीत-पाठ किया। संयोजन अकादमी के अध्यक्ष श्री सुधाकर पाठक ने किया। ☐

बारह साहित्यकार सम्मानित

१९ मई को कानपुर की प्रतिष्ठित साहित्यिक पत्रिका 'नवनिकष' के प्रधान संपादक डॉ. लक्ष्मीकांत पांडेय एवं साहित्यिक संस्था 'तरंग' के अध्यक्ष डॉ. सुरेश गुप्त 'राजहंस' के साझा प्रयास से आयोजित 'नवनिकष तरंग सृजनोत्सव कानपुर' में उ.प्र. विधानसभा के अध्यक्ष श्री हृदयनारायण दीक्षित द्वारा साहित्य की विभिन्न विधाओं के १२ साहित्यकारों सर्वश्री प्रबोध कुमार गोविल, विजय कुमार महांति, राजेंद्र सिंह गहलौत, रामस्नेही लाल शर्मा, पुनीता जैन, घमंडी लाल अग्रवाल, सतीश चंद्र शर्मा 'सुधांशु', श्यामप्रकाश देवपुरा, अन्नपूर्णा शुक्ला, योगेंद्र वर्मा 'व्योम', संतोष परिहार को विभिन्न सम्मानों से सम्मानित किया गया। कार्यक्रम की अध्यक्षता श्री शिवबाबू मिश्र द्वारा की गई तथा संचालन डॉ. प्रमिला अवस्थी ने किया। ☐

प्रो. रामदरश मिश्र सम्मानित

२० मई को हिंदी साहित्य सम्मेलन के प्रधानमंत्री ने वरिष्ठ साहित्यकार रामदरश मिश्र को 'विभूति मिश्र प्रभात शास्त्री सम्मान' से सम्मानित करने के लिए मिश्रजी के आवास पर कई लोगों के साथ उपस्थित हुए। इस सम्मान के अंतर्गत उनको शॉल, नारियल और प्रशस्तिपत्र के साथ रु. ५१,००० की राशि प्रदान की गई। इस अवसर ने कविता गोष्ठी का रूप ले लिया। मिश्रजी के साथ डॉ. जसवीर त्यागी, डॉ. ओम निश्चल, डॉ. वेद मित्र शुक्ल और श्रीमती प्रभा शर्मा भार्गव ने कविता पाठ किया। ☐

श्री अभिमन्यु अनत को मॉरिशस का नेशनल अवार्ड

१६ मई को मॉरिशस की सरकार तथा वहाँ के प्रधानमंत्री श्री पी.के. जगनाथ ने मॉरिशस की स्वतंत्रता की ५०वीं वर्षगाँठ पर अपने देश के विश्वप्रसिद्ध हिंदी साहित्यकार श्री अभिमन्यु अनत को अपने देश का पहला 'नेशनल अवार्ड ' प्रदान किया। इस अवार्ड में मॉरिशस मुद्रा में एक लाख रुपए सम्मानस्वरूप प्रदान किए गए। श्री अभिमन्यु अनत की अस्वस्थता के कारण उनके पुत्र श्री रत्नेश अनत एवं पुत्रवधू श्रीमती निशा ने यह पुरस्कार ग्रहण किया। ☐

रोमा लेखक सम्मानित

१४ अप्रैल को दिल्ली में रोमा कवि डॉ. वैराम हलिति तथा सर्बिया लेखक संघ के अध्यक्ष श्री ज्लाटोमिर योवनोविच को साहित्य अकादेमी के उपाध्यक्ष डॉ. माधव कौशिक ने अंगवस्त्रम् व पुस्तकें भेंट कर सम्मानित किया। डॉ. श्याम सिंह 'शशि' ने भारत-संबंधी रोमा कविताओं का पाठ किया। रोमा साहित्यकार रिसर्च फाउंडेशन, रोमा विश्वविद्यालय केंद्र, इग्नू केंद्र आदि द्वारा भी सम्मानित किए गए। अंतरराष्ट्रीय सहयोग परिषद् के महासचिव श्री श्याम परांडे ने डॉ. शशि की अध्यक्षता में उन्हें प्रवासी भवन में सम्मानित किया। एक अन्य कार्यक्रम में दिल्ली पब्लिक लाइब्रेरी के अध्यक्ष डॉ. रामशरण गौड़, महानिदेशक डॉ. लोकेश शर्मा, दिल्ली के पूर्व महापौर श्री महेश चंद्र शर्मा ने रोमानी भाषाविद् प्रो. मार्शल कुर्त्थदे व उनकी लेखिका पत्नी को भी सम्मानित किया। ☐

डॉ. कमल किशोर गोयनका सम्मानित

९ मई को न्यूयॉर्क में अखिल विश्व हिंदी समिति ने हिंदू सेंटर-किसेना, फ्लशिंग (क्वींस) में केंद्रीय हिंदी संस्थान, आगरा के उपाध्यक्ष तथा प्रेमचंद के देश-विदेश में स्वीकृत विशेषज्ञ एवं 'प्रेमचंद के बॉसवेल' के रूप में विख्यात डॉ. कमल किशोर गोयनका को 'हिंदी साहित्य शिरोमणि' सम्मान प्रदान किया। समिति के अध्यक्ष हिंदी साहित्यकार एवं हृदय रोग विशेषज्ञ डॉ. विजय मेहता ने शॉल पहनाकर तथा प्रशस्ति पट्ट प्रदान कर सम्मानित किया। ☐

पाठक मंच में चर्चा संपन्न

४ मई को सागर में साहित्य अकादेमी, म.प्र. संस्कृति परिषद् भोपाल की स्थानीय इकाई सागर पाठक मंच की ५६वीं पुस्तक समीक्षा गोष्ठी श्री टी.आर. त्रिपाठी 'रुद्र' की अध्यक्षता में आयोजित हुई।

लेखक डॉ. विवेक द्विवेदी के कथा संग्रह 'प्रो. माथुर की प्रयोगशाला' पर अपने समीक्षा आलेख में श्री आर.के. तिवारी ने विचार रखे। अध्यक्षीय उद्‌बोधन में श्री टी.आर. त्रिपाठी ने पुस्तक की कहानियों की प्रशंसा की। चर्चा में सर्वश्री महेश तिवारी, नलिन जैन, पी.आर. मलैया, वृंदावन राय सरल, निर्मल चंद निर्मल, जे.पी. पांडेय, गजाधर सागर, मुकेश तिवारी, कुंदर पाराशर, आलोक चौबे, आशीष ज्योतिषी ने भी अपने विचार रखे। प्रारंभ में केंद्र संयोजक उमाकांत मिश्र ने लेखक व पुस्तक का परिचय दिया। संचालन आशीष ज्योतिषी ने व आभार प्रदर्शन कपिल बैसाखिया ने किया। □

'सृजनोत्सव २०१८' आयोजित

२६-३० मई को अलीगढ़ में बाल रचनकाारों की राष्ट्रीय पत्रिका 'अभिनव बालमन' द्वारा रचनात्मक सृजन की १०वीं कार्यशाला 'सृजनोत्सव २०१८' का शुभारंभ हुआ। बाल साहित्यकार प्रतुल वसिष्ठ, साहित्यकार शादाब आलम, प्रधानाचार्य देवेश कुमार, सिराज अहमद, कार्टूनिस्ट दिलीप, चित्रकार पीयूष, मूर्तिकार रामस्नेही ने बच्चों को अपने-अपने हुनर सिखाए। द्वितीय दिवस पर चित्रकार हिमांशी एवं दिल्ली से आए कार्टूनिस्ट दिलीप ने बाल रचनाकारों को बिहार की प्रसिद्ध 'मधुबनी पेंटिंग' बनाना सिखाया। □

'शताब्दी काव्य-गोष्ठी' संपन्न

३ जून को कोलकाता में श्री बड़ाबाजार कुमारसभा पुस्तकालय द्वारा शताब्दी वर्ष में आयोजित आचार्य विष्णुकांत शास्त्री स्मृति 'काव्य-संध्या' में अध्यक्षीय वक्तव्य डॉ. सदानंद प्रसाद गुप्त ने दिया। समारोह में प्रख्यात साहित्यकार पद्मश्री डॉ. कृष्ण बिहारी मिश्र ने डॉ. शिवओम अंबर की काव्यकृति 'सप्तस्रोत' का लोकार्पण किया। संस्था के अध्यक्ष डॉ. प्रेमशंकर त्रिपाठी ने अतिथियों का स्वागत करते हुए कार्यक्रम की रूपरेखा पर प्रकाश डाला। संचालन किया डॉ. तारा दुगड़ ने। वरिष्ठ आयकर सलाहकार श्री सज्जनकुमार तुल्स्यान तथा पुस्तकालय के मंत्री श्री महावीर बजाज भी मंच पर उपस्थित थे। इस अवसर पर आयोजित काव्यसंध्या में नवोदित सर्वश्री उत्कर्ष अग्निहोत्री, कीर्ति काले, शिवओम अंबर ने काव्य-पंक्तियाँ प्रस्तुत कीं। □

चर्चा आयोजित

१ जून को हैदराबाद में 'गीत चाँदनी' के तत्त्वावधान में २६०वीं मूल्यांकन कवि गोष्ठी श्री चंपालाल वैद की अध्यक्षता में संपन्न हुई। संचालन श्री गोविंद अक्षय ने किया। सर्वश्री कृष्ण गोपाल दीक्षित 'दद्‌दाजी', गोविंद अक्षय, राजनारायण अवस्थी, कुमुद बाला, संतोष कुमार मिश्र 'माधुर्य', चंद्र प्रकाश दायमा, चंपालाल वैद ने अपने विचार रखे। □

श्रद्धांजलि एवं काव्य-गोष्ठी संपन्न

१० जून को बहराइच की 'नागरी', साहित्यिक एवं सांस्कृतिक संस्था के तत्त्वावधान में संपन्न मासिक-संगोष्ठी के प्रथम सत्र में 'मॉरीशस के प्रेमचंद' के रूप में सुविख्यात बहुसर्जक हिंदी विद्वान् व कथाकार श्री अभिमन्यु अनत की दिवंगत आत्मा की शांति की कामना करते हुए श्रद्धांजलि दी गई। संगोष्ठी में उनके प्रसिद्ध उपन्यास 'लाल पसीना' के प्रमुख अंशों का वाचन करने के पश्चात् उन पर चर्चा-परिचर्चा भी की गई। सर्वश्री विमलेश जायसवाल 'विमल', शिवकुमार सिंह रैकवार, रमेशचंद्र तिवारी, राकेश रस्तोगी 'विवेकी', वेद मित्र शुक्ल, विनोद कुमार पांडेय, गुलाबचंद्र जायसवाल ने रचना पाठ किया। अध्यक्षता वरिष्ठ कवि श्री कृष्ण कुमार अवस्थी ने की। □

उमरारा में कवि-सम्मेलन संपन्न

२९ मई को आर्य समाज समिति, उमरारा (डिबाई) के ६३वें वार्षिकोत्सव के समापन के अंतिम दिवस की रात्रि को श्री पी.पी. सिंह के संयोजन-संचालन में श्री मवाशी सिंह की अध्यक्षता में डॉ. ज्ञानेंद्र माहेश्वरी की सरस्वती वंदना से कवि-सम्मेलन का शुभारंभ हुआ। इस अवसर पर सर्वश्री राजेंद्र सिंह, जे.के. सिंह 'गांधी', मनोज पालीवाल, पी.पी. सिंह, महेशचंद्र गुप्ता 'मयंक', ज्ञानेंद्र माहेश्वरी, वेद जैसवाल, जयवीर सिंह 'अचल' ने काव्य-पाठ कर श्रोताओं को गुदगुदाया। □

कबीर चिंतन की १९०वीं गोष्ठी संपन्न

१५ जून को हैदराबाद में सतनाम आधार कबीर डेरा के तत्त्वावधान में श्रीमती कुमुद बाला की अध्यक्षता में कबीर चिंतन की १९०वीं गोष्ठी का आयोजन किया गया, जिसमें सर्वश्री डी. लक्ष्मण, डी. गोपाल, उमा देवी सोनी ने अपने विचार व्यक्त किए। इस अवसर पर आयोजित काव्य गोष्ठी में सर्वश्री अरुणा ठाकुर, सीताराम माने, कुमुद बाला, सूरज प्रसाद सोनी, उमा देवी सोनी, दुर्गाराज पटून, रत्नकला मिश्र, नंदलाल यादव, बी. पापा लाल और सत्यनारायण काकड़ा ने काव्य पाठ किया। संचालन श्री गोविंद अक्षय ने किया तथा धन्यवाद श्री डी. लक्ष्मण ने ज्ञापित किया। □

विचार गोष्ठी संपन्न

११ जून को देहरादून के मधुबन होटल में विश्व संवाद केंद्र द्वारा 'पत्रकारिता के समक्ष चुनौतियाँ' विषय पर विचार गोष्ठी आयोजित की गई, जिसमें अध्यक्षता कर रहे श्री तरुण विजय तथा सर्वश्री विजय कुमार, के.जी. सुरेश, चंद्रशेखर नौटियाल, जयसिंह रावत ने अपने विचार व्यक्त किए। □

अखिल भारतीय लघुकथा सम्मेलन संपन्न

२-३ जून को इंदौर के माहेश्वरी भवन में श्री सूर्यप्रकाश चतुर्वेदी की अध्यक्षता में क्षितिज संस्था के तत्त्वावधान में अखिल भारतीय लघुकथा सम्मेलन आयोजित किया गया। मुख्य अतिथि श्री बलराम एवं विशिष्ट अतिथि सर्वश्री बी.एल. आच्छा, सतीशराज पुष्करणा, श्यामसुंदर दीप्ति, सूर्यकांत नागर रहे। उद्‌घाटन सत्र में सात पुस्तकों का विमोचन किया गया। एक पोस्टर प्रदर्शनी का उद्‌घाटन हुआ, जिसमें देश के स्थापित लघुकथाकारों की रचनाओं को श्री किशोर बागरे व सुश्री अनघा जोगलेकर के बनाए चित्रों ने लघुकथाओं को पठनीय के साथ दर्शनीय बना दिया। सत्र का संचालन श्री पुरुषोत्तम दुबे ने किया। द्वितीय दिवस में श्री बलराम

अग्रवाल ने 'लघुकथा : कितनी पारंपरिक, कितनी आधुनिक', श्री अशोक भाटिया ने 'हिंदी लघुकथा : बुनावट और प्रयोगशीलता' विषय पर विचार व्यक्त किए। सर्वश्री योगराज प्रभाकर, चैतन्य त्रिवेदी एवं पुरुषोत्तम दुबे ने चर्चा की। इस अवसर पर सर्वश्री कपिल शास्त्री ने 'पंगत', नयना कानिटकर ने 'बापू का भात', शोभना श्याम ने 'इनसानियत का स्वाद', मधुलिका सक्सेना ने 'अगली पीढ़ी', मधु जैन ने 'अंतिम पंक्ति', लीला मोर धुलधोए ने 'श्रवण कुमार', मालती बसंत ने 'भाग्यशाली', कविता वर्मा ने 'नालायक', अंतरा करवडे ने 'शाश्वत' विषय पर लघुकथा का पाठ किया। संचालन श्रीमती ज्योति जैन ने किया। □

१५वाँ अंतरराष्ट्रीय सम्मेलन संपन्न

विगत दिनों जयपुर में सुप्रसिद्ध साहित्यकार श्री प्रबोध कुमार गोविल को 'दोस्तोवस्की' सम्मान से सम्मानित किया गया। साथ ही उनके नए उपन्यास 'अकाब' का विमोचन किया गया। इस अवसर पर श्री सवाई सिंह शेखावत एवं श्री जयप्रकाश मानस द्वारा संपादित पुस्तक 'विजयिनी मानवता हो जाए' का विमोचन भी किया गया। इसके बाद सर्वभाषा कवि-सम्मेलन एवं सांस्कृतिक कार्यक्रम भी संपन्न हुआ। □

याद किए गए जैथलियाजी

१ जून को कोलकाता में राष्ट्रचेतना, सांस्कृतिक-साहित्यिक-सामाजिक गतिविधियों के अभिभावक स्मृतिशेष जुगलकिशोरजी जैथलिया की द्वितीय पुण्यतिथि पर श्री बड़ाबाजार कुमारसभा पुस्तकालय द्वारा आयोजित एक अंतरंग गोष्ठी में पुस्तकालय कक्ष में उन्हें भावभीनी श्रद्धांजलि दी गई। उनकी प्रखर मेधा, सांगठनिक क्षमता और कर्मठ ऊर्जा ने उन्हें प्रेरणापुरुष बना दिया था। सर्वश्री योगेशराज उपाध्याय, हिमा बजाज, संजय रस्तोगी, रामचंद्र अग्रवाल, सुधा जैन, अरुण प्रकाश मल्लावत, नंदकुमार लढ़ा, शांतिलाल जैन, महावीर बजाज, सत्यप्रकाश राय, भँवरलाल मूंधड़ा, अजयेंद्र त्रिवेदी, भागीरथ सारस्वत, बंशीधर शर्मा, भागीरथ चांडक आदि ने उनके जीवन के विभिन्न प्रसंगों का उल्लेख करते हुए श्रद्धांजलि दी। उद्‌बोधन गीत 'भारत को स्वर्ग बना दो' श्री शुभम उपाध्याय ने गाया तथा नीता द्विवेदी ने श्रीराम वंदना की प्रभावी प्रस्तुति की। □

प्रविष्टियाँ आमंत्रित

३० मई को मीरा फाउंडेशन एवं साहित्य भंडार, इलाहाबाद के संयुक्त तत्त्वावधान में प्रतिवर्ष दिया जानेवाला वर्ष २०१७ का 'मीरा स्मृति पुरस्कार' इस वर्ष हिंदी साहित्य की किसी भी विधा पर लिखी गई आलोचना की पांडुलिपि पर दिया जाएगा। पुरस्कार के रूप में २५,००० रुपए, शॉल, श्रीफल और प्रमाण-पत्र प्रदान किए जाएँगे। इच्छुक लेखक अपनी पांडुलिपि की टंकित पाँच प्रतियाँ सीडी के साथ, साहित्य भंडार, ५० चाहचंद (जीरो रोड), इलहाबाद-२११००३ पर रजिस्टर्ड डाक या स्पीड पोस्ट से ३१ अगस्त, २०१८ तक भेज सकते हैं। लेखक की आयु ३१ दिसंबर, २०१७ तक ६० वर्ष से अधिक नहीं होनी चाहिए। प्रमाण के लिए पांडलिपि के साथ हाईस्कूल के प्रमाण-पत्र की स्वहस्ताक्षरित फोटोकॉपी संलग्न करना अनिवार्य है। पुरस्कार के लिए प्राप्त पांडुलिपि और सीडी वापस नहीं की जाएगी। □

प्रविष्टियाँ आमंत्रित

विगत दिनों उज्जैन की साहित्यिक संस्था 'शब्द प्रवाह' साहित्यिक-सांस्कृतिक एवं सामाजिक मंच द्वारा अखिल भारतीय स्तर पर सम्मानार्थ विभिन्न प्रविष्टियाँ आमंत्रित हैं। १. कविता संग्रह (गीत, गजल, छंद, नई कविता), २. व्यंग्य संग्रह एवं ३. लघुकथा संग्रह, सन् २०१४ से २०१८ के बीच प्रकाशित उपरोक्त विधाओं की पुस्तकें प्रविष्टि के रूप में ३१ जुलाई, २०१८ तक भेजी जा सकती हैं। संस्था द्वारा तीनों विधा में चयनित एक-एक श्रेष्ठ कृति के रचनाकार को प्रथम पुरस्कार स्वरूप प्रत्येक विधा में ११००/- की नकद राशि, आकर्षक सम्मानोपाधि प्रशस्ति-पत्र, स्मृति चिह्न प्रदान कर सारस्वत सम्मान किया जाएगा। अन्य सम्मानों के लिए कृपया संपर्क करें : ०९४०६६४९७३३; सचिव, शब्द प्रवाह, साहित्यिक, संस्कृति एवं सामाजिक मंच, उज्जैन (म.प्र.)। □

साहित्यिक क्षति

श्री अभिमन्यु अनत नहीं रहे

४ जून को मॉरीशस के प्रख्यात हिंदी लेखक श्री अभिमन्यु अनत का निधन हो गया। उनका जन्म ९ अगस्त, १९३७ को त्रिओले, मॉरीशस में हुआ था। उन्होंने हिंदी शिक्षण, रंगमंच, हिंदी प्रकाशन आदि अनेक क्षेत्रों में कार्य किए। उनकी प्रमुख कृतियाँ हैं—'लहरों की बेटी', 'मार्क ट्वेन का स्वर्ग', 'फैसला आपका', 'मुडिया पहाड़ बोल उठा', 'और नदी बहती रही', 'एक बीघा प्यार', 'जम गया सूरज', 'तीसरे किनारे पर', 'चौथा प्राणी', 'लाल पसीना', 'तपती दोपहरी', 'कुहासे का दायरा', 'शेफाली', 'हड़ताल कब होगी', 'चुन-चुन चुनाव', 'पर पगडंडी मरती नहीं', 'अपनी-अपनी सीमा', 'गांधीजी बोले थे', 'शब्द भंग', 'पसीना बहता रहा', 'आसमान अपना आँगन', 'अस्ति अस्तु', 'एक थाली समंदर', 'खामोशी के चीत्कार', 'इनसान और मशीन', 'वह बीच का आदमी', 'अब कल आएगा यमराज', 'रोक दो कान्हा', 'गुलमोहर खौल उठा', 'नागफनी में उलझी साँसें', 'कैक्टस के दाँत', 'एक डायरी बयान'। वे हिंदी पत्रिका 'वसंत' के संपादक एवं बाल-पत्रिका 'रिमझिम' के संस्थापक थे। उन पर अनेक शोधकार्य हुए हैं। उनकी रचनाओं का अनुवाद अंग्रेजी, फ्रेंच सहित अनेक भाषाओं में हुआ है। उन्हें सोवियत लैंड नेहरू पुरस्कार, मैथिलीशरण गुप्त सम्मान, यशपाल पुरस्कार, जनसंस्कृति सम्मान तथा अन्य सम्मान प्रदान किए गए।

साहित्य अमृत परिवार की ओर से दिवंगत आत्मा को भावभीनी श्रद्धांजलि।